इन्द्रध्वज विधान

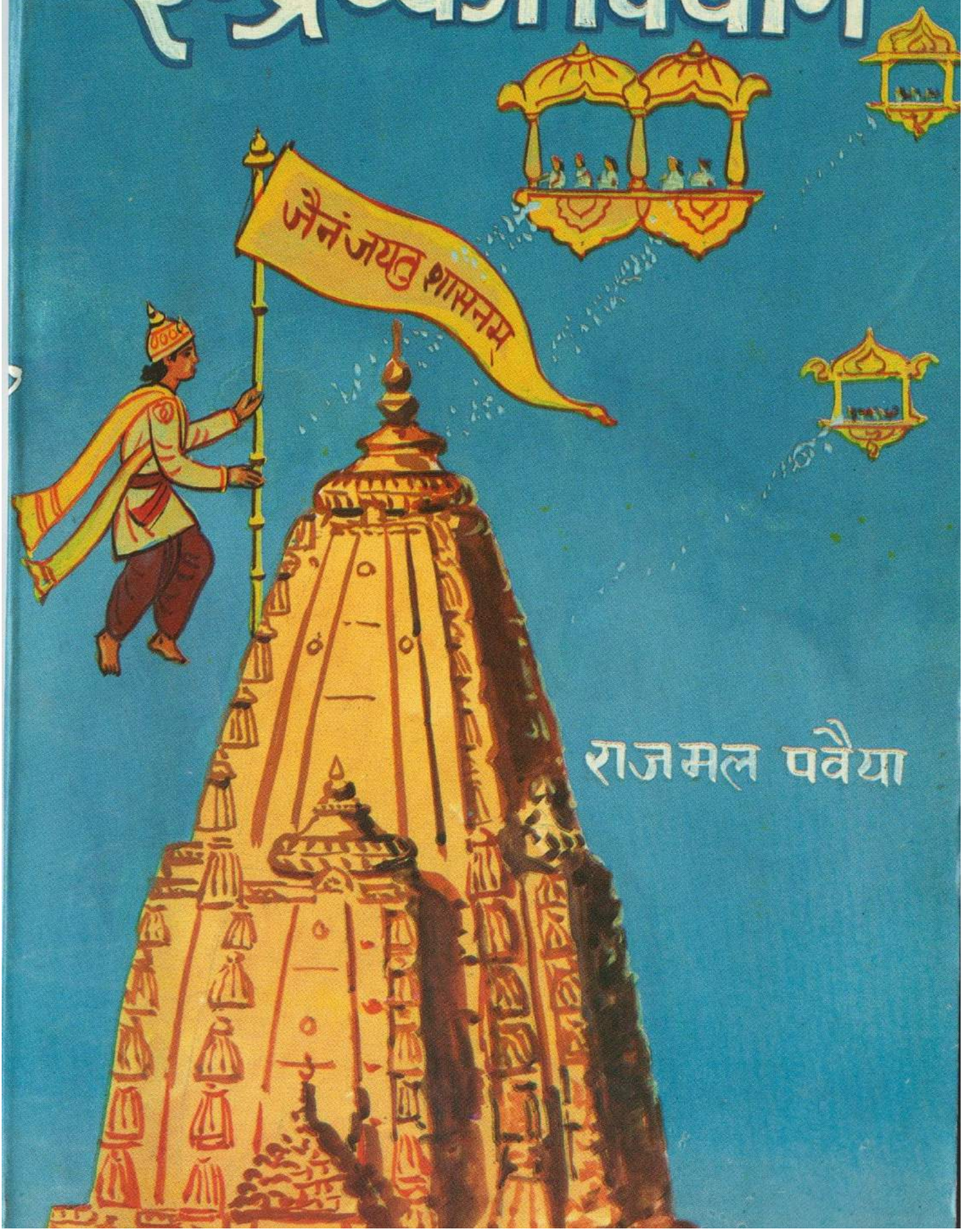

राजमल पवैया

इन्द्रध्वज विधान

रचयिता :

कविवर पण्डित राजमल पवैया

सम्पादक :

पण्डित अभयकुमार जैन शास्त्री

एम.काम., जैनदर्शनाचार्य

प्रकाशक :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

फोन : 0141-2707458, 2705581

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

इन्द्रध्वज विधान : राजमल पवैया

प्रथम छह संस्करण : 20 हजार
(15 फरवरी, 1993 से अद्यतन)

सप्तम् संस्करण : 1 हजार
(29 अगस्त, 2015)
रक्षाबंधन

योग : **21 हजार**

मूल्य : पच्चीस रुपया

टाईपसैटिंग :
प्रिन्टोमैटिक्स
दुर्गापुरा, जयपुर
फोन : 2722274

मुद्रक :
सन् एन सन् प्रेस
तिलकनगर,
जयपुर (राज.)

प्रकाशकीय

(सप्तम् संस्करण)

पूजन-विधान की सुगन्धित माला के नवीन पुष्प के रूप में प्रस्तुत कृति 'इन्द्रध्वज विधान' का यह सप्तम् संस्करण प्रकाशित करते हुए हम अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव कर रहे हैं।

इससे पूर्व कविवर राजमलजी पवैया द्वारा रचित 'इन्द्रध्वज मण्डल विधान' से सारा समाज भली-भाँति परिचित हो चुका है। अध्यात्म की गंगा, भक्ति की यमुना एवं सिद्धान्त की सरस्वती के अद्भुत संगम स्वरूप इस अद्वितीय कृति की रचना श्री पवैयाजी ने हमारे प्रबल अनुरोध से की थी, जिसकी पाँच हजार प्रतियाँ २६ जनवरी, १९९० को प्रकाशित की गयी थीं। यह विधान प्रकाशित होने के पूर्व अनेक स्थानों से विधान कराने की माँग आने लगी थी। छपने के बाद तो विधान कराने वालों की संख्या निरन्तर बढ़ती गई तथा मात्र २ वर्षों में यह विधान जयपुर, अहमदाबाद, देवलाली, बीना, भोपाल, मौ. गुना, राजकोट, तलोद, ललितपुर, खनियाधाना आदि अनेक स्थानों पर कराया जा चुका है अतः अल्प समय में ही इसकी सभी प्रतियाँ समाप्त हो गईं।

उक्त विधान में गूँथे गए आध्यात्मिक भावों एवं सैद्धान्तिक विवेचन के कारण इसे आशातीत लोकप्रियता प्राप्त हुई है अतः इसका पाठ कराने की माँग तेजी से बढ़ती जा रही है। तेरह द्वीपों में स्थित ४५८ अकृतित्रम जिनालयों की ७८ पूजन करने में लगभग ३२ घण्टे का समय भी कम पड़ता है, जिसे कम से कम १० दिनों में किया जा सकता है। विधान, प्रतिष्ठा आदि सभी मुमुक्षु समाज में अनिवार्य है, अतः एक जगह विधान कराने में प्रवचनकार, विधानाचार्य एवं अन्य सहयोगी मिलाकर लगभग १५-२० व्यक्तियों की टीम को दस दिन का समय देना पड़ता है जो हमारी गतिविधियों के कारण सहज कठिन है। प्रतिदिन ३-४ घण्टे विधान करने से प्रातःकालीन प्रवचनों से भी वंचित रहना पड़ता है।

इन सब परिस्थितियों पर विचार करके हमारे निर्देशक माननीय डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने सुझाव दिया कि इस विधान का आकार लगभग आधा कर दिया जाए ताकि प्रतिदिन दो ढाई घण्टे पाठ करके प्रवचनों का लाभ लिया जा सके और ६ या ७ दिनों में ही कार्यक्रम पूरा किया जा सके। यह सुझाव सभी को बहुत अच्छा लगा अतः पण्डित अभयकुमारजी को इसकी रूपरेखा निश्चित करने के लिए कहा गया। उन्होंने हमारे प्रतिष्ठाचार्य ब्र. अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री से विचार-विमर्श करके पवैयाजी के समक्ष इसकी रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए यह प्रस्ताव रखा।

प्रारम्भ में श्री पवैयाजी को कुछ संकोच हुआ, परन्तु जब उनके सामने सभी परिस्थितियाँ स्पष्ट करते हुए विशेष अनुरोध किया गया तब उन्होंने नवीन रचना करने का

मानस बना लिया। पवैयाजी आध्यात्मिक रचनायें करने की विशेष ऋद्धि सम्पन्न जान पड़ते हैं। इसकी रूपरेखा निश्चित होने के तीन माह बाद ही उन्होंने ४१ पूजनों युक्त 'इन्द्रध्वज विधान' की रचना करने की सूचना दे दी।

पूर्व रचित विधान के संशोधन एवं प्रकाशन में पवैयाजी के साथ पं. अभयकुमारजी शास्त्री ही आद्योपान्त जुड़े रहे अतः इस कृति में सहयोग, संशोधन, संपादन आदि का दायित्व भी उन्हीं को सौंपा गया है; जिसे उन्होंने अत्यन्त उत्साहपूर्वक स्वीकार करके मात्र १५-२० दिनों में ही सम्पन्न कर लिया। इसप्रकार जुलाई १९९२ में डॉ. साहब द्वारा दिए गए निर्देशानुसार यह कृति जनवरी १९९३ में प्रेस कापी के रूप में उपलब्ध हो गयी।

अत्यन्त अल्प समय में ही इसके प्रकाशन के मूल प्रेरणा स्रोत डॉ. साहब के ९३ वर्षीय श्वसुर साहब पं. श्री चुन्नीलालजी शास्त्री की चन्देरी में विधान कराने की तीव्र इच्छा ज्ञात होते ही उन्होंने हमारे प्रकाशन विभाग के प्रभारी श्री अखिल बंसल को २२ जनवरी ९३ को इसकी प्रकाशन व्यवस्था का भार सौंप दिया।

मात्र २२ दिन में तैयार २५८ पृष्ठीय इस कृति में श्री अखिल बंसल, पं. अभयकुमारजी एवं पं. शान्तिकुमारजी पाटील की टीम का दिन-रात का परिश्रम समाया है, जो अधिकतम सम्भव शुद्ध मुद्रित संस्करण के रूप में आपके हाथ में उपलब्ध है। एतदर्थ हम अपने इन तीनों सहयोगियों के विशेष आभारी हैं।

इसका प्रथम संस्करण ३००० की संख्या में मुद्रित हुआ था। चूँकि कार्य तीव्र गति से हुआ अतः कई जगह अशुद्धियाँ रह गई, विधान की उन अशुद्धियों की तरफ ध्यान गया अतः उसी समय इसे शुद्ध कर इसका द्वितीय संस्करण ७०००, तृतीय संस्करण ५०००, चतुर्थ संस्करण ३००० पंचम संस्करण १००० एवं षष्टम् संस्करण १००० की संख्या में अशुद्धियों को ठीक करके मुद्रित किया गया। अब यह सप्तम् संस्करण १००० की संख्या में प्रकाशित किया जा रहा है।

श्री पवैयाजी की लेखनी पर तो सारा समाज मोहित है। वे अब हमारे बीच नहीं हैं, परन्तु उनकी रचनाएँ सदैव हमारा पथप्रदर्शन करती रहेंगी। इतनी सुन्दरतम एवं स्व-पर कल्याणकारी रचनाओं के लिए वे कोटि-कोटि बधाई के पात्र हैं।

इस कृति की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख सम्पादकीय में किया गया है। पूर्व रचित विधान की भाँति यह कृति भी जिनेन्द्र भक्ति में विशेष निमित्त के रूप में समाज द्वारा भरपूर सराही जाएगी – यही आशा एवं विश्वास है।

– परमात्म प्रकाश भारिल्ल
महामंत्री, अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन, जयपुर

सम्पादकीय

किसी एक ही विषय-वस्तु पर एक ही लेखक द्वारा भिन्न-भिन्न दो कृतियों की रचना करने का उदाहरण विश्व में शायद ही कोई दूसरा मिले। यह भी सहज संयोग है कि दोनों कृतियों की रचना के प्रेरक, प्रकाशक एवं सम्पादक भी एक ही हैं।

इन्द्रध्वज विधान की विषय-वस्तु से अब समाज सुपरिचित हो गया है। इस विधान के माध्यम से मध्यलोक में विद्यमान ४५८ अकृत्रित जिनालयों की वन्दना का अवसर सहज ही मिल जाता है। गत ३ वर्ष पूर्व इन्द्रध्वज मंडल विधान के प्रकाशन के बाद अनेक स्थानों से विधान कराने की माँग आना समाज की जिनेन्द्र भक्ति के साथ-साथ लेखक के श्रम की सफलता का द्योतक भी है।

समाज की बढ़ती माँग ने ही डॉ. साहब के चिन्तन को यह दिशा प्रदान की जिसके फलस्वरूप यह कृति अवतरित हुई। इसकी सबसे बड़ी उपयोगिता तो यही है कि चार घण्टे के बदले दो या ढाई घण्टे प्रतिदिन पूजन-विधान के साथ-साथ प्रातःकालीन प्रवचन का लाभ भी समाज को मिल सकता है।

दो-दो इन्द्रध्वज विधान की बात सामने, आते ही सबसे पहला प्रश्न उठता है कि दोनों में अन्तर क्या है ? जब दोनों विधानों में ४५८ अर्घ्य व ध्वजायें चढ़ती हैं तो फिर यह इतना छोटा कैसे हो गया ? दोनों विधानों का अन्तर निम्न विश्लेषण द्वारा समझा जा सकता है।

"बृहद् इन्द्रध्वज विधान" में प्रत्येक मेरु की समुच्चय पूजा तथा चारों वनों की अलग-अलग पूजन होने से पाँचों मेरु की २५ पूजाएँ हैं, जबकि नवीन विधान में एक मेरु की एक ही पूजा एवं १६ अर्घ्य दिए गए हैं। इस प्रकार पंचमेरु की २० पूजनें कम की गई हैं। प्रत्येक मेरु से सम्बन्धित धातकि एवं शाल्मलि वृक्ष जिनालयों की अलग-अलग पूजनों के बदले एक-एक पूजन दी गई है अतः ५ पूजनें कम हो गई हैं। मानुषोत्तर, कुन्डलगिरि तथा रुचकगिरि की भी एक-एक पूजन देने से १२ पूजनें कम हुई हैं। इस प्रकार ३७ पूजनें कम करके इस विधान में ४१ पूजनें दी गई हैं। जिस पूजन में अधिक अर्घ्य हैं वहाँ छोटे छन्दों के प्रयोग तथा जयमालाओं के छोटे आकार ने भी इस विधान का आकार कम कर दिया है।

यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि आकार कम होने पर भी इस कृति का भाव पक्ष शिथिल नहीं हो पाया है बल्कि उसमें अधिक गहराई ही आई है। प्रारम्भ की १६ पूजनों के अष्टकों में गूँथे गए भावों में क्रमिक विकास का प्रयोग किया गया है। प्रथम ३ पूजनों में भक्ति, स्वाध्याय एवं तत्त्व निर्णय जैसे सम्यक्त्व-सन्मुखता की भूमिका के विषय लिये गए हैं। उसके बाद क्रमशः सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र तथा क्षमा मार्दव आदि १० धर्मों के भावों को गूँथा गया है। जयमालाओं में भी अष्टकों में लिये गए विषय का ही विवेचन किया गया है। १६ पूजनों के बाद किसी एक लीक से न बँधकर विविध भावों के आलम्बन से अष्टक बनाए गए हैं; मानों किसी पर्वत पर क्रमशः सीढ़ियों द्वारा पहुँच कर समतल स्थान पर बैठकर विविध भावों के आलम्बन द्वारा जिनेन्द्र

प्रभु का गुणगान किया जा रहा है । अन्तिम दो पूजाओं की जयमाला में प्रतिक्रमण तथा सामायिक के भावों को गूँथकर लेखक ने पूजन के फल तथा मानव जन्म की सार्थकता का संकेत किया है ।

दोनों विधानों की विषय-वस्तु, भाव-पक्ष और कला-पक्ष की समानता होने पर भी दोनों का स्वाद भिन्न-भिन्न है । दोनों रचनायें मौलिक हैं तथा अलग-अलग प्रकार का साहित्यिक एवं आध्यात्मिक आनन्द देती हैं ; अत: दोनों में श्रेष्ठता की तुलना करना खीर और हलवे की या समयसार और नियमसार की श्रेष्ठता की तुलना करने जैसा व्यर्थ ही है । अध्यात्म की गंगा, भक्ति की यमुना और सिद्धान्त की सरस्वती का अनूठा संगम दोनों कृतियों की प्रमुख विशेषता है ।

पवैयाजी की आध्यात्मिक रुचि और काव्य कला के सम्बन्ध में कुछ भी कहना मामा के सामने ननिहाल की प्रशंसा करने जैसा है क्योंकि पूर्व रचित विधान व सैंकड़ों पूजन-विधानों के माध्यम से वे तत्त्वप्रेमी समाज में व्याप्त हो चुके हैं । इसके अतिरिक्त उनकी सरलता, निरभिमानता एवं गुणग्राहकता से मुझे बहुत कुछ सीखने को मिला अत: मैं उनका विशेष आभारी हूँ । मेरे अनेक सुझावों को स्वीकार करके उन्होंने मुझे बहुत कुछ सिखाया है । यह मेरा सौभाग्य एवं उनका स्नेह है कि उनकी अनेक रचनाओं के प्रकाशन के पूर्व उन्हें पढ़ने तथा अपनी राय व्यक्त करने का अवसर मिला । यदि इसी प्रक्रिया को सम्पादन कहा जाए तो मैं कहूँगा कि उन्होंने मुझे सम्पादन करना भी सिखाया है । समाज द्वारा आयोजित इन्द्रध्वज विधानों में सम्मिलित होने का अवसर बारम्बार मिलने से यह विधान तथा इस विधान के माध्यम से देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति मेरे रोम-रोम में समा गई है एतदर्थ मैं पंचपरमेष्ठी भगवन्तों का महान उपकार एवं गुरुजनों का आभार मानता हूँ ।

विधान प्रारम्भ एवं समापन करने का विधि-विधान अलग से प्रकाशित किया जा रहा है अत: इस कृति के साथ उसे नहीं जोड़ा गया ।

खाली स्थानों में विधान के समय उपयोग में आने वाले भक्ति गीतों का समावेश किया गया है । अनेक भक्ति गीत श्री वीतराग भजन मंडल सनावद के सौजन्य से प्राप्त हुए है अत: उनका हार्दिक आभारी हूँ ।

आशा है कि एक ही प्रेरक, लेखक, सम्पादक एवं प्रकाशक की श्रृंखला में तत्त्वप्रेमी पाठकगण भी दोनों कृतियों का भरपूर लाभ उठाकर इन्हें अपनी जिनेन्द्र भक्ति दृढ़ करने में निमित्त बना कर भक्ति-तरु के शिव-फल प्राप्त करने का पुरुषार्थ करेंगे ।

अभय कुमार जैन शास्त्री
जैन दर्शनाचार्य, एम. कॉम.

हमारे यहाँ प्राप्त महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

मोक्षशास्त्र/चौबीस तीर्थंकर महापुराण
बृहद जिनवाणी संग्रह/समयसार (ज्ञायकभावप्रबोधिनि)
रत्नकरण्डश्रावकाचार/समयसार
मोक्षमार्ग प्रवचन भाग-1,2,3,4
प्रवचनसार/क्षत्रचूड़ामणि
समयसार नाटक/मोक्षमार्ग प्रकाशक
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाग 2 (पूर्वार्द्ध + उत्तरार्द्ध) एवं भाग 3
बृहद द्रव्यसंग्रह/जिनेन्द्र अर्चना
दिव्यध्वनिसार प्रवचन/नियमसार
योगसार प्रवचन/तीनलोकमंडल विधान
समयसार कलश/चिन्तन की गहराईयाँ
प्रवचनरत्नाकर भाग 1 से 11 तक
नयप्रज्ञापन/समाधितंत्र प्रवचन
पं. टोडरमल व्यक्तित्व और कर्तृत्व
समयसार अनुशीलन सम्पूर्ण भाग 1,2,3,4,5
आचार्य अमृतचन्द्र : व्यक्तित्व और कर्तृत्व
पंचास्तिकाय संग्रह/सिद्धचक्र विधान
ज्ञानस्वभाव ज्ञेयस्वभाव
भावदीपिका/कार्तिकेयानुप्रेक्षा
परमभावप्रकाशक नयचक्र
पुरुषार्थसिद्ध्युपाय/ज्ञानगोष्ठी
सूक्तिसुधा/आत्मा ही है शरण/आत्मानुशासन
संस्कार/इन भावों का फल क्या होगा
इन्द्रध्वज विधान/धवलासार
रामकहानी/गुणस्थान विवेचन
सुखी जीवन/विचित्र महोत्सव
सर्वोदय तीर्थ
सत्य की खोज/बिखरे मोती
निर्विकल्प आत्मानुभूति के पूर्व
तीर्थंकर भगवान महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ
श्रावकधर्मप्रकाश/कल्पद्रुम विधान
वी.वि. पाठमाला भाग 1,2,3
वी.वि. प्रवचन भाग 1 से 6 तक
तत्त्वज्ञान तरंगणी/रत्नत्रय विधान
भक्तामर प्रवचन/बारह भावना : एक अनुशीलन
धर्म के दशलक्षण/विदाई की बेला
नवलब्धि विधान/बीस तीर्थंकर विधान
पंचमेरु नंदीश्वर विधान/रत्नत्रय विधान
सुखी होने का उपाय भाग 1 से 8 तक
जैनतत्त्व परिचय/करणानुयोग परिचय
आ. कुन्दकुन्द और उनके टीकाकार
कालजयी बनारसीदास/रक्षाबन्धन और दीपावली
बालबोध भाग 1,2,3/जिन खोजा तिन पाईयां
तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग 1,2/आध्यात्मिक भजन संग्रह
छहढाला (सचित्र)/भ. ऋषभदेव/शीलवान सुदर्शन
प्रशिक्षण निर्देशिका/जैन विधि-विधान
क्रमबद्धपर्याय/दृष्टि का विषय/ये तो सोचा ही नहीं
बारसाणुवेक्खा/चौबीस तीर्थंकर पूजा
गागर में सागर/आप कुछ भी कहो
पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव
जैनधर्म की कहानियाँ भाग 1 से 15 तक
अहिंसा के पथ पर/जिनवरस्य नयचक्रम्
णमोकार महामंत्र/वीतराग-विज्ञान प्रवचन भाग-5
चौसठ ऋद्धि विधान/कारणशुद्धपर्याय
दशलक्षण विधान/आचार्य कुन्दकुन्ददेव
पंचपरमेष्ठी विधान/विचार के पत्र विकार के नाम
आचार्य कुन्दकुन्द और उनके पंच परमागम
परीक्षामुख/मुक्ति का मार्ग/पश्चात्ताप
युगपुरुष कानजीस्वामी/सामान्य श्रावकाचार
अलिंगग्रहण प्रवचन/जिनधर्म प्रवेशिका
मैं कौन हूँ/सत्तास्वरूप/वीर हिमाचलतैं निकसी
समयसार : मनीषियों की दृष्टि में
व्रती श्रावक की ग्यारह प्रतिमाएँ/पदार्थ-विज्ञान
मैं ज्ञानानन्दस्वभावी हूँ/महावीर वंदना (कैलेण्डर)
वस्तुस्वातंत्र्य/भरत-बाहुबली नाटक
शास्त्रों के अर्थ समझने की पद्धति
सुख कहाँ है/सिद्धस्वभावी ध्रुव की ऊर्ध्वता
मैं स्वयं भगवान हूँ/णमोकार एक अनुशीलन
रीति-नीति/गोली का जवाब गाली से भी नहीं
समयसार कलश पद्धानुवाद/अष्टपाहुड़
योगसार पद्धानुवाद/कुन्दकुन्दशतक पद्धानुवाद
अर्चना/शुद्धात्मशतक पद्धानुवाद
षट्कारक अनुशीलन/अपनत्व का विषय

क्या ? कहाँ ?

क्रमांक	पूजन का नाम	पृष्ठ
	मंगलाचरण/संकल्प	१
१.	समुच्चय जिनालय पूजन	४
२.	जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शनमेरु स्थित सोलह जिनालय पूजन	९
३.	सुदर्शनमेरु संबंधी चार गजदन्त-जिनालय पूजन	१८
४.	सुदर्शनमेरु संबंधी जम्बू-शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजन	२३
५.	सुदर्शनमेरु संबंधी सोलह वक्षार जिनालय पूजन	२८
६.	सुदर्शनमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन	३५
७.	सुदर्शनमेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन	४५
८.	धातकी खंड द्वीपस्थ विजयमेरु स्थित सोलह जिनालय पूजन	५०
९.	विजयमेरु संबंधी चार गजदन्त जिनालय पूजन	५७
१०.	विजयमेरु संबंधी धातकी-शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजन	६१
११.	विजयमेरु संबंधी सोलह वक्षार जिनालय पूजन	६५
१२.	विजयमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन	७१
१३.	विजयमेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन	८१
१४.	धातकीखंड द्वीपस्थ अचलमेरु स्थित सोलह जिनालय पूजन	८६
१५.	अचलमेरु संबंधी चार गजदन्त जिनालय पूजन	९३
१६.	अचलमेरु संबंधी धातकी-शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजन	९७
१७.	अचलमेरु संबंधी सोलह वक्षार जिनालय पूजन	१०१
१८.	अचलमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन	१०८
१९.	अचलमेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन	११८
२०.	अचलमेरु संबंधी दक्षिणोत्तर द्वय इष्वाकार जिनालय पूजन	१२३
२१.	पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदरमेरु स्थिल सोलह जिनालय पूजन	१२७
२२.	मंदरमेरु संबंधी चार गजदन्त जिनालय पूजन	१३४
२३.	मंदरमेरु संबंधी पुष्कर एवं शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजन	१३९
२४.	मंदरमेरु संबंधी सोलह वक्षार जिनालय पूजन	१४३
२५.	मंदरमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन	१५०
२६.	मंदरमेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन	१६१
२७.	पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्मालीमेरु संबंधी सोलह जिनालय पूजन	१६६
२८.	विद्युन्मालीमेरु संबंधी चार गजदन्त जिनालय पूजन	१७४
२९.	विद्युन्मालीमेरु संबंधी पुष्कर-शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजन	१७९
३०.	विद्युन्मालीमेरु संबंधी सोलह वक्षार जिनालय पूजन	१८४
३१.	विद्युन्मालीमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन	१९१
३२.	विद्युन्मालीमेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन	२०१
३३.	विद्युन्मालीमेरु संबंधी दक्षिण-उत्तर द्वय इष्वाकार जिनालय पूजन	२०६

३४.	पुष्करार्ध द्वीप स्थित मानुषोत्तर जिनालय पूजन	२१०
३५.	नन्दीश्वर द्वीप स्थित बावन जिनालय समुच्चय पूजन	२१५
३६.	नन्दीश्वर द्वीप की पूर्व दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन	२१९
३७.	नन्दीश्वर द्वीप की दक्षिण दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन	२२५
३८.	नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन	२३१
३९.	नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन	२३६
४०.	कुन्डलवर द्वीपस्थ कुन्डलगिरि पर स्थित चार जिनालय पूजन	२४२
४१.	रुचकवर द्वीपस्थ रुचकगिरि पर स्थित चार जिनालय पूजन	२४७
४२.	समुच्चय पूर्णार्घ्य	२५२
४३.	महा जयमाला	२५४
४४.	शान्ति पाठ/क्षमापना	२५५

बीच-बीच में दिए गए भजनों की सूची

क्रमांक	*नाम*	*पृष्ठ*
१.	निरखी-निरखी मनहर मूरति	१७
२.	इन्द्रध्वज मण्डल भला भया	२२
३.	निरखो अंग-अंग जिनवर के	४४
४.	मेरे मन मन्दिर में आन	४९
५.	ऊँचे-ऊँचे शिखरों वाला रे	५६
६.	करलो इन्द्रध्वज का पाठ	६०
७.	आयो आयो रे हमारो बड़ो भाग	६४
८.	आओ जिन मन्दिर में आओ	८०
९.	अशरीरी-सिद्ध भगवान	९२
१०.	तू जाग रे चेतन प्राणी	१००
११.	हे प्रभो ! चरणों में तेरे आ गये	११७
१२.	आओ रे आओ रे ज्ञानानन्द	१३३
१३.	देख तेरी पर्याय की हालत क्या	१३८
१४.	होली खेलें मुनिराज....	१४२
१५.	परम दिगम्बर मुनिवर देखे	१४९
१६.	कर लो जिनवर का गुणगान	१६०
१७.	गगन मण्डल में उड़ जाऊँ	१६५
१८.	भावना रथ पर चढ़ जाऊँ	१७८
१९.	तुम्हारे दर्श बिन स्वामी	१८३
२०.	तिहारे ध्यान की मूरत अजब	१९०
२१.	रोम रोम पुलकित हो जाय	२००
२२.	भविक तुम वन्दहु मनधर भाव	२०५
२३.	ये शाश्वत सुख का प्याला	२१४
२४.	जीवराज उड़ के जाओ	२४६

मंगलाष्टक

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः ।
श्रीसिद्धान्तसुपाठकाः मुनिवराः रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥१ ॥

श्रीमन्नम्र-सुरासुरेन्द्र-मुकुट- प्रद्योत-रत्नप्रभा
भास्वत्पाद-नखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवःस्थायिनः ।
ये सर्वे जिनसिद्ध- सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥२ ॥

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्री नगराधिनाथ-जिनपत्युक्तोपवर्गप्रदः ।
धर्मःसूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्रयालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ३ ॥

नाभेयादि-जिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताः चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ।
ये विष्णुप्रतिविष्णु-लांङ्गलधराःसप्तोतरा विंशतिः,
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्ठिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ४ ॥

ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगता पंच ये,
ये चाष्टाँगमहानिमित्तकुशला येष्टाविधाश्चारणाः ।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोपिबलिनो ये बुद्धि-ऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ५ ॥

कैलाशे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्य सज्जिनपतेः सम्मेदशैलेर्हताम् ।

शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ६ ॥

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा,
जम्बू-शाल्मलि-चैत्यशाखिषु तथा वक्षार-रौप्याद्रिषु ।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ७ ॥

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक् ।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा संभावितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥८ ॥

इत्थं श्री जिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्यसंपत्पदं,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणांमुखात् ।
ये श्रृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रियते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ॥९ ॥

मंगल पंचक

गुणरत्नभूषा विगतदूषाः सौम्यभावनिशाकराः
सद्बोध-भानुविभा-विभाषितदिक्चया विदषांवराः
निःसीमसौख्यसमूह मण्डितयोगखण्डितरतिवराः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते श्री वीरनाथ जिनेश्वराः ॥

सद्ध्यानतीक्ष्ण-कृपाणधारा निहतकर्मकदम्बका,
देवेन्द्रवृन्दनरेन्द्रवन्द्याः प्राप्तसुखनिकुरम्बकाः
योगीन्द्रयोगनिरूपणीयाः प्राप्तबोधकलापकाः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते सिद्धाः सदा सुखदायका ॥

आचारपंचकचरणचारणचुंचवः समताधराः
नानातपोभरहेतिहापितकर्मकाः सुखिताकराः
गुप्तित्रयीपरिशीलनादिविभूषिता वदतांवराः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते श्री सूरयोऽर्जितशंभराः ॥

द्रव्यार्थ भेद विभिन्नश्रुतभरपूर्णतत्त्व निभालिनो
दुर्योगयोगनिरोधदक्षाः सकलवरगुणशालिनः
कर्तव्यदेशनतत्परा विज्ञानगौरवशालिनः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते गुरुदेवदीधितिमालिनः ॥

संयमसमित्यावश्यका- परिहाणिगुप्तिविभूषिताः
पंचाक्षदान्तिसमुद्यताः समतासुधापरिभूषिताः
भूपृष्ठाविष्टरसायिनो विविधर्द्धिवृन्द विभूषिताः
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते मुनयः सदा शमभूषिताः ॥

भजन

श्री इन्द्रध्वज का पाठ करो सब ठाठ बाट से चेतन।
हो जाए सम्यग्दर्शन ॥
है मध्यलोक अति ही सुन्दर, तेरह द्वीपों तक जिनमन्दिर।
इन्द्रादिक सुर करते हैं आकर पूजन ॥
हो जाए सम्यग्दर्शन ॥
पूजन कर नृत्य, गीत गाते, अति विनय भाव से हर्षाते।
हर मन्दिर पर करते हैं, ध्वज आरोह ण ॥
हो जाए सम्यग्दर्शन ॥
तुम भी इन्द्रध्वज मंडल रच, अरिहन्तों के चरणों को भज।
भावों की ध्वजा चढ़ाओ, हर्षित हो मन ॥
हो जाए सम्यग्दर्शन ॥
यह नर भव पुनः असंभव है, लो भेदज्ञान जो संभव है।
पुरुषार्थ पूर्वक सफल करो, यह जीवन, कट जाए भव के बन्धन ॥
हो जाए सम्यग्दर्शन ॥

श्री इन्द्रध्वज विधान

मंगलाचरण

दोहा

पंच प्रभु जयवन्त हों, चौबीसों तीर्थेश।
करुणा करि जग को दिया, मुक्तिमार्ग उपदेश ॥
परिणामों की स्वच्छता, का प्रतीक जिन-बिम्ब।
क्योंकि इसी में निरखता, मैं निज का प्रतिबिम्ब ॥
जयवन्तो जिन-बिम्ब सब, जयवन्तो जिनराज।
जिन-चैत्यालय नमन कर, ध्वजा चढ़ाऊँ आज ॥

सोरठा

प्रभु परमेष्ठी पंच, चैत्यालय जिन-चैत्य जय।
जिनवाणी जिनधर्म, नव देवों को है नमन ॥

संकल्प

छंद – गीतिका

मुक्ति पाने के लिए अब मैं जिनालय आउँगा।
निज-स्वरूप महान लख प्रभु सुछवि उर में ध्याउँगा ॥
जिन सरीखा रूप निर्मल है हमारे पास भी।
आवरण है किन्तु उर में पूर्ण ज्ञान प्रकाश भी ॥
जिनागम का स्वाध्याय प्रधान मंगलमय करूँ।
द्रव्यश्रुत पढ़ भावश्रुत की दिव्य महिमा उर धरूँ ॥
भावश्रुत का ज्ञान ही सम्यक्त्व रवि प्रगटाएगा।
भेदज्ञान अपूर्व सचमुच मोक्ष में ले जाएगा ॥

जब स्वरूपाचरण की छवि निज हृदय में आएगी।
एक दिन संयम-प्रभा स्वयमेव ही मुस्काएगी॥
भाव-मुनि बन अप्रमत्तदशा स्वयं होगी प्रगट।
झूल सप्तम और षष्टम पाप सब होंगे विघट॥
पुण्य भी फिर नष्ट होंगे क्षीण होगी दुष्कषाय।
तब दशा अरहंत होगी प्रगट उर शिव सौख्यदाय॥
ज्ञान का भंडार प्रगटा बनेंगे हम केवली।
श्री जिनवर की शरण में आज अनुपम निधि मिली॥

पीठिका

छंद – ताटंक

इस अनंत आकाश मध्य है तीन लोक रचना सुन्दर।
उर्ध्व मध्य अरु अधोलोक त्रय वातवलय वेष्ठित मनहर॥
अधोलोक में सात नर्क हैं मिलता जहाँ पाप का फल।
उर्ध्वलोक में स्वर्गादिक हैं मिलता जहाँ पुण्य प्रतिफल॥
मध्यलोक चित्रा पृथ्वी पर असंख्यात योजन भारी।
असंख्यात हैं द्वीप असंख्यों हैं समुद्र बहुजल धारी॥
ढाइ द्वीप तक मनुज लोक है जिसमें पाँच सुमेरु प्रसिद्ध।
आगे मानुषोत्तर पर्वत मनुज लोक सीमा सुप्रसिद्ध॥
नन्दीश्वर है द्वीप आठवाँ श्री जिन-चैत्यालय छविमान।
अरु ग्यारहवाँ कुन्डलवर तेरहवाँ द्वीप रुचकवर जान॥
इन सब में हैं चारशतक अट्ठावन श्री जिन-चैत्यालय।
भक्तिभाव से ध्वजा चढ़ाते इन्द्रादिक मिल मंगलमय॥
मेरु सुदर्शन विजय अचल मंदर विद्युन्माली अभिराम।
सब पर सोलह-सोलह जिन-चैत्यालय जिनबिम्बों के धाम॥
अस्सी मेरु जिनालय वन्दूँ गजदंतो के वन्दूँ बीस।
वक्षारों के अस्सी वन्दूँ वृक्षों पर दस हैं जगदीश॥
विजयार्धों के एक शतक सत्तर इष्वाकारों के चार।
कुलाचलों के तीस जिनालय मानुषोत्तर के हैं चार॥

नन्दीश्वर के बावन जिनगृह कुन्डलवर के चार महान।
चार रुचकवर सर्व मिलाकर चार शतक अट्ठावन जान॥
सभी अकृत्रिम जिन-चैत्यालय एक-शतक-वसु बिम्ब सहित।
उन्चास-सहस्त्र-चारसौ-चौंसठ रत्नमयी प्रतिमा-शोभित॥
आगे द्वीप समुद्रों का दूना-दूना विस्तार बृहत्।
जिनशासन भूगोल ज्ञान का सागर है अनुपम अद्भुत॥
अस्सी मेरु जिनालय, माला चिन्ह ध्वजा आरोहण कर।
गजदंतो के बीस, जिनालय गज चिन्हांकित ध्वज सुन्दर॥
जम्बू शाल्मलि धातकि पुष्कर तरु के दस पर अंशुक चिन्ह।
वक्षारों के अस्सी गृह पर ध्वजा चढ़ाते गरुड़ सुचिन्ह॥
विजयार्धों के एक शतक सत्तर पर वृषभ चिन्ह के ध्वज।
तीस कुलाचल के जिनगृह पर कमल चिन्ह की पावन ध्वज॥
इष्वाकार जिनालय चारों पर, गज चिन्ह ध्वजा छविमान।
मानुषोत्तर चार जिनालय गज चिन्हांकित ध्वजा प्रधान॥
नन्दीश्वर बावन चैत्यालय चकवा-चकवी ध्वजा प्रसिद्ध।
कुन्डलगिरि के चार जिनालय चिन्ह मयूर सहज सुप्रसिद्ध॥
द्वीप रुचकवर चार जिनालय हंस चिन्ह अंकित ध्वज जान।
इन्द्र सदलबल चार शतक अट्ठावन ध्वजा चढ़ाते आन॥
महाध्वजाएँ लाखों लघु-लघु ध्वजा सहित लहराती हैं।
सुरबालाएँ अतिकमनीय मनोहर नृत्य सजाती हैं॥
मैं भी सादर ध्वजा चढाऊँ वीतराग रंग रंगी हुई।
शाश्वत सुखमय मुक्तिवधू का वरण करूँ जो सजी हुई॥
महिमामय मंगल विधान है सबसे उत्तम इन्द्रध्वज।
निज-स्वरूप अवलम्बन द्वारा पाऊँ शुद्ध स्वभाव सहज॥
अनेकान्तमय जिनशासन है स्याद्वाद ध्वज मंगलमय।
वस्तु-स्वरूप जानकर प्रगटे निर्मल चेतनराज अभय॥

* * *

पूजन क्रमांक-१

समुच्चय जिनालय पूजन

स्थापना

वीरछन्द

मध्यलोक में चारशतक अट्ठावन शोभित चैत्यालय।
अन्तर्मुख मुद्रामय शोभित वीतरागता के आलय॥
निश्चय भक्ति प्राप्ति हेतु मैं भाव सहित करता पूजन।
शाश्वत सुख के दिग्दर्शक सर्वज्ञ जिनेश्वर को वन्दन॥

दोहा

इन्द्रध्वज पूजन करूँ, गाऊँ मंगलगान।
चौबीसों जिनवर नमूँ, करूँ आत्मकल्याण॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् (इत्याह्वाननम्)

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (इतिस्थापनम्।)

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव वषट् (इतिसन्निधिकरणम्।) (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

छंद – ताटंक

भक्ति-भावना के निर्मल-जल से जिन-चरण पखारूँगा।
जन्म-जरा-मृतु रोग रहित निज शाश्वत रूप निहारूँगा॥
मध्यलोक के जिनमन्दिर को वन्दन करने जाऊँगा।
इन्द्रध्वज पावन विधान कर धर्म ध्वजा फहराऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन-चरणों की भक्ति सुगंधित चन्दन चरणों में लाया।
भव-आताप मिटाने को अब वीतराग प्रभु को ध्याया॥मध्य.॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन-चरणों की भक्ति अखंडित, अक्षय पद की दाता है।
जग के क्षत-विक्षत पद से अब, रहा न मेरा नाता है॥
मध्यलोक के जिनमन्दिर को वन्दन करने जाऊँगा।
इन्द्रध्वज पावन विधान कर धर्मध्वजा फहराऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति-भावना शील सुमन हे प्रभु! चरणों में अर्पित है।
पंचेन्द्रिय की विषय-वासना जिनवर आज विसर्जित है॥मध्य०॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्योकामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति-भावना के रसमय नैवेद्य, समर्पित करता हूँ।
अनुभवरससे तृप्तहुआ, अब क्षुधाव्याधिको हरताहूँ॥मध्य०॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन-चरणों की भक्ति दीप में भेद-ज्ञान की ज्योति जले।
निज को निज, पर को पर जानूँ, चिरविस्मृत निज रूप मिले॥मध्य०॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन-चरणों की भक्ति-अनल में कर्मकाष्ठका होम करूँ।
राग-द्वेष का धूम्र उड़े जब, निज चैतन्य व्योम विचरूँ॥मध्य०॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्ति-भावना के तरु में जब, मधुमय शिवफल फलता है।
आवागमन मिटे इस जग से शाश्वत ध्रुवपद मिलताहै॥मध्य०॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

देव-शास्त्र-गुरु भक्ति-भावमय अर्घ्य समर्पित करता हूँ।
निज अनर्घ्य पद प्राप्ति हेतु जग-वैभव अर्पित करता हूँ॥
मध्यलोक के जिनमन्दिर को वन्दन करने जाऊँगा।
इन्द्रध्वज पावन विधान कर धर्मध्वजा फ़हराऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिलोकवर्ती जिनालयों की अर्घ्यावली

छंद – रोला

अधोलोक जिन भवन शाश्वत पूजूँ स्वामी।
सात कोटि अरु लाख बहत्तर उज्ज्वल नामी॥
भावसहित वन्दन कर उत्तम अर्घ्य चढ़ाऊँ।
भवबंधन का नाश करूँ शिवसुख उपजाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अधोलोकसंबंधिसातकरोड़बहत्तरलाख अकृत्रिम जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मध्यलोक के चार शतक अट्ठावन वन्दूँ।
विनयभाव से अर्घ्य चढ़ा निज को अभिनन्दूँ॥
तेरह द्वीपों तक शाश्वत जिन चैत्यालय हैं।
मानों अपने मध्यलोक में सिद्धालय हैं॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधिचारसौअट्ठावन अकृत्रिम जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊर्ध्वलोक जिनमंदिर शाश्वत जिन-चैत्यालय।
चौरासी लख सहस्र संतानवे तेईस आलय॥
कर्म कलुषता नाश हेतु मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ।
शुद्ध स्वभाव भाव की महिमा उर में लाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्ध्वलोकसंबंधिचौरासीलाखसंतानवेहजारतेईस अकृत्रिमजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सब मिल आठ करोड़रु छप्पन लाख जिनालय।
संतानवे सहस्र चार शत इक्यासी जय॥
तीन लोक में कृतिम-अकृत्रिम गृह असंख्य हैं।
वीतराग अरहन्त प्रभू में गुण अनन्त हैं॥
जलफलादि वसु द्रव्य, भाव से चरण चढ़ाऊँ।
निज पुरुषार्थ जगा, शिवपथ पर चरण बढ़ाऊँ॥

दोहा

कृत्रिम-अकृत्रिम भवन, पूजूँ मैं जिनराज।
लखूँ शुद्ध परमात्मा, सिद्ध होन के काज॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोकवर्ती समस्त कृत्रिमाकृत्रिम-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

भगवन्तों की भक्ति से, हो जाऊँ भव पार।
क्योंकि इसी की शक्ति से, मिलता निज आधार॥

छन्द – रोला

धन्य-धन्य जिनराज जगत में तेरी महिमा।
ऋषि-मुनि गणधर भी गाते प्रभु तेरी गरिमा॥
मानतुंग कृत भक्ति-सरोवर का जल लाया।
अशुभ राग का मैल नाश शुभ अवसर पाया॥
पंगु चढ़ै गिरि त्यों मैं भक्ति करूँ प्रभु तेरी।
मैं लघु, कार्य महान, कहो क्या क्षमता मेरी ?
भक्ति-भाव से विवश हुआ प्रभु भक्ति करता।
भक्तिभाव ही मुझमें अद्‌भुत शक्ति भरता॥
ऐसी भक्ति करूँ मैं, अब भगवान तुम्हारी।
बन जाऊँ भगवान स्वयं, शिवमय सुखकारी॥
गुरुवर समन्तभद्र से प्रेरित, तव यश गाता।
वीतराग सर्वज्ञ देव ही मुझको भाता॥

अद्भुत महिमामय है केवलज्ञान तुम्हारा।
निज स्वरूप में लीन, तदपि जग जाननहारा॥
निश्चय से तन्मय होकर निज को ही जाने।
किन्तु स्वच्छता में अनन्त परद्रव्य लखाने॥
है अनन्त दर्शन भी प्रभुवर तेरा अनुपम।
अवलोकन युगपत् सब जग का करता उत्तम॥
सुख अनन्त तुम ही भोगो अद्भुत बलधारी।
दर्श-ज्ञान-सुख-वीर्य जगत को अचरजकारी॥
ध्रौव्योत्पाद-विनाशमयी सत् तुम बतलाते।
हो सर्वज्ञ अतः तुम ही, गुरुवर गुण गाते॥
निर्ग्रन्थों ने ग्रन्थ रचे जिनमें यश गाया।
स्याद्वाद अरु अनेकान्त का ध्वज लहराया॥
प्रभु की अन्तर्मुख मुद्रा, अब मुझको भाती।
रंग-राग से भिन्न, निजातम रूप दिखाती॥
वन्दन करता जिन-चैत्यालय ले धर्मध्वज।
पावन पूजन करता हूँ प्रभुवर इन्द्रध्वज॥

सोरठा

जिनवर का सन्देश, आत्मा ही परमात्मा।
हैं असंख्य प्रदेश, गुण अनन्तमय एक नित॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकसंबंधि-चतुःशताष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद-प्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

ज्ञान स्वभावी शुद्धातम रंग अनेकान्तमय ध्वज में व्याप्त।
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर मंगलमय भविजन को आप्त॥
इन्द्रध्वज विधान करता हूँ विनयभाव से हर्षित आज।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो कर्मनाश हो हे जिनराज॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक-२

जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शनमेरु स्थित सोलह जिनालय पूजन

स्थापना

सोरठा

तीनलोक के मध्य, जम्बूद्वीप प्रसिद्ध है।
अकृत्रिम जिनगेह, अठहत्तर इस द्वीप में॥
इसका है विस्तार, एक लाख योजन महा।
दूना लवण समुद्र, घेरे चारों ओर से॥

छंद – ताटंक

जम्बूद्वीप सुमेरु सुदर्शन मध्यलोक में स्वर्णमयी ।
भद्रशाल नंदनवन सुमनस पांडुकवन सौन्दर्यजयी॥
योजन एक लाख ऊँचा, इक सहस्र भूमि के भीतर है।
प्रथम स्वर्ग के ऋजु विमान से बाल बराबर अंतर है॥

दोहा

मेरु सुदर्शन पूजिये, सोलह भवन महान।
जिन-प्रतिमा सतरहशतकअट्ठाईस प्रमाण॥
आठों द्रव्य चढ़ाइये, होकर भाव विभोर।
स्वाध्याय से प्रगट हो, ज्ञान सूर्य की कोर॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपे सुदर्शनमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छन्द – चान्द्रायण

स्वाध्याय से भेद-ज्ञान जल लाऊँगा।
जन्म-जरादिक दुख सम्पूर्ण मिटाऊँगा॥
मेरु सुदर्शन सोलह चैत्यालय जजूँ।
भक्ति भाव से वीतराग प्रभु को भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं...

स्वाध्याय की गंध ज्ञान में लाऊँगा।
अब अनादि का भवज्वर पूर्ण हटाऊँगा॥
मेरु सुदर्शन सोलह चैत्यालय जजूँ।
भक्तिभाव से वीतराग प्रभु को भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं....

स्वाध्याय से अक्षत गुण उर में सजा।
अक्षय पद पाऊँ क्षतमय पद दूँ लजा॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं.....

स्वाध्याय से निजगुण पुष्प सजाऊँगा।
काम-व्याधि पर अब तो मैं जय पाऊँगा॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं....

स्वाध्याय से आत्मतृप्ति मैं पाऊँगा।
क्षुधा वेदना का मैं नाम मिटाऊँगा॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं.....

स्वाध्याय से ज्ञान ज्योति प्रगटाऊँगा।
मोह-महातम नाश, स्वरूप लखाऊँगा॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...

स्वाध्याय से ध्यान अग्नि सुलगाऊँगा।
अष्टकर्म बन्धन को पूर्ण हटाऊँगा॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ षोडश जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं.....

स्वाध्याय का फल पाऊँगा आज मैं।
मोक्ष सुफल पा होऊँगा जिनराज मैं॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं.....

स्वाध्याय से निजगुण अर्घ्य बनाऊँगा।
पद अनर्घ्य संसारजयी मैं पाऊँगा॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं...

अर्घ्यावलि

वीरछन्द

मेरु सुदर्शन की भू पर है भद्रशाल वन अतिरमणीक।
चारों दिशि में चार जिनालय जिनमुनि तप भू ध्यान प्रतीक।
पूर्ण अनन्त चतुष्टय पाने जिनबिम्बों को ध्याऊँगा।
भव्य अकृत्रिम चैत्यालय पर मंगल ध्वजा चढ़ाऊँगा॥

चौपाई

पूरब दिशि शाश्वत जिनधाम, भद्रशाल वन करूँ प्रणाम।
ज्ञान अनन्तानन्त सुहाय, जिन-मन्दिर पर ध्वजा चढ़ाय॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ भद्रशालवनस्थित पूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दक्षिण दिशि चैत्यालय एक, जागे उर में स्व-पर विवेक।
दृग अनन्त की महिमा आय, जिनमन्दिर पर ध्वजा चढ़ाय॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ भद्रशालवनस्थित दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पश्चिम दिशि जिन-भवन महान, ऊपर स्वर्ण कलश छविमान।
वीर्य अनन्त सहज प्रगटाय, जिनमन्दिर पर ध्वजा चढ़ाय॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ भद्रशालवनस्थित पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं...

उत्तरदिशि उत्तम जिनगेह, परभावों से तजूँ सनेह।
सुख अनन्त क्षण में विलसाय, जिनमन्दिर पर ध्वजा चढ़ाय॥४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ भद्रशालवनस्थित उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

छंद – तांटक

भद्रशाल से पाँच शतक योजन ऊँचा है नंदनवन।
पूरब दक्षिण पश्चिम उत्तर एक-एक जिनराज भवन॥
चार अभाव जानकर स्वामी निज स्वभाव में आऊँगा।
भव्य अकृत्रिम चैत्यालय पर मंगल ध्वजा चढ़ाऊँगा॥

चौपई

नंदनवन जिनभवन ललाम, पूरब दिशि में है अभिराम।
प्राक्-अभाव समझ में आय, अनेकान्तमय ध्वजा चढ़ाय॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ नन्दनवनस्थित पूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

दक्षिण दिशि जिनगेह अनूप, ध्वजा पंक्तियाँ दृश्य अनूप।
बुधि प्रध्वंस-अभाव लहाय, अनेकान्तमय ध्वजा चढ़ाय ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ नन्दनवनस्थित दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

पश्चिम दिशि जिनमंदिर जान, उर में जगे भेद-विज्ञान।
जब अन्योन्याभाव बताय, अनेकान्तमय ध्वजा चढ़ाय ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ नन्दनवनस्थित पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं...

उत्तर दिशि प्रभु प्रतिमा धाम, मानस्तंभ सहित अभिराम।
जब अत्यन्त-अभाव सुहाय, अनेकान्तमय ध्वजा चढ़ाय ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ नन्दनवनस्थित उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

छंद – ताटंक

नंदनवन से साढे बासठ सहस्र योजन सुमनस वन।
चारों दिशि में चार जिनालय नित पूजन करते सुरगण ॥
द्रव्य क्षेत्र अरु काल भावमय निज शुद्धातम ध्याऊँगा।
भव्य अकृत्रिम चैत्यालय पर मंगल ध्वजा चढाऊँगा ॥

छंद – राधिका

पूरब दिशि वन सौमनस महान मनोहर।
शाश्वत जिन-चैत्यालय की शोभा सुन्दर ॥
सामान्य-विशेषात्मक निज द्रव्य प्रवर है।
चैतन्य-चन्द्र चन्द्राकर शिव सुखकर है ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ सौमनसवनस्थित पूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दक्षिण दिशि वन सौमनस एक चैत्यालय।
प्रतिमाएँ एक-शतक-वसु का गर्भालय ॥
निज भेदाभेद असंख्य प्रदेशी वर है।
चैतन्य-चन्द्र चन्द्राकर शिव सुखकर है ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ सौमनसवनस्थित दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

पश्चिम दिशि वन सौमनस जिनेन्द्र विराजे।
आत्मानुभूति के साज स्वयं ही साजे ॥

है नित्यानित्य स्वकाली वस्तु प्रवर है।
चैतन्य-चन्द्र चन्द्राकर शिव सुखकर है॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ सौमनसवनस्थित पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

उत्तर दिशि वन सौमनस जिनालय पावन।
जिनमंदिर शिखर महान उच्च अतिपावन॥
निज भाव अनन्त अखण्ड गुणों का घर है।
चैतन्य-चन्द्र चन्द्राकर शिव सुखकर है॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ सौमनसवनस्थित उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं...

छंद – ताटंक

छत्तिस सहस्र योजन ऊपर सौमनस सुवन से पांडुकवन।
चारों दिशि में एक-एक चैत्यालय शोभित हरता मन॥
चार चौकड़ी का अभाव कर मोह शत्रु विनशाऊँगा।
भव्य अकृत्रिम चैत्यालय पर मंगल ध्वजा चढ़ाऊँगा॥

छंद – राधिका

पूरब दिशि पाडुंकवन जिनगेह अकीर्तम।
है स्वर्णमयी रत्निम प्रतिमाएँ अनुपम॥
यह अनन्तानुबंधी कषाय क्षयकर है।
चैतन्य-चन्द्र अविनाशी अजर-अमर है॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ पांडुकवनस्थित पूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दक्षिण दिशि में जिन-चैत्यालय सुखकारी।
वसु द्रव्य सजा पूजें सब ही नर-नारी॥
अप्रत्याख्यानावरणी दुख का घर है।
चैतन्य-चन्द्र अविनाशी अजर-अमर है॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ पांडुकवनस्थित दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

पश्चिम दिशि जिनमंदिर की शोभा न्यारी।
पूजन करते सुर विद्याधर नभ-चारी॥

प्रत्याख्यानावरणी का क्षय सुखकर है।
चैतन्य-चन्द्र अविनाशी अजर-अमर है॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ पांडुकवनस्थित पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं...

उत्तर दिशि में जिन-चैत्यालय मंगलमय।
क्षयकर्ता सर्व अमंगल चिन्मय सुखमय॥
संज्वलन कषाय कहें जिनवर दुखकर है।
चैतन्य-चन्द्र अविनाशी अजर-अमर है॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ पांडुकवनस्थित उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पूर्णार्घ्य

दोहा

पूर्ण अर्घ्य अर्पण करूँ, गिरि सुमेरु जिनगेह।
बरसे बारम्बार प्रभु, ज्ञान सुधारस मेह॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरौ चतुर्दिक्षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं....

जयमाला

दोहा

जिनवाणी की कृपा से, करूँ सदा स्वाध्याय।
उर विवेक हो जाग्रत, ये ही ज्ञान उपाय॥

चौपाई

स्वाध्याय वाचना समंत, यही तत्त्व निर्णय का पंथ।
स्वाध्याय पृच्छना महान, शंकादिक होते अवसान॥
स्वाध्याय जिनश्रुत आम्नाय, शिवगरिमामय ज्ञानप्रदाय।
स्वाध्याय अनुप्रेक्षा जान, बार-बार निज चिन्तन मान॥
स्वाध्याय जिन धर्मउपदेश, धारूँ नग्न दिगंबर वेश।
धन्य-धन्य जिनश्रुत स्वाध्याय, स्वाध्याय सम्यक्त्व प्रदाय॥
स्वाध्याय बिन निर्णय नाँहि, तत्त्वाभ्यास बिना सुख नाँहि।
तत्त्वज्ञान बिन समकित नाँहि, समकित बिन को मुक्ति लहाहिं॥
स्वाध्याय ही मंगलरूप, परमशान्ति दायक शिवरूप।
यह सम्यग्दर्शन का स्रोत, होऊँ इससे ओतःप्रोत॥

मन-वच-काय करूँ स्वाध्याय, जो भी करे आत्मसुख पाय।
आत्मज्ञान की यह विधि जान, करूँ आत्मा का कल्याण॥
जिनवाणी के द्वादश अंग, नमूँ झुकाकर मैं वसु अंग।
आचारांग प्रथम विख्यात, समिति गुप्ति व्रत वर्णन ख्यात॥
दूजा सूत्रकृतांग महान, ज्ञान विनय का कथन प्रधान।
तीजा स्थानांग प्रसिद्ध, देख शोध थल गमन सुसिद्ध॥
चौथा समवायांग महान, द्रव्य क्षेत्र भाव का ज्ञान।
पंचम व्याख्या प्रज्ञप्ति अंग, है विज्ञान कथन सर्वंग॥
षष्टम ज्ञातृधर्म कथांग, धर्म कथाएँ सांगोपांग।
सप्तम उपासकाध्ययनांग, श्रावक धर्म विवेचन रंग॥
अष्टम अन्तःकृत सुदशांग, अन्तःकृत केवली कथांग।
नवम अनुत्तरांग प्रख्यात, दस-दस साधु अनुत्तर प्राप्त॥
दशम प्रश्न व्याकरण प्रसिद्ध, प्रश्नोत्तर व्याकरण सुसिद्ध।
ग्यारहवाँ विपाक सूत्रांग, पुण्य-पाप फल का कथनांग॥
दृष्टिप्रवाद बारहवाँ जान, नाशक मिथ्यातम अज्ञान।
आत्मज्ञान बिन सब अज्ञान, एकादश नौ पूर्व अजान॥

दोहा

पाँच भेद परिकर्म के, दृष्टिवाद के भेद।
जीव शाश्वत सिद्ध है, सदा त्रिकाल अभेद॥
प्रथम चंद्र प्रज्ञप्ति में, चंद्र आयु परिवार।
द्वितीय सूर्य प्रज्ञप्ति में, कथन सूर्य परिवार॥
जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति में, द्रह सरि नर तिर्यंच।
द्वीप समुद्र प्रज्ञप्ति में, सागर द्वीप प्रपंच॥
है व्याख्या प्रज्ञप्ति में, धर्माधर्माकाश।
भव्य-अभव्य सुजीव का, कथन काल अविनाश॥
कथन सूत्र अधिकार में, पर-मत का परिहार।
है प्रथमानुयोग में पुण्यकथा का सार॥

चौथा भेद सुपूर्वगत, चौदह भेद प्रसिद्ध।
जो भी इनको जानते, हो जाते हैं सिद्ध॥

वीरछंद

है उत्पाद पूर्व, अग्रायणी, वीर्यवाद, अस्तिनास्ति प्रवाद।
ज्ञानप्रवाद रु सत्यप्रवाद, सु आत्मप्रवाद रु कर्म प्रवाद॥
प्रत्याख्यान, विद्यानुवाद कल्याण वाद सु प्राणावाद।
क्रिया विशाल रु, लोकबिन्दु, चौदह पूरब हैं ज्ञान प्रदाय॥
है पाँचों ही भेद चूलिका दृष्टिवाद के भेद यथा।
जलगत, थलगत, मायागत अरु रूपगता, आकाशगता॥
अग्रायणी पूर्व के जानों भेद पांच हैं मुख्य प्रधान।
आनुपूर्वी, नाम, प्रमाण, वक्तव्य सु अर्थाधिकार जान॥
अर्थाधिकार के भेद चतुदर्श, सामायिक, संस्तवन महान।
तीर्थवन्दना, प्रतिक्रमण, वैनयिक और कृतिकर्म प्रधान॥
दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, कल्पाकल्प, कल्पव्यवहार।
महाकल्प अर पुंडरीक, महापुंडरीक, निषिधिकासार॥
यही प्रकीर्णक चौदह कहलाते इनका भी स्वरूप लो जान।
पंच महाव्रतधारी मुनियों की होती इनसे पहचान॥
भेद-प्रभेद अनेकों हैं अरु असंख्यात जिनवाणी के।
द्रव्य-भाव श्रुत सहित भेद हरते हैं दुःख हर प्राणी के॥

दोहा

जिनवाणी को नमन कर, पूजूँ गृह शिवकार।
जिनवाणी की कृपा से, हो जाऊँ भवपार॥
जयवन्तो त्रयलोक में, जिनवाणी सुखकार।
स्याद्वाद शैली करे, सब विवाद परिहार॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शनमेरुसम्बन्धि षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

मेरु सुदर्शन सोलह जिनगृह हमने पूजे हर्षित हो।
माला चिन्हांकित ध्वज आरोहण करता हूँ पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

निरखी-निरखी मनहर मूरति, तोरी हो जिनन्दा।
खोई-खोई आतम निज-निधि, पाई हो जिनन्दा॥ टेक॥

मोह दुःख का घर है मैंने, आज सरासर देखा है....२
आतम-धन के आगे झूठा, जग का सारा लेखा है...२
मैं अपने में घुल-मिल जाऊं, तो पाऊं जिनन्दा॥१॥

तू भवनाशी मैं भववासी, भवसागर से तिरना है...२
शुद्ध-स्वरूपी तुझसा बनकर, शिवरमणी को वरना है...२
मैं अपने में ही रम जाऊं, वर पाऊं जिनन्दा॥२॥

नादानी में अबलों मैंने, पर को अपना माना है...२
काया की माया में भूला, तुझको नहीं पहचाना है...२
अब भूलों पर रोता ये मन, मोरा हो जिनन्दा॥३॥

पूजन क्रमांक-३

सुदर्शनमेरु संबंधी चार गजदन्त जिनालय पूजन

स्थापना

वीरछन्द

मेरु सुदर्शन संबंधी गजदंत जिनालय चार प्रसिद्ध।
इन्द्रादिक सुर शीश झुकाते प्रभु पूजन कर होंगे सिद्ध॥
हस्तिदंत सम गिरि गजदंतों की शोभा सबसे न्यारी।
तत्त्वों के सम्यक् निर्णय की थाली लाया मनहारी॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबंधिचतुर्गजदन्तस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)।

छन्द- हरिगीतिका

तत्त्वनिर्णय नीर निर्मल जिन-चरण अर्पण करूँ।
लब्धि पाय क्षयोपशम अब तत्त्व का निर्णय करूँ॥
मेरु के गजदंत जिनगृह-पूजकर निज निधि मिले।
वीतराग जिनेन्द्र प्रभु पद-कमल उर-सर में खिले॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म- जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्व-निर्णय से महकते, भाव का चन्दन लिया।
विशुद्धभावों ने प्रभो! आताप भव का हर लिया॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्व-निर्णय से अखण्डित जानकर निजभाव को।
तन्दुल अखण्ड करूँ समर्पित, क्षत करूँ पर भाव को॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्वनिर्णय से सुगंधित, भक्ति-सुमनों से सजा।
कर रहा यह माल अर्पित मोह भी भागा लजा॥
मेरु के गजदंत जिनगृह-पूजकर निज निधि मिले।
वीतराग जिनेन्द्र प्रभु पद-कमल उर-सर में खिले॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्व-निर्णय रस सने चरु जिन-चरण अर्पण करूँ।
करण निर्मल भूमि में सम्यक्त्व आरोपण करूँ॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थित सिध्दकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्व-निर्णय से प्रजालूँ दीप भेद-विज्ञान का।
मोह का उपशम करूँ लूँ राज्य सम्यग्ज्ञान का॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्व-निर्णय से समझलूँ रूप ज्ञायक भाव का।
ध्यान अग्नि में क्षयोपशम करूँ मोह विभाव का॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्व-निर्णय का सुफल सम्यक्त्व क्षायिक प्राप्त हो।
श्रेष्ठ फल युत हे जिनेश्वर वीतरागी आप्त हो॥ मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्त्व-निर्णय ही है प्रदायक पद अनर्घ्य महान का।
अर्घ्य अर्पण से करूँ संकल्प जिन गुणगान का॥मेरु०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

चौपई

मेरु सुदर्शन विदिशा जान, आग्नेय गजदन्त महान ॥
महासौमनस नाम प्रसिद्ध, सात कूट में इक सुप्रसिद्ध ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरोः आग्नेयविदिशि महासौमनसगजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

है नै ऋत्य दिशा में एक, विद्युत्प्रभ गजदंत सुनेक ॥
नवकूटों से गिरि शोभंत, इक पर श्री जिनगृह भगवंत ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरोः नैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभगजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

है वायव्य कोण में दिव्य, गंधमादनाचल अति भव्य ॥
सप्तकूट युत हैं गजदंत, इक पर श्री जिनगृह भगवंत ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरोः वायव्यविदिशि गंधमादनगजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्रप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मेरु सुदर्शन दिशि ईशान, माल्यवान गजदंत महान ॥
नवकूटों से युक्त विशाल, इकपर चैत्यालय सुविशाल ॥४ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरोः ईशानविदिशि माल्यवानगजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पूर्णार्घ्य

दोहा

चार शतक बत्तीस हैं, जिन-प्रतिमा अरहंत ।
पूर्ण-अर्घ्य अर्पण करूँ, धन्य-धन्य भगवन्त ॥
धन्य-धन्य जिन बिम्ब हैं, धन्य-धन्य जिनराज ।
शुद्धातम साधन करूँ, पाऊँ निजपद राज ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरोः चतुर्विदिशायां-चतुर्गजदन्तस्थित-चतुःजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

अनेकान्तमय वस्तु को, कहता है स्याद्वाद।
भाव भासना सहित ध्वज, चढ़ा रहा अविवाद॥

छंद – रोला

भाव-भासना बिन तत्त्वों का निर्णय कैसा ?
बिना बीज के वृक्ष पल्लवित होवे कैसा ?
भाव-भासना बिन अभ्यास व्यर्थ हो जाता।
भाव-भासना ही सम्यक् निर्णय का दाता॥
सात तत्त्व के नाम रटे हैं इस चेतन ने।
लक्षण जाने, मर्म न पाया अब तक मन ने॥
देता है उपदेश सभी को तत्त्वज्ञान के।
किन्तु भासना बिन भ्रमता है बिना भान के॥
स्याद्वाद ही सम्यक् निर्णय में सक्षम है।
तत्त्वज्ञान से हो जाता क्षय भव विभ्रम है॥
सप्तभंग ही समाधान-कारी विवाद सब।
वस्तुतत्त्व का निर्णय होता निर्विवाद सब॥
स्यात् अस्ति है स्यात् नास्ति है मंगलकारी।
अस्ति-नास्ति है स्यात् सहित विवाद परिहारी॥
स्यात् सहित है अवक्तव्य कथनी सब युगपत्।
स्यात् अस्ति युत अवक्तव्य है यह जानो अब॥
स्यात् नास्तियुत अवक्तव्य की महिमा जानो।
अस्ति-नास्ति युत अवक्तव्य स्यात् पहचानो॥
सप्तभंग से स्याद्वाद अद्भुत शोभित है।
जिन-आगम की इस शैली पर जग मोहित है॥
स्याद्वाद महिमा से शोभित है जिनवाणी।
सकल विवाद नाश करती माता कल्याणी॥

"दसंणमूलो धम्मो," हृदय सजाऊँ स्वामी।
"चारित्तं खलु धम्मो," पाऊँ अंतर्यामी॥

दोहा

स्याद्वाद में निहित है, दोनों भाव-अभाव।
गिरि गजदन्त नमूँ सदा, पाऊँ आत्म स्वभाव॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शनमेरुसम्बन्धिचतुर्गजदन्तस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

जंबूद्वीप सुगजदंतों के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
सिंह चिन्ह की ध्वजा चढ़ाऊँ अंतर मन से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

इन्द्रध्वज मंडल भला भया।
देखो देखो देखो जी आनन्द छा गया॥टेक॥
मध्यलोक के भव्य जिनालय, शास्वत जिनप्रतिमा सुखकारी।
शुद्धातम के दर्श कराती, अर्न्तमुख छवि लगती प्यारी॥
जिन-पूजन का अवसर आ गया, देखो देखो जी आनन्द छा गया॥१॥
सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चरितमय, जग को मुक्ति मार्ग बताती।
ज्ञान भिन्न है राग भिन्न है, भविजन को सन्देश सुनाती।
भेद-विज्ञान हमें भा गया, देखो देखो देखो जी आनन्द छा गया॥२॥
वस्तु कथञ्चित नित्य-अनित्य अनेकान्त की महिमा न्यारी।
स्याद्वाद शैली पर मोहित होते हैं, मुनि सुर नर-नारी॥
यह जिनशासन हमें भा गया, देखो देखो जी आनन्द छा गया॥३॥

पूजन क्रमांक-४

सुदर्शनमेरु संबंधी जम्बू-शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजन

स्थापना

वीरछंद

मेरु सुदर्शन संबंधी है जम्बूवृक्ष प्रसिद्ध महान।
इसी वृक्ष के कारण जम्बूद्वीप नाम हो गया प्रधान॥
उत्तर में उत्तर कुरु शोभित भोगभूमि के दिशि ईशान।
जम्बूतरु की उत्तर शाखा पर जिन-चैत्यालय छविमान॥
दक्षिण भाग सुभूमि देवकुरु की नैऋत्य दिशा शुभ जान।
शाल्मलि दक्षिण शाखा पर है जिन-चैत्यालय महिमावान॥
दोनों तरु पृथ्वीकायिक हैं पांच शतक योजन विस्तार।
सम्यक् नौका पर चढ़ स्वामी हो जाऊँ भवदधि के पार॥

ॐ ह्रीं श्री जम्बूद्वीपस्थ सुदर्शनमेरुसम्बन्धि जम्बू-शाल्मलिवृक्षद्वयस्थितजिनालय-जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)।

छंद — चौपई/ आंचलिबद्ध हाकलि

निःशंकित निज आत्म स्वरूप में अपनापन भव हर रूप।
महासुख हो, जय जिनराज महाप्रभु हो॥
जम्बू-शाल्मलि वृक्ष महान वन्दूँ द्वय जिन-भवन प्रधान।
परम प्रभु हो, जय जिनदेव महा विभु हो॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि जम्बू-शाल्मलिवृक्षद्वयस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्य जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित चंदन शान्त स्वरूप। आकाँक्षा नाशक अनुरूप॥महा०॥
जम्बू-शाल्मलि वृक्ष महान। वन्दूँ द्वय जिन-भवन प्रधान॥परम०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि जम्बूशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित अक्षत भाव विशुद्ध। निर्विचिकित्सा करते शुद्ध।
महासुख हो, जय जिनराज महाप्रभु हो ॥
जम्बू-शाल्मलि वृक्ष महान वन्दूँ द्वय जिन-भवन प्रधान।
परम प्रभु हो, जय जिनदेव महा विभु हो ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि जम्बूशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित पुष्प काम-मद नाश। दृष्टि-अमूढ़ स्वरूप प्रकाश ॥ महा. ॥
जम्बू-शाल्मलि वृक्ष महान। वन्दूँ द्वय जिन-भवन प्रधान ॥ परम. ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि जम्बूशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित चरु उत्तम सुखदाय। क्षुधा व्याधि उपगूहन थाय ॥ महा. ॥
जम्बू-शाल्मलि वृक्ष महान। वन्दूँ द्वय जिन-भवन प्रधान ॥ परम. ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि जम्बूशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित दीप ज्योति मुसकाय। निज-पर स्थितिकरण कराय ॥ महा. ॥
जम्बू-शाल्मलि वृक्ष महान। वन्दूँ द्वय जिन-भवन प्रधान ॥ परम. ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि जम्बूशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित धूप प्रसिद्ध सुगंध। वात्सल्य से हरती बंध ॥ महा. ॥
जम्बू-शाल्मलि वृक्ष महान। वन्दूँ द्वय जिन-भवन प्रधान ॥ परम. ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बूशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित फल सुख शान्तिप्रदाय। धर्म प्रभाव सुफल सुखदाय ॥
महासुख हो, जय जिनराज महाप्रभु हो ॥
जम्बू-शाल्मलि वृक्ष महान। वन्दूँ द्वय जिन-भवन प्रधान ॥
परम प्रभु हो, जय जिनदेव महा विभु हो ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिजम्बू-शाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टांगी सम्यक्त्व महान। पद अनर्घ्य का मिले वितान ॥ महा. ॥
जम्बू-शाल्मलि वृक्ष महान। वन्दूँ द्वय जिन-भवन प्रधान ॥ परम. ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि जम्बूशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

शार्दूलविक्रीड़ित

जम्बू वृक्ष महान चैत्य पूजूँ, भाऊँ सदा भावना।
निज शुद्धात्म स्वभाव प्राप्त कर लूँ, हो पूर्ण यह कामना ॥
क्रम नियमित पर्याय सर्व जानूँ, सम्यक्त्व की प्राप्ति हित।
रत्नत्रयमय नित्य गीत गाऊँ, भूलूँ नहीं साधना ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धी जम्बूवृक्षस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शाल्मलि वृक्ष महान चैत्य पूजूँ शुद्धात्म की प्राप्ति हित।
निर्मल ज्ञान स्वरूप दिव्य मेरा परिपूर्ण है संयमित ॥
जिन दीक्षा भगवती भव्य पाऊँ मुनिराज निर्ग्रन्थ बन।
ज्ञानानन्द स्वरूप नित्य ध्याऊँ सम्पूर्ण पा बल अमित ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धी शाल्मलिवृक्षस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्य पदप्राप्तये निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सोरठा

दो जिनभवन महान, जम्बू शाल्मलि वृक्ष के।
भवदुख हो अवसान, पूर्ण अर्घ्य अर्पित करूँ ॥
निज गुण का यह अर्घ्य, अर्पित है निज आत्म को।
पाऊँ पद अन-अर्घ्य, नमूँ सदा शुद्धात्म को ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धी जम्बूशाल्मलिवृक्षद्वयस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

सम्यग्दर्शन ही प्रथम, मुक्तिभवन सोपान।
निज आश्रय से प्राप्त कर, बन जाऊँ भगवान॥

छंद-रोला

निश्चय सम्यग्दर्शन ही निज उर में लाऊँ।
आत्मतत्त्व की ही प्रतीति दृढ़ पूरी पाऊँ॥
मैं हूँ पर से भिन्न आत्मा गुण अनंतमय।
निज से पूर्ण अभिन्न चिदातम मैं मंगलमय॥
औपशमिक क्षायिक क्षयोपशम सम्यग्दर्शन।
यही अधिगमज तथा निसर्गज कहते भगवन॥
आर्ष, बीज, उपदेश, मार्ग, अरु सूक्ष्म सुजानो।
तथा अर्थ, विस्तार और संक्षेप प्रमानो॥
यह अवगाढ और परमावगाढ होता है।
अष्ट अंगयुत, दश प्रकार, भवभ्रम खोता है॥
शंका काँक्षा आदि दोष पच्चीस रहित है।
शुद्ध स्वरूपाचरण शक्ति से सहज सहित है॥
जीव अजीव आस्रव संवर बंध निर्जरा।
मोक्ष सहित सातों तत्त्वों की भूमि उर्वरा॥
यह व्यवहार सु सम्यग्दर्शन कहलाता है।
मुक्तिमार्ग आभास जीव को बहलाता है॥
प्रभु समकित व्यवहार अनंतों भव में पाया।
किन्तु न अब तक मुक्तिमार्ग निज में दरशाया॥
देव शास्त्र गुरु की सच्ची श्रद्धा नहिं पायी।
वीतराग जिनधर्म सुछवि नहिं उर को भायी॥
रागी-द्वेषी देवों से सुख की अभिलाषा।
रहा सदा ही, किन्तु आज तक मैं प्रभु प्यासा॥

जीव शाश्वत चेतन, जड़ अजीव पुद्गल तन।
राग-द्वेष आस्रव से करता आया बंधन॥
संवर का तो भाव नहीं प्रभुउर में आया।
किन्तु निर्जरा कर अकाम दुख ही दुख पाया॥
मोक्ष तत्त्व का नाम सुना पर भाव न समझा।
कर्म रहित होने का यत्न किया पर उलझा॥
तत्त्वज्ञान अभ्यास पूर्वक भाव-भासना।
पाय काल समकित निधि पाई, मिटी वासना॥
तीन काल तीनों लोकों में समकित दुर्लभ।
भवसागर तरने की तरणी हुई अब सुलभ॥
शुद्ध बुद्ध चैतन्य, भेद बिन, मैं अखंड हूँ।
ध्रौव्य त्रिकाली शिवस्वरूप हूँ, अति प्रचंड हूँ॥
गुण-पर्याय भेद भी नहीं दृष्टि में आता।
मुझको तो केवल अपना स्वरूप दर्शाता॥
यही दृष्टि का विषय, जो कि पर्याय रहित है।
जीव त्रिकाली, सर्व श्रेष्ठ शिव सौख्य सहित है॥
है अनंत शक्तियाँ सन्निहित इसके भीतर।
स्वयं सिद्ध है बना-बनाया यह जगदीश्वर॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि जम्बू-शाल्मलिवृक्षाद्वायस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछन्द

जम्बूद्वीप सुजम्बू-शाल्मलि जिनगृह पूजे हर्षित हो।
अंशुक चिन्ह विभूषित ध्वज-आरोहण करता पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण सम्पति मिले जिनेश॥

पुंष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक-५

सुदर्शनमेरु संबंधी सोलह वक्षार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – रोला

जम्बूद्वीप सुगिरि सोलह वक्षार जानिये।
मेरु सुदर्शन आसपास उत्तम प्रमाणिये॥
पूर्व-विदेह नदी सीता उत्तर तट चारों।
पूर्व-विदेह नदी सीता दक्षिण तट चारों॥
सीतोदा दक्षिण तट पश्चिम-विदेह चारों॥
सीतोदा उत्तर तट पश्चिम-विदेह चारों॥
ये सोलह वक्षार जिनालय से हैं शोभित।
स्वर्गों के सुर इन्द्र सदा पूजन कर मोहित॥
मोक्षमार्ग के नेता, ज्ञाता विश्व-तत्त्व के।
आज पधारो मम उर में, भेत्ता भूभृत के॥
सम्यग्ज्ञान प्रगट कर आतम रूप लखाऊँ।
अनेकान्त में भी सम्यक् एकान्त सुध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वापरविदेहस्थ षोडशवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

चौपई

सम्यग्ज्ञान सुनीर चढ़ाय, संशय विभ्रम मोह नशाय॥
मेरु सुदर्शन के वक्षार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भेद-ज्ञान चंदन सुप्रताप, विनशे ज्ञेय-लुब्धता ताप॥
मेरु सुदर्शन के वक्षार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत सम्यग्ज्ञान स्वरूप, जानूँ निज अखण्ड चिद्रूप ॥
मेरु सुदर्शन के वक्षार, जिनवर महिमा अपरम्पार ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

भेद-ज्ञान के सुमन चढ़ाय, पर-ज्ञेयों का लोभ नशाय ॥
मेरु सुदर्शन के वक्षार, जिनवर महिमा अपरम्पार ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

भेद-ज्ञान रसमय नैवेद्य, पर-सन्मुखता का नहिं खेद ॥
मेरु सुदर्शन के वक्षार, जिनवर महिमा अपरम्पार ॥

ॐ ह्री श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यग्ज्ञान सुदीप उजार, स्व-पर स्वरूप प्रकाशन हार ॥
मेरु सुदर्शन के वक्षार, जिनवर महिमा अपरम्पार ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सम्यग्ज्ञान सुधूप चढ़ाय, अष्टकर्म अरि काष्ठ जलाय ॥
मेरु सुदर्शन के वक्षार, जिनवर महिमा अपरम्पार ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

भेद-ज्ञान के फल शिवरूप, मोक्ष सुफल पाऊँ चिद्रूप ॥
मेरु सुदर्शन के वक्षार, जिनवर महिमा अपरम्पार ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्ट अंगमय सम्यग्ज्ञान, अर्घ्य चढ़ाय भजूँ भगवान ॥
मेरु सुदर्शन के वक्षार, जिनवर महिमा अपरम्पार ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्घ्यावलि

वीरछन्द

सीता सरिता के उत्तर तट भद्रशाल वेदी सुविशाल।
चित्रकूट वक्षार स्वर्णमय पर हैं चार कूट नत भाल॥
सरित ओर के सिद्धकूट पर श्री जिनवर का पावनधाम।
नाचूँ गाऊँ ध्वजा चढ़ाऊँ भक्तिभाव से करूँ प्रणाम॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता सरिता के उत्तर तट पद्म-कूट वक्षार महान।
स्वर्णमयी चारों कूटों में इक पर जिनगृह है छविमान॥२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नलिनकूट वक्षार सुपावन एक कूट पर जिनगृह जान।
जिन-प्रतिमाओं के दर्शन से होते कर्म शत्रु अवसान॥३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक शैल वक्षार मनोरम सुरांगनाएँ करती नृत्य।
षट आवश्यक में आवश्यक एक मात्र अनुभव सत्कृत्य॥४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धी पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे एकशैलवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अनर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद – रोला

पूर्व-विदेह सहित सीता दक्षिण तट आओ।
वेदी देवारण्य निकट जिन महिमा गाओ॥
है त्रिकूट वक्षार चारकूटों में इक पर।
इकशत वसु जिन-प्रतिमा युक्त जिनालय सुन्दर॥५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे त्रिकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यों अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतासरि वैश्रवणकूट वक्षार मनोहर।
भावसहित मैं पूजूँ श्री जिनवर का मंदिर ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे वैश्रवणकूट वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सीता दक्षिण है वक्षार सुअंजनात्मा।
चारकूट में एक कूट पर जिनगृह परमात्मा ॥७ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे अंजनात्मावक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता दक्षिण तट अंजन वक्षार मनोहर।
चारकूट में एक कूट श्री जिन-मंदिर ॥८ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटेअंजनात्मावक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

है पश्चिम विदेह सीतोदा दक्षिण ओर चार वक्षार।
सुरांगनाओं की पग पायल घुंघरू की झनझन झंकार ॥
सीतोदा दक्षिण तट वेदी भद्रशाल के निकट महान।
श्रद्धावान नाम का है वक्षार कूट इक जिनगृह जान ॥९ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरितादक्षिणतटेश्रद्धावानवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा दक्षिण वक्षार सु विजटावान कूट हैं चार।
एक कूट पर श्री जिन-मंदिर जिसकी महिमा अपरंपार ॥१० ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरितादक्षिणतटे विजटावान वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.स्वाहा।

सीतोदा दक्षिण आशीविष है वक्षार कूट हैं चार।
एक कूट पर जिन-चैत्यालय जिसकी महिमा का ना पार ॥११ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरितादक्षिणतटे आशीविष वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदपाप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा दक्षिण वक्षार सुखावह चार कूट से युक्त।
एक कूट पर जिनगृह उत्तम विविध चार वन से संयुक्त ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरितादक्षिणतटे सुखावह वक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रथम मेरु पश्चिम विदेह सीतोदा सरि उत्तर तट चार।
हैं वक्षार महान स्वर्णमय शीश झुकाऊँ बारंबार॥
सीतोदा उत्तर तट वेदी देवारण्य महान बनी।
चंद्रमाल वक्षार कूट इक पर जिनगृह में विश्वधनी ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे चन्द्रमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्यमाल वक्षार सहित सीतोदा उत्तर तट पर एक।
चारकूट में एक कूट पर श्री जिन-भवन नमूँ सविवेक ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा सरि उत्तर तट पर नागमाल वक्षार प्रसिद्ध।
एक कूट पर श्री जिन-मंदिर जहाँ विराजे जिन सुप्रसिद्ध ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे नागमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा उत्तर तट शोभित देवमाल वक्षार महान।
एक कूट पर जिन-चैत्यालय मोहनाश में सक्षम जान ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे देवमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

वीरछन्द

मेरु सुदर्शन पूर्व तथा पश्चिम में सोलह गिरि वक्षार।
पूर्ण अर्घ्य है जिन-बिम्बों को, रागभाव सब कर दूँ क्षार॥
एकसहस्र सात सौ, अट्ठाईस बिम्ब को करूँ प्रणाम।
जिन-प्रतिमा जिनवरसम लखकर पाऊँनिज काज्ञान निधान॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पूर्वापरविदेहस्थ षोडशवक्षारस्थितसिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

सम्यग्दर्शन युक्त है, निर्मल सम्यग्ज्ञान।
अनेकान्तमय वस्तु के, प्रतिपादक भगवान ॥

वीरछन्द

निज अभेद का ज्ञान सुनिश्चित आठ भेद सब हैं व्यवहार।
सम्यग्ज्ञान परम हितकारी शिव सुखदाता मंगलकार ॥
अक्षर पद वाक्यों का शुद्धोच्चारण है व्यंजन-आचार।
शब्दों के यथार्थ अर्थ का अवधारण है अर्थाचार ॥
शब्द अर्थ दोनों का सम्यक् जानपना है उभयाचार।
योग्यकाल में जिनश्रुत का स्वाध्याय कहाता कालाचार ॥
नम्र-रूप रह लेश न उद्धत होना ही है विनयाचार।
सदा ज्ञान का आराधन, स्मरण सहित उपध्यानाचार ॥
शास्त्रों के पाठी अरु श्रुत का आदर है बहुमानाचार।
नहीं छुपाना शास्त्र और गुरु नाम अनिह्नव है आचार ॥
आठ अंग है यही ज्ञान के इनसे दृढ़ हो सम्यग्ज्ञान।
पाँच भेद हैं मति श्रुत अवधि मनःपर्यय अरु केवलज्ञान ॥
मति होता है इन्द्रिय मन से तीन शतक अरु छत्तीस भेद।
श्रुत के प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं चउ अनुयोग सु भेद ॥
द्वादशांग चौदह पूरब परिकर्म चूलिका प्रकीर्णक।
अक्षर और अनक्षरात्मक भेद अनेकों हैं सम्यक् ॥
अवधि ज्ञान त्रय देशावधि परमावधि सर्वावधि जानो।
भवप्रत्यय के तीन और गुणप्रत्यय के छह पहिचानो ॥
मनःपर्यय ऋजुमति विपुलमति उपचार अपेक्षा से जानो।
नय-प्रमाण से जान ज्ञान प्रत्यक्ष परोक्ष पृथक् मानो ॥
अनेकान्त की महिमा गाऊँ कर एकान्तवाद का नाश।
अनेकान्त में ही होता है निर्मल वस्तु-स्वरूप प्रकाश ॥

वस्तु अनंत गुणात्मक एवं है अनंत धर्मात्मक रूप।
पर-गुण पर-पर्याय न इसमें निज-गुण निज-पर्याय स्वरूप॥
निज धर्मों से वस्तु अलंकृत हैं अभाव रूपी पर-धर्म।
एक काल में दोनों धर्म विराजमान हैं वस्तु स्वधर्म॥
द्रव्य-क्षेत्र अरु काल-भाव से अस्ति स्वरूपी वस्तुस्वभाव।
अपने स्व-चतुष्टय से है अन्य चतुष्टय सदा अभाव॥
मैं अपने से अपने में हूँ, पर से पर में कभी नहीं।
अस्ति-नास्ति नय धर्म विभूषित संशयात्मक कभी नहीं॥
अनेकान्त के महामंत्र को जानूँ करूँ आत्म कल्याण।
जिनशासन आधार यही है अनेकान्त अविवाद प्रधान॥
जिनशासन में अनेकान्त भी नहीं सर्वथा माना है।
वस्तु कथंचित् अनेकान्तमय अरु एकान्त प्रमाणा है॥
जो प्रमाण से साधित है वह अनेकान्त ही वस्तुस्वरूप।
नय पद्धति से साधित है सम्यक्-एकान्त वस्तु का रूप॥

सोरठा

अस्ति-नास्तिमय धर्म-युगल परस्पर विरुद्ध है।
साथ रहें, ये धर्म वस्तु विषैं अविरुद्ध हैं॥
रहते धर्म अनन्त, एक वस्तु में साथ ही।
कहते जिन भगवन्त, अनेकान्त का मर्म यह॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पूर्वापरविदेहस्थ षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछन्द

जम्बूद्वीप सुवक्षारों के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
गरुड़ चिन्ह की ध्वजा चढ़ाऊँ अन्तर्मन से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण संपति मिले जिनेश॥

पुष्पांञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक-६

सुदर्शनमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - सरसी

मेरु सुदर्शन संबंधित है पूर्व-विदेह महान।
मेरु सुदर्शन संबधित पश्चिम-विदेह छविमान॥
सोलह-सोलह रजताचल जिनका विजयार्ध सुनाम।
क्षेत्र भरत-ऐरावत के दो रजताचल अभिराम॥
भावपूर्वक करूँ वन्दना चैत्यालय विजयार्ध।
निज चैतन्य-चंद्रिका निरखूँ निर्मल हो पुरुषार्थ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वापरविदेह-भरतैरावत सम्बन्धि-चतुस्त्रिंशत विजयार्धपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)।

चौपाई

सम्यक् चारित्र जल सुखकारी, अनन्तानुबन्धी परिहारी।
जय विजयार्ध सुगिरि चौंतीसा, वन्दूँ भाव सहित जगदीशा॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशत विजयार्धपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल सम्यक् चारित्र चन्दन, अप्रत्याख्यानी ताप निकन्दन।
जय विजयार्ध सुगिरि चौंतीसा, वन्दूँ भाव सहित जगदीशा॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशत विजयार्धपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् चारित्र धर्म अखण्डित, प्रत्याख्यानी करता खंडित।
जय विजयार्ध सुगिरि चौंतीसा, बन्दूँ भाव सहित जगदीशा॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशत विजयार्धपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तयेअक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्चारित्र पुष्प सुगंधी, ज्वलन संज्वलन होती ठंडी।
जय विजयार्ध सुगिरि चौंतीसा, वन्दूँ भाव सहित जगदीशा॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशत विजयार्धपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चारित्र चरु ले दिव्य महाना, सामायिक निज तृप्ति प्रधाना।
जय विजयार्ध सुगिरि चौंतीसा, वन्दूँ भाव सहित जगदीशा॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशत विजयार्धपर्वतस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् चारित्र दीप प्रजालूँ, छेदोपस्थापन विधि पालूँ।
जय विजयार्ध सुगिरि चौंतीसा, वन्दूँ भावसहित जगदीशा॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशत विजयार्धपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् चारित्र धूप सुगंधित, हो परिहारविशुद्धि अखण्डित।
जय विजयार्ध सुगिरि चौंतीसा, वन्दूँ भावसहित जगदीशा॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशत विजयार्धपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् चारित्र फल अति पावन, सूक्ष्म साम्पराय मन भावन।
जय विजयार्ध सुगिरि चौंतीसा, वन्दूँ भावसहित जगदीशा॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसंबन्धि चतुस्त्रिंशत विजयार्धपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् चारित्र अर्घ्य अनूपम, यथाख्यात परिणति चिद्रूपम्।
जय विजयार्ध सुगिरि चौंतीसा, वन्दूँ भावसहित जगदीशा॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशत विजयार्धपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

वीरछन्द

मेरु सुदर्शन पूर्व और पश्चिम में है बत्तीस विदेह।
एक-एक विजयार्ध रजतगिरि जिन पर हैं शाश्वत जिनगेह॥
भरत और ऐरावत में दो रूपाचल पर दो जिनधाम।
इन चौंतीस जिनालय की जिन-प्रतिमाओं को करूँ प्रणाम॥
तीन सहस छह शतक बहत्तर रत्नमयी जिन-बिम्ब महान।
छह खंडों का होता है प्रत्येक क्षेत्र अति शोभावान॥

तीर्थंकर चौबीस चक्रवर्ती बारह इनमें होते।
नव नारायण नव प्रतिनारायण बलभद्र सु नव होते॥
वैताढ्यों के जिनमन्दिर पर वन्दन करने जाऊँगा।
भव्य अकृत्रिम चैत्यालय पर मंगल ध्वजा चढ़ाऊँगा॥

छन्द — उपमान चाल-अहो जगत गुरुदेव

आर्यखंड है एक, भद्रशाल है वेदी।
कच्छा देश मनोज्ञ, जिन-मंदिर भव छेदी॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिपूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे कच्छदेशमध्यविजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता उत्तर ओर, देश सुकच्छा सुन्दर।
रजताचल के शीश, सुन्दर है जिन-मंदिर॥२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशमध्यविजयार्ध-पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मभूमि का क्षेत्र, देश महाकच्छा है।
रजताचल के शीष, चैत्यालय अच्छा है॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशमध्यविज-यार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कच्छकावती है देश, मध्य रजतगिरि जानो।
तीर्थंकर का जन्म, निश्चित होता मानो॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशमध्यविज-यार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आवर्ता है देश, कर्म भूमि विख्याता।
शुक्ल ध्यान जो ध्याय, निश्चित शिवपद पाता॥५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटेआवर्तदेशमध्यविजयार्ध-पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लांगलावर्ता देश, आर्यखंड से शोभित।
गिरि विजयार्ध जिनेन्द्र, गृह पर सुरनर मोहित॥६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तदेशमध्यविज-यार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मध्य पुष्कला देश, है विजयार्ध मनोरम।
धर्म ध्यान सुप्रताप, क्षय होता मिथ्यातम ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशमध्यविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताचल विजयार्ध, देश पुष्कलावती के।
तीर्थंकर प्रभु होंय, स्वामी पंचम गति के ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद – तिलोकी

पूर्व विदेह नदी सीता दक्षिण सुतट, देवारण्य वेदिका बहुत प्रसिद्ध है॥
इनसे सम्बन्धित विजयार्ध रजतगिरि, बार-बार मैं भावसहित वन्दन करूँ॥
वत्सा देश मध्यरूपाचल शीष पर, स्वर्णमयी जिन-चैत्यालय सुप्रसिद्ध हैं॥
श्री जिनचैत्यालय मैं पूजूँ भाव से, ध्वजा चढ़ाऊँ गाऊँ मंगलगान है॥ ९॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरितादक्षिणतटे वत्सादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

म्लेच्छ पांच अरु आर्यखंड है एकयुत, देश सुवत्सा गिरि वैताढ्य महान है।
श्री जिनचैत्यालय मैं पूजूँ भाव से, ध्वजा चढाऊँ गाऊँ मंगलगान है॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरु सम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतासरितदक्षिणतटे सुवत्सादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश महावत्सा शोभाशाली महा, तीर्थंकर प्रभुओं का जन्मस्थान है।
श्री जिनचैत्यालय मैं पूजूँ भाव से, ध्वजा चढाऊँ गाऊँ मंगलगान है॥११॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे महावत्सादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश वत्सकावती महान प्रसिद्ध है, निज स्वभाव जो भजता होता सिद्ध है॥
श्री जिनचैत्यालय मैं पूजूँ भाव से, ध्वजा चढाऊँ गाऊँ मंगलगान है॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे वत्सकावती देशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रम्यादेश यहाँ मुनिराज विराजते, मोह शत्रु को अपने हाथों क्षय करें।
श्री जिनचैत्यालय मैं पूजूँ भाव से, ध्वजा चढाऊँ गाऊँ मंगलगान है ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे रम्यादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुरम्या होते हैं तीर्थेश जी, लोकालोक जानते हैं सर्वज्ञ जिन।
श्री जिनचैत्यालय मैं पूजूँ भाव से, ध्वजा चढाऊँ गाऊँ मंगलगान है ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटेतासुरम्यादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रमणीया है देश रजत विजयार्ध युत, दिव्यध्वनि गुन्जित होती जिनराज की।
श्री जिनचैत्यालय मैं पूजूँ भाव से, ध्वजा चढाऊँ गाऊँ मंगलगान है ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटेरमणी रयादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश मंगलावती साधु परमेष्ठी, निज स्वभाव साधन से पाते मोक्षपद।
श्री जिनचैत्यालय मैं पूजूँ भाव से, ध्वजा चढाऊँ गाऊँ मंगलगान है ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे मंगलावतीदेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - सार /जोगीरासा

अपरविदेह नदी सीतोदा के दक्षिण तट जाओ।
भद्रशाल वेदिका मनोहर देश आठ लख आओ॥
पचपन-पचपन उभय दिशा में विद्याधर नगरी है।
नवकूटों से युक्त आठ सुन्दर विजयार्ध सुगिरि है॥

दोहा

रजताचल के शीश पर, पद्मादेश मझार।
श्री जिनवर पूजन करूँ, पाऊँ पद अविकार ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताचल के शिखर पर, देश सुपद्मा मध्य।
पूजूँ जिन सिद्धायतन, त्यागूँ सब सावद्य ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे सुपद्मादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश महापद्मा बड़ा, आर्यखंड है एक।
रूपाचल सिद्धायतन, पूजूँ धार विवेक ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे महापद्मादेश-मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्योअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश पद्मकावती में, रजताचल जिनधाम।
बार-बार वन्दन करूँ, पाऊँ निज ध्रुवधाम ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मकावतीदेश-मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताचल वैताढ्य है, शंखादेश विचित्र।
अपने सम्यग् ज्ञान में, देखूँ निज के चित्र ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे शंखादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजतमयी विजयार्ध है, नलिना देश महान।
साम्यभाव चारित्र से, पाऊँ पद निर्वाण ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटेनलिना-देशमध्यपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर की जन्म भू, कुमदा देशप्रसिद्ध।
रत्नत्रय परिपूर्ण कर, हो जाऊँ मैं सिद्ध ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे कुमदादेश-मध्यविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपाचल मन मोहना, सरित देश के मध्य।
निज स्वरूप की प्राप्ति हित, नित्य चढ़ाऊँ अर्घ्य ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटेसरितदेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

वेदी देवारण्य, सीतोदा उत्तर दिशा।
गिरि विजयार्ध प्रसिद्ध, आठ देश में आठ हैं ॥

जिनगृह पूजूँ एक, वप्रा के विजयार्ध का।
ज्ञान सुधारस मेह, सतत निरंतर प्राप्त हो ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे वप्रादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताचल अभिराम, देश सुवप्रा जानिये।
पूजूँ मैं जिनधाम, अष्ट मूलगुण धारकर ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे सुवप्रादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपाचल के शीश, देश महावप्रा निकट।
वन्दूँ श्री जगदीश, पाँचों अणुव्रत पालकर ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे महावप्रादेशमध्य विजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गिरि वैताढ्य मनोज्ञ, देश वप्रकावती में।
प्रतिमा पालन योग्य, जिनपूजन करके बनूँ ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे वप्रकावतीदेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपाचल विख्यात, गंधादेश महान में।
प्रतिमाएँ निर्दोष पालूँ तो ऐलक बनूँ ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे गंधादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताचल है मध्य, देश सुगंधा कर्म भू।
मुनिपद धारण हेतु, तीन चौकडी क्षय करूँ ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे सुगंधादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपाचल जिनगेह, देश गंधिला पूज लूँ।
करूँ उग्र पुरुषार्थ, क्षायिक श्रेणी पर चढूँ ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे गंधिलादेशमध्य विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है विजयार्ध अचल, गंधमालिनी देश में।
चार घातिया नाश, पाऊँ केवल ज्ञान निधि ॥३२ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे गंधमालिनीदेश-मध्यविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद — ताटंक

गिरि हिमवान सु पद्मद्रह है, गंगा सिन्धु नदी उद्गम।
गंगा पूर्व, सिन्धु पश्चिम की ओर सदा बहती अनुपम ॥
गिरि विजयार्ध गुफा से आकर लवण उदधि में मिलती है।
चौदह-चौदह सहस्र नदी परिवार संग ले चलती है ॥
मेरु सुदर्शन भरतक्षेत्र में नगरी मुख्य अयोध्या जान।
रजताचल के श्री जिन चैत्यालय को मैं पूजूँ धर ध्यान ॥३३ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि भरतक्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरी महापुण्डरीक द्रह रक्ता रक्तोदा अनुपम।
रक्ता पूर्व दिशा, रक्तोदा पश्चिम बहती सुन्दरतम ॥
गिरि विजयार्ध गुफा से बहकर लवण उदधि में जाती है।
चौदह-चौदह सहस्र नदी परिवार संग में लाती है ॥
मेरु सुदर्शन उत्तर ऐरावत में नगर अयोध्या जान।
गिरि विजयार्ध श्री जिनचैत्यालय को मैं पूजूँ धर ध्यान ॥३४ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सोरठा

मेरु सुदर्शन श्रेष्ठ, कर्मभूमि चौंतीस हैं।
इतने ही विजयार्ध, स्वर्णमयी जिन भवनयुत ॥
चौंतीसों जिन गेह, बन्दूँ मन-वच और तन।
पूर्ण अर्घ्य ले नाथ, पूजूँ सब सिद्धायतन ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

दृढ़ सम्यक् चारित्र की, महिमा अपरंपार।
इसे धार प्राणी हुए, भव समुद्र से पार॥

वीरछंद

निश्चय सम्यग्दर्शन पूर्वक ही होता है सम्यग्ज्ञान।
सम्यग्ज्ञान पूर्वक होता है सम्यक्चारित्र महान।
अष्ट अंग युत सम्यग्दर्शन तथा अष्ट विध सम्यग्ज्ञान॥
तेरह विध सम्यक्चारित्र परम पावन है श्रेष्ठ प्रधान॥
अनंतानुबंधी जाते ही होता है सम्यक्त्व महान।
अप्रत्याख्यानावरणी जाते ही एकदेश व्रत जान॥
अहिंसादि पाँचों अणुव्रत से जाता है अविरति का भाव।
सकलदेश व्रत होता है तो जाता है प्रमाद का भाव॥
प्रत्याख्यानावरणी जाती होता तेरह विधि चारित्र।
पंचमहाव्रत पंचसमिति त्रयगुप्ति पालता परम पवित्र॥
षट् आवश्यक, द्वादशतप, पंचेन्द्रियजय, अरु पंचाचार।
अट्ठाईस मूलगुण धारूँ चौ आराधन हैं सुखकार॥
परम अहिंसा, परम सत्य व्रत, परम अचौर्य, परम ब्रह्मचर्य।
अपरिग्रहयुत पंचमहाव्रत धारण करते जिन मुनिवर्य॥
ईर्या, भाषा, समिति एषणा अरु आदाननिक्षेपण जान।
प्रतिष्ठापना समिति पाँच का पालक करता मुक्ति प्रयाण॥
मनोगुप्ति अरु वचनगुप्ति अरु कायगुप्ति त्रय से शोभित।
तेरह विध चारित्र यही पालन करते निज में मोहित॥
सामायिक चारित्र धारकर क्रमशः छेदोपस्थापन।
फिर परिहारविशुद्धि आचरण पालूँगा मैं अति पावन॥
फिर सूक्ष्मसांपराय प्राप्तकर मैं श्रेणी चढ़ जाऊँगा।
यथाख्यात चारित्र धार कैवल्यसूर्य प्रगटाऊँगा॥

यह सम्यक्चारित्र पूर्णकर मुक्ति भवन में जाता ।
सादि अनंतकाल तक चेतन निजानंद रस पाता है ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि पूर्वापरविदेहभरतैरावतस्थित चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वत-स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीरछंद

जम्बूद्वीप सुगिरि विजयार्ध जिनालय पूजे हर्षित हो ।
वृषभ चिन्ह की ध्वजा चढ़ाऊँ अंतर्मन से पुलकित हो ॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष ।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश ॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

भजन

निरखो अंग-अंग जिनवर के, जिनसे झलके शान्ति अपार ॥ टेक ॥
चरण-कमल जिनवर कहें, घूमा सब संसार ।
पर क्षण-भंगुर जगत में, निज आत्म-तत्त्व ही सार ।
यातें पद्मासन विराजे जिनवर, झलके शान्ति अपार ॥ १ ॥
हस्त-युगल जिनवर कहें, पर का करता होय ।
ऐसी मिथ्या बुद्धि से, भ्रमण-चतुर्गति होय ।
याते पद्मासन विराजे जिनवर, झलके शान्ति अपार ॥ २ ॥
लोचन-द्वय जिनवर कहें, देखा सब संसार ।
पर दुःखमय गति-चार में, ध्रुव-आत्मतत्त्व ही सार ॥ ३ ॥
अन्तर्मुख - मुद्रा अहो, आत्मतत्व दरसाय ।
जिन-दर्शन कर निज दर्शन पा, सत-गुरु-वचन सुहाय ॥
यातैं अन्तर्दृष्टि विराजें जिनवर, झलके शान्ति अपार ॥ ४ ॥

पूजन क्रमांक-७

सुदर्शनमेरु संबंधी षट कुलाचल जिनालय पूजन

स्थापना

छंद — गीतिका

षटकुलाचल गिरि सुदर्शन के महान सुभव्य हैं।
महा महिमामय जिनालय श्रृंग पर दृष्टव्य है॥
हिमवन महाहिमवान निषध, सुरुक्मि, शिखरी, नील है।
उत्तम क्षमा के भाव से पूजन करूँ गुणशील हैं॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धिषटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनप्रतिमासमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

छंद — गोपी/ रेखता

निजातमसरिता का जल आज, लिया गुणश्रेष्ठ क्षमा जिनराज।
जिनालय षटकुलाचल जय, प्रभो मिथ्या मल होवे क्षय॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षमा चन्दन की अनुपम गंध, करे प्रभु क्रोध कषाय सुमन्द।
जिनालय षटकुलाचल जय, प्रभो अविरति पर पाऊँ जय॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अखण्डित क्षमा भावतन्दुल, लहूँ अविनाशी पद निर्मल।
जिनालय षटकुलाचल जय, प्रमादों पर मैं पाऊँ जय॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदा प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निजातम तरु के क्षमा सुमन, हरें प्रभु ! मन्मथ की दुर्गन्ध।
जिनालय षटकुलाचल जय, कषायों को मैं करूँ विजय॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षमा भाव रसमय नैवेद्य, हरें प्रभु ! क्षुधा व्याधि का खेद ।
जिनालय षटकुलाचल जय, करूँ मैं केवलज्ञान उदय ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्तम क्षमा भाव की ज्योत, करे सम्यक्-चारित्र उद्योत ।
जिनालय षटकुलाचल जय, दशा अर्हन्त हो शिवमय ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

ध्यान की अग्नि, क्रोध की धूप, लखूँ निज क्षमा-भाव चिद्रूप ।
जिनालय षटकुलाचल जय, सकल योगों पर पाऊँ जय ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-जिनालयजिबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

निजातम तरु का क्षमा सुफल, करे सम्यक्-चारित्र सफल ।
जिनालय षटकुलाचल जय, करूँ मैं प्राप्त सिद्धालय ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्तम क्षमा भाव का अर्घ्य, चढ़ाकर पाऊँ पद अन्-अर्घ्य ।
जिनालय षटकुलाचल जय, मोक्षपद लूँ क्रम-क्रम निर्भय ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्घ्यावलि

चौपाई

भव्य षटकुलाचल मंदिर जय, भविजन को दायक रत्नत्रय ।
छहसौ अड़तालीस बिम्ब जय, जिनवरसम जिन-प्रतिमा जय जय ॥

दोहा

स्वर्णमयी हिमवान पर, ग्यारह कूट महान ।
एक कूट पर जिनभवन, मानों मुक्ति विहान ॥१ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-हिमवानपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रेष्ठ महाहिमवान है, रजतमयी सुविशाल।
वसुकूटों में एक पर, जिनगृह महा विशाल ॥२ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-महाहिमवानपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिन-बिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप्त स्वर्णसम वर्ण है, निषधाचल छविमान।
नवकूटों में एक पर, श्री जिनभवन प्रधान ॥३ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-निषधपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि वैडूर्य प्रसिद्ध सम, नील कुलाचल जान।
नवकूटों में एक है, जिन-चैत्यालय वान ॥४ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-नीलपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रुक्मिशिखर रजताचलं, आठ कूट सुखकार।
एक कूट पर जिनभवन, गरिमामयी अपार ॥५ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-रुक्मिपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारह कूट सुयुक्त है, शिखरी स्वर्णिम जान।
एक कूट पर जिनभवन, वन्दूँ नित्य महान ॥६ ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-शिखरीपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सोरठा

पृथ्वीकाय कमल, अचलों पर षट महाद्रह।
श्री ह्री धृति कीर्ति, बुद्धि लक्ष्मी के भवन ॥
नित्य झुकाऊँ शीश, अकृत्रिम जिनभवन को।
बिम्ब रत्नमय सर्व, पूर्ण-अर्घ्य अर्पण करूँ ॥
देते हैं सन्देश, आत्मा में है अनन्त बल।
धरूँ दिगवंर वेश, पाऊँ अनुपम ध्रुव अचल ॥

छंद – सरसी

दस योजन गहरा पद्मद्रह इसकी छटा पृथक् ।
एक सहस योजनलंबा है चौड़ा पाँच शतक ॥
पृथ्वीकायिक कमल एक योजन का गोलाकार ।
आगे द्वय द्रह दूने-दूने कमल सहित विस्तार ॥
शेष तीन द्रह का इनके सम ही जानों विस्तार ।
शुद्ध आत्मा अति विस्तृत है गुणसमुद्र भंडार ॥

छंद – तांटक

भरत हैमवत हरि विदेह रम्यक हैरण्य व ऐरावत ।
सातों क्षेत्र विभाजित करते यही षटकुलाचल पर्वत ॥
कर्म-भूमि अरू भोग-भूमियाँ जानो आगम के अनुसार ।
धर्म्र-भूमि निज आत्मद्रव्य है इसका ही लो अब आधार ॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद-प्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा

क्षमा धर्म धारी प्रभो, किया क्रोधरिपु नाश ।
बार-बार वन्दन करूँ, क्षमाभाव की आश ॥

छंद – तांटक

उत्तम क्षमा धर्म है सुख का सागर तीन लोक में सार ।
जन्म-मरण दुख का अभाव कर शीघ्र नाश करता संसार ॥
क्रोध कषाय विनाशक दुर्गति नाशक मुनियों द्वारा पूज्य ।
व्रत संयम को सफल बनाता सुगति प्रदाता है अतिपूज्य ॥
पृथ्वीकायिक, जलकायिक अरु अग्निकाय, वायुकायक ।
तथा वनस्पतिकायिक जीवों के प्रति करुणा सुख-दायक ॥
दो इन्द्रिय, त्रय, चऊ, पंचेन्द्रिय जीव असंज्ञी दया करूँ ।
नारक मानुष देव चतुर्विध त्रसथावर उर दया धरूँ ॥

सब जीवों को निजसम समझूँ सब पर क्षमाभाव राखूँ।
सब जीवों से क्षमा कराऊँ क्षमाभाव रसफल चाखूँ॥
जहाँ क्षमा है वहीं धर्म है स्वपर दया का मूल महान।
जय-जय उत्तम क्षमा धर्म की जो है जग में श्रेष्ठ प्रधान॥

ॐ ह्रीं श्री सुदर्शनमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछन्द

दिव्य षटकुलाचल के जिनगृह हमने पूजे हर्षित हो।
कमल चिन्ह की ध्वजा चढाऊँ अन्तर्मन से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण सम्पति मिले जिनेश॥

इत्याशीर्वाद:

भजन

मेरे मन मन्दिर में आन, पधारो महावीर भगवान॥ टेक॥
भगवान तुम आनन्द सरोवर, रूप तुम्हारा महा मनोहर।
निशिदिन रहे तुम्हारा ध्यान, पधारो महावीर भगवान॥ १॥
सुर किन्नर गणधर गुण गाते, योगी तेरा ध्यान लगाते।
गाते सब तेरा यश गान, पधारो महावीर भगवान॥ २॥
जो तेरी शरणागत आया, तूने उसको पार लगाया।
तुम हो दया निधि भगवान, पधारो महावीर भगवान॥ ३॥
भगत जनों के कष्ट निवारें, आप तरे हमको भी तारें।
कीजे हमको आप समान, पधारो महावीर भगवान॥ ४॥
आये हैं हम शरण तिहारी, पूजा हो स्वीकार हमारी।
तुम हो करुणा दयानिधान, पधारो महावीर भगवान॥ ५॥
रोम-रोम पर तेज तुम्हारा, भू-मण्डल तुमसे उजियारा।
रवि-शशि तुम से ज्योर्तिमान, पधारो महावीर भगवान॥ ६॥

पूजन क्रमांक-८

धातकीखंड द्वीपस्थ विजयमेरु स्थित सोलह जिनालय पूजन

स्थापना

दोहा

विजय मेरु संबंधि हैं, चैत्यालय छविमान।
सर्व अठत्तर जानिये, मंगलमयी महान॥

वीरछंद

एक लाख योजन का जम्बूद्वीप लवण समुद्र दो लाख।
इससे घिरा हुआ है चारों ओर सुरम्य जिनालय साख॥
चार लाख योजन का तत्पश्चात धातकी खंड महान।
आठ लाख योजन का कालोदधि घेरे है इसे प्रधान॥
पूर्व दिशा में विजयमेरु है सहस्र चुरासी योजनवान।
चारों वन में चार-चार जिन-चैत्यालय शाश्वत भगवान॥
इन्द्रादिक सुर देव-देवियाँ जाकर गाते प्रभु गुणगान।
विनयभाव से पूजन करके धरूँ पारिणामिक का ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकीखण्डद्वीपे विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्राननम्)।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकीखण्डद्वीपे विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनम्)।

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकीखण्डद्वीपे विजयमेरौषोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (इति सन्निधिकरणम्) पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

छंद- पदपादाकुलक (त्रोटक) चाल - जय केवलभानु कला सदनं

मैं विनय भाव का नीर भरूँ, मद पिता-भूप-मल नाश करूँ।
उत्तम मार्दव पाऊँ स्वामी, यह विनय सुनो अंतर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं...

यह विनयभाव चन्दन शीतल, माता-कुल-मद नाशे निर्मल।
उत्तम मार्दव पाऊँ स्वामी, यह विनय सुनो अंतर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं.....

मैं विनयभाव से पुंज धरूँ, मद-रूप त्याग निजरूप वरूँ।
उत्तम मार्दव पाऊँ स्वामी, यह विनय सुनो अंतर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षय पदप्राप्तये अक्षतं.....

मैं विनय सुमन चुन-चुन लाऊँ, दुर्गन्ध ज्ञान-मद विनशाऊँ।
उत्तम मार्दव पाऊँ स्वामी, यह विनय सुनो अंतर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं .....

यह विनयभाव रससिक्त चरु, प्रभुवर मैं धन-मद व्याधि हरूँ।
उत्तम मार्दव पाऊँ स्वामी, यह विनय सुनो अंतर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ...

उरज्ञान-विनय की ज्योति धरूँ, हे प्रभु बल-मद-तम त्वरित हरूँ।
उत्तम मार्दव पाऊँ स्वामी, यह विनय सुनो अंतर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ....

तप-विनय अग्नि प्रभु प्रगट करूँ, तप-मद अरि काष्ठ सुहोम करूँ।
उत्तम मार्दव पाऊँ स्वामी, यह विनय सुनो अंतर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं.....

मैं विनय वृक्ष के फल लाऊँ, प्रभुता-मद नाश सुफल पाऊँ।
उत्तम मार्दव पाऊँ स्वामी, यह विनय सुनो अंतर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं.....

अष्टांग विनय का अर्घ्य धरूँ, लूँ पद अनर्घ्य दीनता हरूँ।
उत्तम मार्दव पाऊँ स्वामी, यह विनय सुनो अंतर्यामी॥

ॐ ह्री श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....

अर्घ्यावलि

छंद-नागराज (चामर)

विजयमेरु भद्रशाल वन महान जानिये।
भूमि पर चार दिशि चार भवन मानिये॥
अष्ट द्रव्य अर्घ्य बना विनय से चढ़ाइये।
मृदुल भावमय स्वभाव-भाव नित्य ध्याइये॥

चौपई

पूर्व दिशा चैत्यालय एक, ध्वजा चढ़ाऊँ मैं सविवेक।
निश्चय-नय ही है भूतार्थ, नय व्यवहार नहीं सत्यार्थ ॥१ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ भद्रशालवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दक्षिण दिशि जिन-भवन महान, ध्वजा चढ़ाऊँ धर निज ध्यान।
दो प्रकार है नय व्यवहार, असद्भूत सद्भूत विचार ॥२ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ भद्रशालवनस्थित-दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पश्चिम दिशा जिनालय सिद्ध, ध्वजा चढ़ाऊँ ध्याऊँ सिद्ध।
है व्यवहार पूर्णतः हेय, मुक्तिमार्ग में नहीं उपेय ॥३ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ भद्रशालवनस्थित पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं .....

सिद्धकूट उत्तर दिशि जान, ध्वजा चढ़ाय बनूँ भगवान।
निश्चय उपादेय विख्यात, है परमार्थभूत प्रख्यात ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ भद्रशालवनस्थित उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

छंद – तांटक

भद्रशाल के ऊपर पाँचशतक योजन पर नंदनवन।
चार दिशा में चार जिनालय चलती यहाँ स्वभाव पवन ॥
जिनवर की वाणी को सुनकर मिट जाता है चिर-विभ्रम।
स्याद्वाद गंगा में सप्तनयों की लहरें अति उत्तम ॥

चौपाई

पूरबदिशि जिन-भवन सुजानो, निज-स्वभाव ही परम प्रमानो।
नैगमनय सापेक्ष बखाना, अनिष्पन्न को निष्पन्न माना ॥५ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ नन्दनवनस्थितपर्वूदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दक्षिण दिशा जिनालय मनहर, मानो सम्यग्दर्शन का घर।
संग्रहनय करता सब संग्रह, वन्दूँ सर्व जिनेन्द्र सुनिष्पृह ॥६ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ नन्दनवनस्थित दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पश्चिम दिशि का जिन-चैत्यालय, वीतराग जिन मुद्रा-आलय।
विधिपूर्वक व्यवहार कथन वर, वन्दूँ प्रतिपादक सब जिनवर ॥७ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ नन्दनवनस्थित पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

उत्तर दिशि जिन-भवन सुहाना। आत्मसिद्धि फल सबने जाना।
वर्तमानग्राही ऋजूसूत्रा। वन्दूँ जिनवर तज उत्सूत्रा ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ नन्दनवनस्थित उत्तरदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

वीरछंद

साढे पचपन सहस्त्र योजन ऊपर वन सौमनस महान।
पूरब दक्षिण पश्चिम उत्तर जिनगृह हैं स्वर्णिम छविमान॥
भाव सहित मैं श्री जिनवर को वन्दन करने जाऊँगा।
भव्य अकृत्रिम चैत्यालय पर मंगल ध्वजा चढ़ाऊँगा॥

छंद - हरिगीतिका

सौमनस वन के जिनालय पूर्व को पूजूँ सदा।
भक्तिभाव अपूर्व उर धर गीत गाऊँ सर्वदा॥
शब्दनय का ज्ञान कर निर्दोष हो मेरा कथन।
भेद और अभेद को जानूँ धरूँ उर जिन वचन ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ सौमनसवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दिशा दक्षिण जिनभवन की सुछवि नित निरखा करूँ।
कौन निज है, कौन पर है प्रतिसमय परखा करूँ॥
समभिरूढ सुनय पिछानूँ भेदरूप ग्रहण करूँ।
अर्थ नाना उलंघन कर एक अर्थ ग्रहण करूँ ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ सौमनवसवनस्थितदक्षिणदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दिशा पश्चिम जिनालय में एक-शत-वसु बिम्ब जिन।
भावना शुद्धात्म की भा कर्म नाशूँ एक दिन॥
सुनय एवं भूतनय है, मात्र भावों का ग्रहण।
जिस क्रियामय परिणमित हो अर्थ, उसका ही वरण ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ सौमनसवनस्थितपश्चिमदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दिशा उत्तर चैत्यालय को करूँ शत-शत प्रणाम।
निजालंबन भाव द्वारा प्राप्त करलूँ मुक्ति धाम॥
भेद हैं श्रुतज्ञान के नय, इन्हें सम्यक् जानिये।
एक निश्चयभूत शुद्ध पदार्थ निज पहचानिये ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ सौमनसवनस्थित उत्तरदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

वीरछंद

अट्ठाईस सहस योजन ऊपर पांडुकवन महाविशाल।
तीर्थंकर के जन्मोत्सव से गर्वित इसका ऊँचा भाल॥
भरतक्षेत्र के तीर्थंकर का पांडुक-शिला सदा अभिषेक।
ऐरावत के तीर्थंकर का रक्तकंबला पर अभिषेक॥
पूर्व विदेह तीर्थंकर का रक्त-शिला होता अभिषेक।
अपर विदेह तीर्थंकर का पांडुकंबला हो अभिषेक॥
पांडुक वन की विदिशाओं में चारों शिला सुशोभित हैं।
क्षीरोदधि जल से होता अभिषेक इन्द्र-सुर मोहित हैं॥

छंद - हरिगीतिका

पूर्व दिशि में शिला पांडुक निकट ही जिनभवन है।
दे रहा संदेश जग को आत्मा सुख-सदन है॥
चार हैं निक्षेप इनका ज्ञान करना चाहिए।
नाम जो भी रखा हो निरपेक्ष-गुण पहचानिये॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ पाण्डुकवनस्थितपूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दिशा दक्षिण जिनालय के गीत जग में गूँजते।
इन्द्र सुर नर साधु विद्याधर सदा ही पूजते॥
धातु या पाषाण आदिक में हुई जो कल्पना।
तद्-अतद् आकार जो निक्षेप वह स्थापना॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ पाण्डुकवनस्थित दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

दिशा पश्चिम जिनालय की ध्वजाएँ मन मोहती।
स्वर्णकलशों की छटायें उच्च नभ में सोहती॥
पर्याय भावी भूत को कर मुख्य कहना वर्तमान।
युवराज को भी नृपति कहना द्रव्य यह निक्षेप जान॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ पाण्डुकवनस्थित पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं...

दिशा उत्तर चैत्यालय अकृत्रिम शोभायमान।
प्राण चारों से रहित यह आत्मा चैतन्यप्राण॥

द्रव्य की पर्याय जो हो वर्तमान वही कहे।
ध्याउँ मैं निज भाव चेतन जो सदा मुझमें रहे ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ पाण्डुकवनस्थित उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पूर्णार्घ्य

छंद – हरिगीतिका

वस्तु का एकाँश जाने नय कहाता है सही।
नाम द्रव्यार्थिक तथा पर्यायार्थिक है सही॥
मुख्यता जो द्रव्य को कहता विषय द्रव्यार्थिक।
पर्याय को जो विषय करता वही पर्यायार्थिक॥
सर्वदेशों को ग्रहण करता प्रमाण सुजान के।
प्रत्यक्ष और परोक्ष जानो भेद भव्य प्रमाण के॥
विजय सुरगिरि जिनालय सोलह सदा वन्दन करूँ।
पूर्ण अर्घ्य समर्पयामि सुनय प्रमाण हृदय धरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

मार्दव पति जिनराज को, वन्दन करूँ त्रिकाल।
जागृत मार्दव भाव कर, पाऊँ पद सुविशाल॥

छन्द - ताटंक

उत्तम मार्दव धर्म ज्ञानमय वसु मद रहित परम सुखकार।
मानकषाय नष्ट करता है विनय गुणों का है भण्डार॥
विनय बिना तत्त्वों का हो सकता न कभी सम्यक्श्रद्धान।
दर्शन ज्ञान चरित्र विनय तप बिना न होता सम्यग्ज्ञान॥
पंच परम परमेष्ठी चैत्यालय श्रीजिन चैत्य तथा जिनधर्म।
जिनवाणी को विनय सहित वन्दूँ हो जाऊँ मैं निष्कर्म॥
ऊर्ध मध्य अरु अधोलोक के कृत्रिम अकृत्रिम जिनबिम्ब।
सिद्धक्षेत्र सब विनय पूर्वक वन्दूँ देखूँ निज प्रतिबिम्ब॥

देव-शास्त्र-गुरु विनयभाव से नमन करूँ हो मार्दव युक्त।
सिद्धस्वपद की प्राप्ति करूँ मैं परभावों से होकर मुक्त॥
जहाँ मार्दव वहीं धर्म है वहीं मोक्ष नगरी का द्वार।
उत्तम मार्दव धर्म हमारा विनय भाव की जय-जयकार॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछन्द

विजयमेरु के सोलह जिनगृह हमने पूजे हर्षित हो।
मालाचिन्ह विभूषित ध्वजा चढ़ाऊँ स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण सम्पति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

ऊँचे ऊँचे शिखरों वाला रे, यह तीरथ हमारा।
तीरथ हमारा हमें लागे प्यारा॥टेक॥
श्री जिनवर से भेंट करावें।
जग को मुक्ति मार्ग दिखावें॥
मोह का नाश करावे रे यह तीरथ हमारा॥१॥
शुद्धातम से प्रीति लगावे।
जड़-चेतन को भिन्न बतावे॥
भेद-विज्ञान करावे रे यह तीरथ हमारा॥२॥

पूजन क्रमांक-९

विजयमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – सरसी

खंड धातकी दिशा पूर्व में विजयमेरु श्रीमंत।
इससे संबंधित गरिमामय चार श्रेष्ठ गजदंत॥
शाश्वत हैं जिनगेह अकृत्रिम अनुपम शोभावंत।
एक-एक में एक-शतक-वसु प्रतिमाएँ अरहंत॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिन प्रतिमासमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।)

छंद – त्रोटक चाल – जय केवलाभानु कला सदनं

उत्तम आर्जव जल धार करूँ, वक्रता मैल परिहार करूँ।
शुद्धात्मतत्व का ध्यान करूँ, गजदन्तों पर जयगान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्पण है सरल भाव चन्दन, करता स्वभाव का अभिनन्दन।
शुद्धात्मतत्व का ध्यान करूँ, गजदन्तों पर जयगान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं सरल भाव अक्षत लाया, अपना अक्षयपद अपनाया।
शुद्धात्मतत्व का ध्यान करूँ, गजदन्तों पर जयगान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं सरल सुमन प्रभु चरण धरूँ, माया कुशील का नाश करूँ।
शुद्धात्मतत्व का ध्यान करूँ, गजदन्तों पर जयगान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं सरलभाव चरु भेंट करूँ, माया उदराग्नि विनाश करूँ।
शुद्धात्मतत्व का ध्यान करूँ, गजदन्तों पर जयगान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम आर्जव की ज्योति जले, माया-कषाय-तम त्वरित घुले।
शुद्धात्मतत्व का ध्यान करूँ, गजदन्तों पर जयगान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्रुवधाम-ध्यानमय यज्ञ करूँ, अब कपट काष्ठ को होम करूँ।
शुद्धात्मतत्व का ध्यान करूँ, गजदन्तों पर जयगान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

यह धर्म-वृक्ष का आर्जव-फल, निश्चित ही पाऊँगा शिवफल।
शुद्धात्मतत्व का ध्यान करूँ, गजदन्तों पर जयगान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह आजर्व अर्घ्य सरलतम है, पदवी अनर्घ्य सर्वोत्तम है।
शुद्धात्मतत्व का ध्यान करूँ, गजदन्तों पर जयगान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

वीरछंद

विजयमेरु आग्नेय दिशा में रजत सौमनस है गजदंत।
सप्तकूट में एक कूट पर जिन-चैत्यालय महिमावंत॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरोःआग्नेयविदिशि सौमनसगजदन्तपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु नैऋत्य दिशा में विद्युत्प्रभ सुन्दर गजदंत।
स्वर्णिम नव कूटों में इक पर जिन-चैत्यालय गरिमावंत ॥२ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरोःनैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु वायव्य कोण में गंधमादनाचल गजदंत।
स्वर्णिम सप्त कूट में इस पर चैत्यालय है श्री अरहंत ॥३ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरोःवायव्यविदिशि गन्धमादनाचलगजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयमेरु ईशान कोण में माल्यवान अनुपम गजदंत।
मणि वैडूर्यमयी नव कूटों में इक पर जिनगृह भगवन्त ॥४ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरोःईशानविदिशि माल्यवानगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद – ताटंक

रजत सौमनस स्वर्णिम विद्युत्प्रभ अरु गंधमादनाचल।
माल्यवान गजदंत चार हैं इन्द्रादिक वंदित सुविमल ॥
चार शतक अरु अड़तालीस जिनेन्द्र-बिम्ब से हैं संयुक्त।
जिन-दर्शन से निज-दर्शन कर होऊँ निज वैभव से युक्त ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरोःचतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

परम सरलता धार कर, आप हुए जिनराज।
आर्जव गुण धारण करूँ, पाऊँ निजपद-राज ॥

छन्द – ताटंक

उत्तम आर्जव धर्म कुटिलता से विरहित ऋजुता से पूर्ण।
निज आतम का परम मित्र है, करता है माया का चूर्ण ॥

लेशमात्र भी मायाचारी कुगति प्रदायक अति दुखकार।
सरल भाव चेतन गुण धारी टंकोत्कीर्ण महा-सुखकार॥
छ्यालीस गुण युत अरिहन्त, सिद्धशिलापति सिद्ध महान।
आचार्योपाध्याय, साधु सब परमेष्ठी ऋजुता की खान॥
जिनवाणी जिनधर्म सिद्ध भू अतिशय क्षेत्र महान प्रसिद्ध।
ऋजुतापूर्वक नमन करूँ मैं शुभभावों से होकर विद्य॥
कृतिम अकृत्रिम चैत्यालय, जिनचैत्य सरलता से ध्याऊँ।
सकल पूज्य स्थान नमन कर निश्छलभाव हृदय लाऊँ॥
शिवमय शाश्वत मोक्ष प्रदाता मंगलमय अनमोल परम।
उत्तम आर्जव धर्म आत्म का अभयरूप निश्चल अनुपम॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरो: चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछन्द

विजयमेरुयुत गजदन्तों के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
सिंह चिन्ह की ध्वजा चढ़ाऊँ अन्तर्मन से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण सम्पति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

करलो इन्द्रध्वज का पाठ आई मंगल घड़ी।
आई मंगल घड़ी आई सुखद घड़ी॥ टेक॥
मध्यलोक के चारशतक अट्ठावन जिनगृह पूजो।
सभी अकृतिम शाश्वत जिन-चैत्यालय नित पूजो॥१॥
विविध चिन्ह की ध्वजा चढ़ाओ गाओ मंगलचार।
इस विधान का उत्तम फल है पुण्य अटूट अपार॥२॥
इन्द्रों सम अंतरमन सज्जित करके लो वसु द्रव्य।
निज भावों की ध्वजा चढ़ाओ हो जावोगे धन्य॥३॥

पूजन क्रमांक-१०

विजयमेरु संबंधी धातकी एवं शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – ताटंक

खंडधातकी वृक्ष-धातकी से ही विश्व प्रसिद्ध हुआ।
भेद-ज्ञान बिन कोई भी प्राणी न आज तक सिद्ध हुआ॥
विजयमेरु ईशान और नैऋत्य कोण, मन मोहित है।
उत्तरकुरु में धातकि, देवकुरु में शाल्मलि शोभित है॥
जलफलादि वसुद्रव्य सजाकर पूजन करूँ हृदय हर्षाय।
निज चैतन्यराज दर्शन कर पाऊँ निज अनुभव सुखदाय॥
दोनों तरु की दो सौ सोलह प्रतिमाओं को नमन करूँ।
परम सत्य की प्राप्ति हेतु मिथ्यात्व मोह को वमन करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्। (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

चौपई

सत्य धर्म मय नीर चढ़ाय, हित-मित-प्रिय बोलूँ सुखदाय।
धातकी-शाल्मलि वृक्ष निहार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म चन्दन सुप्रताप, नाश करूँ भव-ज्वर का ताप।
धातकि-शाल्मलि वृक्ष निहार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म अक्षत निजरूप, पाऊँ अक्षय पद शिवभूप।
धातकी-शाल्मलि वृक्ष निहार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म के सुमन चढ़ाय, काम व्याधि परिपूर्ण नशाय।
धातकि-शाल्मलि वृक्ष निहार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म नैवेद्य सजाय, पाऊँ महा तृप्ति सुखदाय।
धातकि-शाल्मलि वृक्ष निहार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म के दीप उजार, ज्ञान ज्योति जगमग तमहार।
धातकि शाल्मलि वृक्ष निहार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म की धूप चढ़ाय, अष्टकर्म अरि काष्ठ जलाय।
धातकि-शाल्मलि वृक्ष निहार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म के फल शिव रूप, पाऊँ मोक्ष सुफल चिद्रूप।
धातकि-शाल्मलि वृक्ष निहार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म के अर्घ्य बनाय, पद अनर्घ्य अविकल प्रगटाय।
धातकि शाल्मलि वृक्ष निहार, जिनवर महिमा अपरम्पार॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

दोहा

वृक्ष धातकी बिम्ब-जिन, एक शतक वसु दिव्य।
ध्वजा चढाऊँ भाव से, जिन-मन्दिर पर भव्य ॥१ ॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकीखण्डद्वीपस्थ विजयमेरुसम्बंन्धि-धातकीवृक्षस्थित-जिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनगृह पूजूँ सदा, शाल्मलि वृक्ष प्रसिद्ध।
ध्वजा चढ़ाऊँ भाव से, पाऊँ स्व-पद प्रसिद्ध ॥२ ॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकीखण्डद्वीपस्थ-विजयमेरुसम्बन्धि-शाल्मलिवृक्षस्थित-जिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

चौपई

मेरु-विजय धातकि तरु जान। जिनगृह दिशि ईशान प्रधान ॥
शुद्ध भाव के अर्घ्य बनाय। आत्मसिद्धि का करूँ उपाय ॥
मेरु-विजय शाल्मलि तरु जान। हैं नैऋत्य दिशा भगवान ॥
समता भाव महान जगाय। पूजूँ चैत्यालय शिवदाय ॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकीखण्डद्वीपस्थ-विजयमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

परम सत्य का ध्यान धर, उत्तम सत्य प्रकाश।
सत् पथ दरशाया प्रभो, पाया मुक्ति निवास ॥

चौपाई

उत्तम सत्य धर्म हितकारी, परमसत्य आश्रित सुखकारी।
वचन गुप्ति के धारी मुनिवर, मुक्ति सदन पा होते जिनवर ॥
सब धर्मों में यही प्रधाना, भव तम नाशक सूर्य समाना।
सुगति प्रदायक मंगल दाता, भव सागर से भवि तिर जाता ॥

जनपद-सत्य हृदय में धारूँ, सम्यक्-सत्य सदा स्वीकारूँ।
स्थापना-सत्य भी जानूँ, नाम सत्य निर्भय पहचानूँ॥
रूप-सत्य से सबको निरखूँ, सत्य-अपेक्षा ही मैं परखूँ।
यह व्यवहार-सत्य सुखकारी, संभावना-सत्य दुखहारी॥
भाव-सत्य निज अन्तर लाऊँ, उपमा-सत्य जान हर्षाऊँ।
क्रोध-अतिचार क्षमा से नाशूँ, लोभ अतिचार असत्य विनाशूँ॥
भय अतिचार पूर्ण निरवारूँ, हास्यातिचार न उर में धारूँ।
जिन आज्ञा उल्लंघन त्यागूँ, यह अतिचार न उर में पालूँ॥
सत्य धर्म युत अणुव्रत धारूँ, सत्य महाव्रत मैं स्वीकारूँ।
उत्तम सत्य धर्म सुखकारी, त्रिभुवनपद दाता शिवकारी॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकीखण्डद्वीपस्थ विजयमेरुसम्बन्धी-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

खंड धातकी-शाल्मलि तरु गृह हमने पूजे हर्षित हो।
अंशुक चिन्ह विभूषित ध्वजा चढ़ाऊँ स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-सम्पति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

आयो आयो रे हमारो बड़ो भाग, कि हम आए पूजन को।
पूजन को प्रभु दर्शन को, पावन प्रभु-पद पर्शन को॥ टेक॥
जिनवर की अर्न्तमुख मुद्रा आतम दर्श कराती।
मोह महामल प्रक्षालन कर शुद्ध स्वरूप दिखाती॥१॥
भव्य अकृत्रिम चैत्यालय की जग में शेभा भारी।
मंगल ध्वज ले सुरपति आए शोभा जिसकी न्यारी॥२॥
अनेकान्तमय वस्तु समझ जिन शासन ध्वज लहरावें।
स्याद्वाद शैली से प्रभुवर मुक्ति मार्ग समझावें॥३॥

पूजन क्रमांक-११

विजयमेरु संबंधी षोडश वक्षार जिनालय पूजन

स्थापना

छन्द – मरहट्ठामाधवी

खंड-धातकी विजयमेरु वक्षार सु सोलह जानिये।
पूरब और अपर विदेह में स्वर्णमयी पहचानिये॥
तीनों काल वर्तता चौथा काल सदैव विदेह में।
सतरह शतक तथा अठ्ठाइस प्रतिमा सब जिनगेह में॥
हे जिन ! आज पधारो प्रभुवर, मेरे निर्मल भाव में।
मेरे उर में सदा विराजो, रमूँ सदा निज भाव में॥
प्रभु की पूजन रचूँ आज मैं स्याद्वाद-ध्वज हाथ ले।
निजस्वभाव में लीन रहूँ नित शौचधर्म का साथ ले॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वधातकीखंडद्वीपे विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वपश्चिमविदेहक्षेत्रस्थषोडश-वक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

चौपाई

शौच धर्म जल शिव सुखकारी, मिथ्यादर्शन मल परिहारी।
विजयमेरु वक्षार जिनालय, वन्दन कर पाऊँ सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शौच धर्म चन्दन शिवदायी, भव-आताप तुरत नश जाई।
विजय मेरु वक्षार जिनालय, वन्दन कर पाऊँ सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शौच धर्म अक्षत शुचिरूपा, प्राप्त करूँ शुद्धात्म स्वरूपा।
विजयमेरु वक्षार जिनालय, वन्दन कर पाऊँ सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

शौच धर्ममय पुष्प सुगंधी, काम व्यथा हो जाती ठंडी।
विजयमेरु वक्षार जिनालय, वन्दन कर पाऊँ सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शौच धर्म चरु दिव्य महाना, क्षुधा रोग नाशक गुणवाना।
विजयमेरु वक्षार जिनालय, वन्दन कर पाऊँ सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शौच धर्म के दीप संजोए, क्षय अज्ञान मोह तम होवे।
विजयमेरु वक्षार जिनालय, वन्दन कर पाऊँ सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शौच धर्म की धूप अनूपम, अष्टकर्म क्षय के अनुरूपम्।
विजयमेरु वक्षार जिनालय, वन्दन कर पाऊँ सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शौच धर्म फल महा मनोहर, प्रगट मुक्तिफल होता सुखकर।
विजयमेरु वक्षार जिनालय, वन्दन कर पाऊँ सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शौच धर्म के अर्घ्य अपारा, पद-अनर्घ्य दाता अविकारा।
विजयमेरु वक्षार जिनालय, वन्दन कर पाऊँ सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

वीरछंद

भद्रशाल वेदी उत्तर तट सीता पूर्व-विदेह प्रसिद्ध।
चित्रकूट वक्षार मनोहर यहाँ विराजे शाश्वत सिद्ध॥
रत्न-बिम्ब इक-शत-वसु पूजूँ श्री जिनवर गुण गाऊँगा।
स्याद्वादमय ध्वजा चढाऊँ अनेकान्त को पाऊँगा॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता-उत्तर पद्मकूट वक्षार विदेह-पूर्व में मान।
जिन-चैत्यालय पूजन करके करूँ नाथ अपना कल्याण॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता-उत्तर नलिनकूट वक्षार विदेह-पूर्व में जान।
जिनगृह पूजूँ निज महिमा पा कर्माष्टक करदूँ अवसान॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता-उत्तर एक शैल वक्षार विदेह-पूर्व छविमान।
पूजूँ मैं जिन-भवन शाश्वत पाऊँ स्व-पर भेद-विज्ञान॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे एकशैलवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता-दक्षिण पूर्व-विदेह सु देवारण्य वेदि दृष्टव्य॥
चित्रकूट वक्षार मनोरम जिनगृह पूजूँ अद्भुत दिव्य॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे त्रिकूटवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैश्रवण वक्षार नदी सीता-दक्षिण रमणीक महान।
जिनगृह वन्दूँ उपादान निज जगा करूँ अपना कल्याण॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतासरिदक्षिणतटे वैश्रवणवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है अंजन वक्षार सुहाना सीता-दक्षिण जगत प्रसिद्ध।
पूजूँ मैं जिन-भवन अकृत्रिम एक दिवस हो जाऊँ सिद्ध ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतासरितादक्षिणतटे अंजनवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुपम अंजनात्मा है वक्षार नदी सीता दक्षिण।
पूजूँ मैं जिन-चैत्यालय को निजका ध्यान करूँ प्रतिक्षण ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतासरितादक्षिणतटे अंजनात्मावक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है पश्चिम-विदेह सीतोदा-दक्षिण श्रद्धावान महान।
चारकूट में एक कूट पर श्री जिन-भवन मनोहर जान ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदासरितादक्षिणतटे श्रद्धावानवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजटावान स्वर्णवक्षार नदी सीतोदा-दक्षिण तट।
चारकूट में सिद्धकूट इक पूजूँ शुद्ध करूँ निजघट ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदासरितादक्षिणतटे विजटावानवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशीविष वक्षार स्वर्णमय सीतोदा-दक्षिण तट मान।
भाव सहित पूजूँ सदैव ही सिद्धायतन महान महान ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदासरितादक्षिणतटे आशीविषवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है वक्षार सुखावह अनुपम सिद्धायतन महान विशाल।
मिथ्याभ्रम आवरण हटाऊँ प्रभु निज मूर्ति उजाल-उजाल ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानद्युत्तरतटे-सुखावहवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है विदेह-पश्चिम सीतोदा-उत्तर वेदी देवारण्य।
चंद्रमाल वक्षाररम्य अतिपूजन कर हो जाऊँ धन्य ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे चन्द्रमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्यमाल वक्षार जिनालय सिद्धकूट शोभाशाली।
समाधानकारी स्वज्ञान है भव-समुद्र में बलशाली ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नागमाल वक्षार स्वर्णमय पूजूँ भाव, द्रव्य ले आज।
शाश्वत जिन-मंदिर में इक-शत-वसु प्रतिमायें रहीं विराज ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानद्युत्तरतटे नागमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवमाल वक्षार सोलवाँ सिद्धकूट शोभित सुविशाल।
इन्द्रादिक वन्दन करते हैं मैं भी सदा झुकाऊँ भाल॥
रत्नबिम्ब इक-शत-वसु पूजूँ श्री जिनवर गुण गाऊँगा।
स्याद्वाद-नय ध्वजा चढ़ाऊँ अनेकान्त को पाऊँगा ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानद्युत्तरतटे देवमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद - इन्द्रवज्रा

पूजूँ सदा ही वक्षार सोलह, ध्यानाग्नि में दूँ वसु कर्म-रज दह।
शाश्वत स्वभावी निज आत्मा है, परिपूर्ण सुखमय परमात्मा है॥
स्वयं से प्रवाहित चैतन्यधारा, झलकते है जिसमें विविध ज्ञेयाकारा।
रहे भिन्न ज्ञेयों से चित् निराकारा, त्रिकाली निजातम जिसमें निहारा॥
स्वयं ध्यान ध्याता स्वयं ध्येय रूपं, चिदानन्द चैतन्य चिन्मय अनूपं।
हुआ धन्य पाकर तुम्हें जिनराजं, शरण ली अहो आज चैतन्यराजं॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरूसम्बन्धि-पूर्वपश्चिमविदेहस्थ-सीतोदानद्युत्तरतटेषोडशवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

निर्मल निज चैतन्य में, लीन हुए भगवान।
शौच धर्म धारी प्रभो, गुण अनन्त की खान॥

वीरछन्द

उत्तम शौच धर्म सुखकारी मन वच काया करता शुद्ध।
लोभ कषाय नाश कर देता समकित होता परम विशुद्ध॥
ऋद्धि सिद्धि का लोभ न किंचित् इसके कारण हो पाता।
जो सन्तोषाम्रृत पीता है वही आत्मा को ध्याता॥

षटलेश्या की सकल अशुचिता त्यागूँ निज शुचिता पाऊँ।
षटकायिक जीवों के प्रति अति निर्मल भाव हृदय लाऊँ॥
देव चक्रवर्ती नारायण कामदेव के भोग अशुचि।
भव के भोग अशुचि मय त्यागूँ जागें उर में लेश न रुचि॥

तन-मन-धन, बनिता, सुत, भ्राता, मित्र, बन्धु, परिजन का राग।
पंचेन्द्रिय सम्बन्धी भोगों की दूँ सर्व अशुचिता त्याग॥
शौच धर्म पावन मंगलमय से हो जाता है निर्वाण।
उत्तम शौच धर्म ही जग में करता है सबका कल्याण॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वपश्चिमविदेहस्थ षोडशवक्षारस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछन्द

पूर्वधातकी वक्षारों के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
गरुड़ चिन्ह की ध्वजा चढ़ाऊँ अन्तर्मन से पुलकित हो।
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-सम्पति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक-१२

विजयमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – सरसी

विजयमेरु से सम्बन्धित है पूर्व-विदेह प्रधान।
विजयमेरु संबंधी है पश्चिमी विदेह महान॥
सोलह-सोलह रजताचल विजयार्ध सुनाम पवित्र।
भरतैरावत के दो रजताचल अभिराम सचित्र॥
इन सब पर चौंतीस अकृत्रिम हैं पवित्र जिनधाम।
एक-एक पर एक जिनालय नित प्रति करूँ प्रणाम॥
निज चैतन्य-चंद्रिका निरखूँ जागृत हो पुरुषार्थ।
भावपूर्वक करूँ वन्दना जय जिनवर विजयार्ध॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

छंद – रेखता/गोपी

भाव संयम जल लाऊँगा, राग पर्शन[१] जय पाऊँगा।
सुगिरि विजयार्ध जिनवर जय, प्रभो मिथ्यात्व कर दूँ क्षय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुसंयम गंधमय चन्दन, हरूँ रसना का अवलम्बन।
सुगिरि विजयार्ध जिनवर जय, प्रभो अविरति पर पाऊँ जय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

भाव संयम अखय तन्दुल, गन्ध वान्छा न हो बिलकुल।
सुगिरि विजयार्ध जिनवर जय, प्रमादों पर मैं पाऊँ जय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

---

१. पर्शन = स्पर्शन इन्द्रिय

भावसंयम सुमन की माल, वर्ण लिप्सा न हो विकराल।
सुगिरि विजयार्ध जिनवर जय, कषायों को करूँ मैं क्षय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशत् विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भावसंयम के चरु की आश, विषय कर्णेन्द्रिय लोभ विनाश।
सुगिरि विजयार्ध जिनवर जय, योगों पर मैं पाऊँ विजय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशत् विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भावसंयम का दीप प्रकाश, करूँ प्राणी-हिंसा तम नाश।
सुगिरि विजयार्ध जिनवर जय, अहिंसा सत्य मंगलमय॥

ॐ ह्री श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशत् विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

भाव संयम की अग्नि प्रजाल, उभयमन का नाशूँ जंजाल।
सुगिरि विजयार्ध जिनवर जय, कर्म विरहित बनूँ निर्भय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशत्-विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भावसंयम सुफल रसमय, पराश्रित-ज्ञान भी हो क्षय।
सुगिरि विजयार्ध जिनवर जय, अतिन्द्रिय ब्रह्म में हो लय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशत्-विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

करुँ अर्पण संयम का अर्घ्य, निजाश्रित भाव हो अन-अर्घ्य।
सुगिरि विजयार्ध जिनवर जय, परिग्रह त्याग हो शिवमय॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशत्-विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

चौपई

विजय-मेरु के पूर्व-विदेह, अरु पश्चिम-विदेह जिनगेह।
सोलह-सोलह पर्वत जान, रूपाचल विजयार्ध महान॥

दक्षिण एक भरत है जान , इक ऐरावत उत्तर मान।
ये विजयार्ध कहे चौंतीस , वन्दूँ नाथ अर्धनारीश ॥
इक-इक गिरि पर नव-नव कूट , नव-नव में इक सिद्ध सुकूट।
सिद्धकूट जिनगृह भगवंत। इक-शत-वसु प्रतिमा अरहंत ॥
तीन-सहस छह-शतक सुजान , तथा बहत्तर जिन-भगवान।
पृथक-पृथक पद अर्घ्य चढ़ाय , वन्दूँ भाव सहित चित लाय ॥

दोहा

मनहर क्षेत्र विदेह है, सुन्दर महिमामंड।
निर्मल सरित प्रवाह से, होते हैं छह खंड ॥
नाम राजधानी सहित, इन देशों के नाम।
यथाशक्ति वर्णन करूँ, वन्दूँ जिनगृह धाम ॥

छन्द – अर्धरोला

कच्छादेश मनोहर क्षेमानगरी जाऊँ।
रजताचल के शीष श्री जिन-मंदिर ध्याऊँ ॥१ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छादेशे विजयार्धपर्वत-स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुकच्छा क्षेमापुरि नगरी अतिसुन्दर।
है विजयार्ध महान जिनालय पावन मनहर ॥२ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशे विजयार्ध-पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नगर अरिष्टापुरी महाकच्छा अति मनहर।
रजताचल पर इन्द्र नमन करते श्री जिनवर ॥३ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटेमहाकच्छादेशे विजयार्धपर्वत-स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नगर अरिष्टपुरी कच्छकावति अति सुन्दर।
रूपाचलके शीश जिनालय शाश्वत मनहर ॥४ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आवर्ता के मध्य सु खडगा नगरी शोभित।
रजताचल जिनगेह देख इन्द्रादिक मोहित ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटेआवर्तादेशे विजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश लांगलावर्ता नगरी है मंजूषा।
गिरि विजयार्ध सुगेह नमन करती नित ऊषा ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटेलांगलावर्तादेशेविजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश पुष्कलामध्य श्रेष्ठ औषध नगरी है।
सिद्धकूट वैताढ्य ज्योति जग में बिखरी है ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्यत्तरतटेपुष्कलादेशे विजयार्धपर्वत स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुण्डरीकिणी नगर पुष्कलावती देश में।
जिनपूजन फल प्राप्त करूँ निर्ग्रन्थ वेश में ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटेपुष्कलावतीदेशे विजयार्ध पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

वत्सादेश विदेह सुसीमा नगरी जाऊँ।
गिरिविजयार्ध जिनालय को नित शीश झुकाऊँ ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिदक्षिणतटेवत्सादेशे विजयार्धपर्वत स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देशसुवत्सा क्षेत्रपुरी कुन्डला सु जाऊँ।
गिरि विजयार्ध जिनालय सादर शीश झुकाऊँ ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिदक्षिणतटेसुवत्सादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देशमहावत्सा अपराजित शुभ नगरी है।
रजताचलजिनधाम ज्योति स्वर्णिम सगरीहै ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिदक्षिणतटेमहावत्सादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश वत्सकावती प्रियंकापुरी मनोहर।
सिद्धकूट विजयार्ध जिनालय शोभा सुन्दर ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिदक्षिणतटेवत्साकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रम्यादेश विदेह सु अंकावती नगर है।
सिद्धकूट विजयार्ध निकट ही मोक्ष डगर है ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिदक्षिणतटेरम्यादेशेविजयार्ध-पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश सुरम्या मध्य नगर पद्मावति सुन्दर।
पूजूँ गिरि रजताभ जगत में शाश्वत सुखकर ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिदक्षिणतटेसुरम्यादेशे विजयार्ध-पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

है रमणीया देश मनोहर शुभापुरी है।
शुद्ध स्वभाव अपूर्व मुक्ति की यही धुरी है ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिदक्षिणतटेरमणीयादेशे विजयार्ध-पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

देश मंगलावती रत्न संचयापुरी है।
रूपाचल अभिवंद्य ज्योति अनुपम बिखरी है ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतासरिदक्षिणतटेमंगलावतीदेशेविजयार्ध-पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा

विजयमेरु पश्चिम दिशा, हैं विदेह विजयार्ध।
सोलह पर सोलह भवन, वन्दूँ आत्म हितार्थ॥

छंद – शशिकला

परम विमल जिन-मुनि जीवन है।
सहज सरल निज अंतरमन है॥
शिवम्-शिवम् ही ज्ञानगगन है।
परम-मोक्ष ही सौख्य सदन है॥

सोरठा

अश्वपुरी अभिराम, देश, पद्मा मध्य में।
वन्दूँ जिन भगवान, चैत्यालय विजयार्ध के ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मादेशे विजयार्ध पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सिंहपुरी रजधानि, देश सुपद्मा मध्य में।
हैं जिनबिम्ब महान, चैत्यालय विजयार्ध के ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटेसुपद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तयेअर्घ्यं नि. स्वाहा।

है वैताढ्य महान, देश महापद्मा अचल।
जिनगृह शोभावान, महापुरी नगरा निकट ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटेमहापद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

रजताचल सुललाम, देश पद्मकावती का।
विजयापुरी प्रसिद्ध, जिनगृह वन्दूँ भाव से ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटेपद्मकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....

रजताचल के शीष, शंखादेश विदेह में।
अरजा आर्य सुखंड, भावसहित प्रभु पद भजूँ ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटेशंखादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

गिरि विजयार्ध सुरम्य, नलिना देश विदेहमें।
विजयानगरी धाम, निकट जिनालय वन्दिये ॥२२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटेनलिनादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....

रूपाचल के शीष, कुमुदा देश महान है।
नगर अशोकपुरी, प्रणमूँ श्री जिनगेह को ॥२३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटेकुमुदादेशे विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तयेअर्घ्यं नि. स्वाहा।

रूपाचल छविमान, सरिता देश प्रसिद्धहै।
वीतशोक रजधानि, जिनचैत्यालय पूजिये ॥२४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटेसरितादेशे विजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

रूपाचल संयुक्त, वप्रादेश महान में।
विजयापुरी सचित्र, स्वर्णमयी जिनगृह जजूँ ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटेवप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

गिरि विजयार्ध अचल, देश सुवप्रा मध्यमें।
आर्य खंड अभिराम, पुरी वैजयंती भवन ॥२६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटेसुवप्रादेशे विजयार्ध-पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....

गिरि विजयार्ध उतंग, देश महावप्रा विरल।
नगर जयंती श्रेष्ठ, श्री जिनेन्द्र गृह पूजिये ॥२७॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटेमहावप्रादेशे विजयार्ध-पर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....

रूपाचल विख्यात, देश वप्रकावतीमें।
आर्यखंडजिनधाम, मुख्यपुरी अपराजिता ॥२८॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटेवप्रकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....

चक्रापुरी प्रसिद्ध, गंधादेश विदेह में।
सिद्धायतन महान, रूपाचल का पूजिये ॥२९॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटेगंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....

गिरि विजयार्ध महान, देश सुगंधामध्यमें।
खड्गापुरी सुनाम, वन्दूँ नित सिद्धायतन ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटेसुगंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....

रूपाचल के भाल, देश गंधिला मध्य में।
नगर अयोध्या जान, विनय सहित नित पूजिये ॥ ३१ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधिलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

गंधमालिनि देश, नगर अयोध्या जाइये।
समयसार अनुसार, मत्थएण वंदामि प्रभु ॥ ३२ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधमालिनीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

छंद — मरहठा माधवी

रजताचल विख्यात जिनालय भरत क्षेत्र छह खंड में।
नगर अयोध्या जानो शाश्वत आर्य खंड के मध्य में ॥
करूँ आत्म कल्याण ज्ञान में अस्तिकाय पाँचों समझ।
पाऊँ केवलज्ञान विनय से पूजन करूँ स्वरूप भज ॥ ३३ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि- भरतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन-बिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है विजयार्ध प्रधान जिनालय ऐरावत के मध्य में।
नगर अयोध्या दिव्य शाश्वत आर्यखंड के मध्य में ॥
पूजूँ त्रिभुवन ईश सदा वन्दितु सव्वसिद्धे प्रभो।
पाऊँ शिवपुर शीर्ष सिद्ध पद समयसार द्वारा विभो ॥ ३४ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-ऐरावतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा

जजूँ बिम्ब विजयार्ध के, विजय मेरु के पास।
निज स्वभाव ही श्रेय है, सुदृढ करूँ विश्वास ॥
पूर्ण-अर्घ्य प्रभु पद कमल, अर्पित करूँ सनेह।
स्व-पर विवेक हृदय जगा, पाऊँ निजरस मेह ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

निज स्वरूप में लीन हो, संयम धरूँ महान।
निश्चय अरु व्यवहारमय,मुक्ति मार्ग पहचान॥

ताटंक

उत्तम संयम का महिमामय शुद्ध आचरण अपनाऊँ।
निश्चय संयम की गरिमा से अपना शुद्ध भाव ध्याऊँ॥
वीतराग जिनमार्ग यही है यही मुक्ति का पंथ महान।
सम्यग्दर्शन पूर्वक संयम करता कर्मों का अवसान॥
मात्र शुद्ध संयमाचरण ही सिद्ध स्वपद का दाता है।
मुक्ति भवन का श्रेष्ठ केतु है तीन लोक विख्याता है॥
निश्चय युत व्यवहार सुसंयम हो विवेक पूर्वक उर में।
तो शिवपथ वटवृक्ष समाहित नन्हें संयम अंकुर में॥
पंचस्थावर त्रस कायिक जीवों पर करुणा हो भगवन।
पंचेन्द्रिय मन वश में करलूँ पाऊँ मंगल मुक्ति सदन॥
उत्तम संयम धार हृदय में आत्मोत्पन्न सौख्य पाऊँ।
सदा संयमित निज में रहकर निज निर्वाण स्वपद लाऊँ॥
सामायिक छेदोपस्थापन, अरु परिहार विशुद्धि-चरित्र।
सूक्ष्मसांपराय मनभावन, यथाख्यात चारित्र पवित्र॥
इन्द्रादिक सुर जिसे तरसते संयम रत्न यही अनमोल।
बडे भाग्य से नर तन पाया संयम से लूँ यह तन तोल॥
संयम के बिन सकल आचरण सदा शून्य कहलाता है।
मुक्तिमार्ग मिलता न कभी भी यह भव दुख का दाता है॥
स्वाश्रित संयम मुक्तिदूत बन निज प्राँगण में आता है।
तब देहाश्रित संयम-सौरभ से जीवन मुसकाता है॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि पूर्वापरविदेह-भरतैरावतस्थित चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

विजयमेरु विजयार्ध जिनालय हमने पूजे हर्षित हो।
वृषभ चिन्ह की ध्वजा चढ़ाऊँ अंतरमन से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

आओ जिन मन्दिर में आओ,
श्री जिनवर के दर्शन पाओ।
जिन-शासन की महिमा गाओ॥
आयो आयो रे अवसर आनन्द का॥ टेक॥
हे जिनवर तव शरण में सेवक आयो आज।
शिवपुर-पथ दरशाय के दीजे निज पद राज॥
प्रभु अब शुद्धातम बतलाओ
चहुँगति दुख से शीघ्र छुड़ाओ
दिव्य ध्वनि अमृत बरसाओ
आया प्यासा मैं सेवक-आनन्द॥१॥
जिनवर दर्शन कीजिए, आतम दर्शन होय।
मोह-महातम नाशि के, भ्रमण चतुर्गति खोय॥
शुद्धातम को लक्ष्य बनाओ
निर्मल भेद ज्ञान प्रगटाओ।
अब विषयों से चित्त हटाओ।
पाओ पाओ रे मारग निर्वाण का॥२॥
चिदानंद चैतन्य मय, शुद्धातम को जान।
निज स्वरूप में लीन हो पाओ केवलज्ञान॥
नव केवल लब्धि प्रगटाओ,
फिर योगों को नष्ट कराओ॥
अविनाशी-सिद्ध-पद को पाओ॥
आया-आया रे अवसर आनन्द का॥३॥

पूजन क्रमांक-१३

विजयमेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन

स्थापना

छंद — गीतिका

षटकुलाचल विजय-सुरगिरि के जिनालय पूजिये।
भाववाही वन्दना कर आत्मा में हूजिये॥
हिमवन, महाहिमवान, निषधरु रुक्मि, शिखरी, नीलगिरि।
आइए जिनराज तिष्ठें मम हृदय में सदा थिर॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि षटकुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुंष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

छंद — माधवमालती

भावतप जल सहज लाऊँ त्रिविधि रोग विनाश-हित प्रभु।
षट कुलाचल भाव से पूजूँ बनूँ मैं मोह-जित प्रभु॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निजाश्रित तप गन्ध शीतल भवातप के नाश-हित प्रभु।
षट कुलाचल भाव से पूजूँ बनूँ मैं राग-जित प्रभु॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तप अखण्डित मैं तपूँ अब स्व पद अक्षय प्राप्तिहित प्रभु।
षट कुलाचल भाव से पूजूँ बनूँ मैं द्वेष-जित प्रभु॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

विविध रंगी तप सुमन लूँ कामबाण विनाश हित प्रभु।
षट कुलाचल भाव से पूजूँ बनूँ मैं द्रोह-जित प्रभु॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अनशनादिक सुचरु लाऊँ क्षुधा व्याधि विनाशहित प्रभु ।
षटकुलाचल भाव से पूजूँ बनूँ मैं विश्व-जित प्रभु ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि षटकुलाचलस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्योक्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अन्तरंग तप अब प्रजालूँ-मोह-तिमिर-विनाशहित प्रभु ।
षटकुलाचल भाव से पूजूँ बनूँ संसार-जित प्रभु ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

भावतप के अनल में अब कर्म-अरि विध्वंस हो प्रभु ।
षटकुलाचल भाव से पूजूँ बनूँ मैं कर्म-जित प्रभु ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

चिन्मयी तप फल लहूँ मैं मोक्षफल की प्राप्तिहित प्रभु ।
षटकुलाचल भाव से पूजूँ बनूँ अघ-पुण्य-जित प्रभु ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि षटकुलाचलस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

भेद द्वादशमयी तप धारण करूँ अन्-अर्घ्य हित प्रभु ।
षटकुलाचल भाव से पूजूँ बनूँ मैं जगत-जित प्रभु ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्घ्यावलि

चौपई

विजयमेरु दक्षिण हिमवान, पदम सरोवर महिमावान ।
पृथ्वीकाय कमल सुविशाल, श्री देवी का महल विशाल ॥
ग्यारह कूट स्वर्णमय जान, एक कूट जिनभवन महान ।
कृष्ण-लेश्या कर अवसान, ध्वजा चढ़ाऊँ हे भगवान ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-हिमवानपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रजतमयी सु महाहिमवान, आठ कूट से शोभावान।
महापद्मद्रह कमल प्रधान, ह्री देवी का भवन वितान॥
एककूट चैत्यालय युक्त, रत्नमयी प्रतिमा संयुक्त।
नील-लेश्यादुखमय जान, ध्वजा चढ़ाऊँहे भगवान॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-महामहिमवानपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बोभ्यो अर्घ्यं.....

स्वर्णमयी गिरि निषध प्रसिद्ध, नवकूटोंसे जो है बिद्ध।
द्रहतिगिच्छ मेंकमल प्रधान, धृतिदेवी का भवनविहान॥
एक कूट पर श्री जिनगेह, वन्दूँ उर में धार सनेह।
अबकापोत-लेश्या त्याग, ध्वजा चढ़ाऊँ हे जिनराज॥३॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-निषधपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं...

विजयमेरु उत्तर दिशि मान, नीलमवर्ण नीलगिरि जान।
केसरि द्रह के मध्य कमल, कीर्ति देवि का भव्य महल॥
गिरिपर है नौ कूट महान, सिद्धकूट जिन-भवन प्रधान।
परिणति रंगी पीत रंग जान, ध्वजा चढ़ाऊँ हे भगवान॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-नीलपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं..

उत्तरदिशि गिरि रुक्मि प्रधान, आठकूट युत शोभावान।
पुण्डरीक द्रह कमल सुजान, बुद्धि देवि का भवनमहान॥
एक कूट पर सिद्ध सुकूट, णमो जिणाणं ज्ञान अटूट।
पद्म-लेश्या भी शुभजान, इसको त्यागूँ हे भगवान॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि रुक्मिपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं...

उत्तर स्वर्णिम शिखरी जान, ग्यारह कूट मनोज्ञ महान।
महापुण्डरीक द्रह जान, मध्य कमल लक्ष्मी गृह मान॥
सिद्धकूट इक पर जिनगेह, शुद्धातम से करूँ सनेह।
शुक्ल लेश्या धर्मनमान, इस पर जय पाऊँ भगवान॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि-शिखरीपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.

पूर्णार्घ्य

छंद — हरिगीतिका

षटकुलाचल के जिनालय विनय से वन्दन करूँ।
हिमवान आदि कुलाचलों पर जिन-भवन दर्शन करूँ॥
पूर्ण-अर्घ्य करूँ समर्पित लेश्या सब क्षय करूँ।
आत्म-तत्व महान पाकर अतुल सुख संचय करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विजयमेरुसम्बन्धि षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

पीयूष राशि

छह प्रकार महानतप है अन्तरंग।
बाह्य भी छह भाँति के जैसे तरंग॥
जो अनिच्छुक है वही तपमय महान।
उसी को होता प्रकट कैवल्य ज्ञान॥

छंद — ताटंक

प्रायश्चित नौ भेद, विनय के चार भेद, दस वैयावृत।
स्वाध्याय के पाँच, दोय व्युत्सर्ग ध्यान के चार बृहत॥
अंतरंग तप छह प्रकार है मात्र आत्मा शुद्ध अभेद।
अंतरंग निर्जरामयी है सुनो बाह्य तप के छह भेद॥
अनशन, अवमौदर्य, वृत्तपरिसंख्या, रस-परित्याग महान।
विविक्त शैय्यासन को जानो कायक्लेश तप बाह्य प्रधान॥
पाँच भेद चारित्र प्रथम सामायिक छेदोपस्थापन।
त्रय परिहारविशुद्धि चतुर्थम सूक्ष्म-सांपराय सघन॥
पंचम यथाख्यात अनुपम है महामोक्ष पद का दाता।
साक्षात् कैवल्य प्रदाता सिद्धस्वपद उर पधराता॥
सामायिक सब जीवों से हो समता भाव सदैव महान।
समभावों की आय जहाँ वह सामायिक है समतावान॥

प्रतिक्रमण अपने स्वभाव में आने का प्रयत्न निश्चय।
जो सीमा का किया अतिक्रमण उसका प्रायश्चित निर्भय॥
प्रत्याख्यान सभी विषयों का और न पाप करूँ संचय।
आलोचना आदि के द्वारा हो जाऊँ परिपूर्ण अभय॥
संस्त्वन चौबीसों तीर्थंकर की थुति अरु वन्दना महान।
वृषभादिक श्री वीर जिनेश्वर की महिमा के हों गुणगान॥
कृत्यवन्दना अंतिम तीर्थंकर को वन्दन हो विनय सहित।
महावीर जिन प्रभु गुणशाली वीतराग सर्वज्ञ स्वरत॥
कायोत्सर्ग देह से ममता तज दूँ हो परभाव रहित।
कैसा भी उपसर्ग आदि हो निजसे होऊँ कभी न च्युत॥
ये षट आवश्यक नित पालूँ निज स्वरूप चिन्तवन करूँ।
श्रेष्ठ एक आवश्यक अपने ध्रुव स्वभाव का मनन करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे विजयमेरुसम्बधि-षटकुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

दिव्य षटकुलाचल के जिनगृह हमने पूजे हर्षित हो।
कमल चिन्ह की ध्वजा चढ़ाएँ अंतर्मन से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक-१४

धातकीखंड द्वीपस्थ अचलमेरु स्थित सोलह जिनालय पूजन

स्थापना

दोहा

अचलमेरु संबंधि हैं, चैत्यालय सुप्रसिद्ध।
अनुपम अस्सी जानिये, महिमामयी प्रसिद्ध॥

छंद – रोला

अचल-स्वर्ण-गिरि लाख चुरासी उच्च जानिये।
द्वीप धातकीखंड दिशा पश्चिम प्रमाणिये॥
मेरु भूमि पर भद्रशालवन हरा-भरा है।
पांच शतक योजन नंदनवन उच्च खरा है॥
योजन साढे पचपन सहस्र सौमनस वन है।
अठ्ठाईस सहस योजन पर पान्डुकवन है॥
इन चारों की चार दिशा में सोलह जिनगृह।
पूरब दक्षिण पश्चिम उत्तर पूजूँ साग्रह॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपे अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्वाननम्)

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपे अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनम्)

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपे अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (इति सन्निधिकरणम् (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)।

छन्द- त्रोटक

जल उत्तम त्याग चरण ढारूँ, पर में अपनापन निरवारूँ।
गिरिअचलमेरुको नमन करूँ, जिनवरसम निजकामननकरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं...

चन्दन सम त्यागधर्म शीतल, पर-गन्ध नाश होऊँ निर्मल।
गिरिअचलमेरुको नमन करूँ, जिनवर सम निज कामनन करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं...

मैं त्यागमयी अक्षत लाया, पर-रुचि क्षत-विक्षत कर आया।
गिरि अचल मेरु को नमन करूँ, जिनवर सम निज का मनन करूँ॥
ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं.....

मैं त्याग-पुष्प प्रभु चरण धरूँ, पर में निज की वासना हरूँ।
गिरि अचल मेरु को नमन करूँ, जिनवर सम निज का मनन करूँ॥
ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं....

रस त्यागमयी चरु भेंट करूँ, निज में सुतृप्त, पर-भूख हरूँ।
गिरि अचल मेरु को नमन करूँ जिनवर सम निज का मनन करूँ॥
ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुदधारो विनाशनाय नैवेद्यं.....

मैं त्याग-ज्योति प्रज्ज्वलित करूँ, पर में ममत्व के भाव हरूँ।
गिरि अचल मेरु को नमन करूँ, जिनवर सम निज का मनन करूँ॥
ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं.....

मैं त्याग-भाव का यज्ञ करूँ, कर्तृत्व-वासना होम करूँ।
गिरि अचल मेरु को नमन करूँ, जिनवर सम निज का मनन करूँ॥
ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं.....

लूँ त्यागमयी अनुपम शिव फल, यह नरभव अपना करूँ सफल।
गिरि अचल मेरु को नमन करूँ, जिनवर सम निज का मनन करूँ॥
ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं.....

यह त्याग अर्घ्य प्रभु अर्पित है, जग-वैभव मोह विसर्जित है।
गिरि अचल मेरु को नमन करूँ, जिनवर सम निज का मनन करूँ॥
ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

अर्घ्यावलि

छंद — मरहठा माधवी

भूपर भद्रशाल वन मनहर चारों दिशा महान है।
कोटि-कोटि देवों के द्वारा सेवित श्रेष्ठ प्रधान है॥

पूर्व दिशा के जिन-मंदिर को मेरा सतत प्रणाम है।
एक मात्र ध्रुवधाम ध्येय ही धर्म-ध्वजा का धाम है॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ भद्रशालवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दक्षिणदिशि जिन-भवन अकृत्रिम भव्य जनों को पूज्य है।
राज्यकुटुम्ब संपदा स्वर्गादिक सब सदा अपूज्य है॥
दक्षिण दिशि के जिनमंदिर को मेरा सतत प्रणाम है।
एक मात्र ध्रुवधाम ध्येय ही धर्म-ध्वजा का धाम है॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ भद्रशालवनस्थित-दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पश्चिम दिशि जिनगृह की महिमा त्रिभुवन में विख्यात है।
निज स्वरूप ध्रुवधाम शाश्वत भव्यों में प्रख्यात है॥
पश्चिम दिशि के जिनमंदिर को मेरा सतत प्रणाम है।
एक मात्र ध्रुवधाम ध्येय ही धर्म-ध्वजा का धाम है॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ भद्रशालवनस्थित-पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

उत्तर दिशि श्री जिन-चैत्यालय महिमामयी महान है।
अतुलनीय सौन्दर्य आत्मा का ही श्रेष्ठ प्रधान है॥
उत्तर दिशि के जिन-मंदिर को मेरा सतत प्रणाम है।
एक मात्र ध्रुवधाम ध्येय ही धर्म-ध्वजा का धाम है॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ भद्रशालवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

भद्रशाल से पाँच शतक योजन ऊपर वन जानिये।
नंदनवन चहुँ दिशा जिनालय स्वर्ण कलश युत मानिये॥
पूरब दिशि जिनभवन ध्वजा युत एक शतक वसु बिम्ब है।
अप्रमत्त मुनि के अंतर में बिम्बों के प्रतिबिम्ब हैं॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ नन्दनवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दक्षिण दिशा जिनेन्द्र-भवन भी ध्वजा पंक्ति से सोहता।
तीन लोक से न्यारा अतिपावन गृह मन को मोहता॥

जो प्रमत्त मुनि हैं वे अट्ठाईस मूल गुण धारते।
धर्म-ध्वजा फहराकर अपना रूप सदैव निहारते ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ नन्दनवनस्थित-दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पश्चिम दिशा अकृत्रिम जिनगृह ध्वजा पंक्ति युत जानिये।
मोक्षमार्ग बतलाने वाले बिम्बों को पहचानिये ॥
शुक्लध्यान में लीन मुनीश्वर कर्म घातिया जारते।
धर्म-ध्वजा फहराकर जग का भार तुरन्त उतारते ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ नन्दनवनस्थित-पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

उत्तर दिशा जिनालय भव्य महान सभी को भा रहा।
आत्म-तत्व सर्वोत्कृष्ट है भव्यों को समझा रहा ॥
केवलज्ञान प्राप्त कर मुनिवर मुक्ति स्वरूप निहारते।
धर्म-ध्वजा फहराकर जग में सिद्ध स्वपद को धारते ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ नन्दनवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

नन्दनवन से उच्च निराला सुवन सौमनस जानिये।
चारों दिशि में चार जिनालय ध्वजा युक्त पहचानिये ॥
पूर्व दिशा जिनगृह अपूर्व गर्भालय भरा विशाल है।
चारों दिशि में मानस्तंभ सुशोभित ऊँचा भाल है ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ सौमनसवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

दक्षिण दिशि चैत्यालय अद्भुत रत्नमयी जिनबिम्ब हैं।
आत्म तत्व भजने में चेतन अब क्यों अरे विलम्ब है ॥
ज्ञान ध्वजा की छाया में आ निज स्वरूप का ध्यान धर।
अनेकान्तमय स्याद्वाद की ध्वजा चढा भव-रोग हर ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ सौमनसवनस्थित-दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पश्चिम दिशि चैत्यालय पावन मन भावन अतिभव्य है।
देव-देवियों के जय नादों से गूँजित अति दिव्य है ॥
निज चैतन्य-सदन में आकर शाश्वत सुख का भोग कर।
अनेकान्तमय स्याद्वाद की ध्वजा चढ़ा भव-रोग हर ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ सौमनसवनस्थित-पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

उत्तर दिशा अकृत्रिम जिनगृह शाश्वत सुख का धाम है।
स्याद्वाद-गंगा के जल से शोभित दिव्य ललाम है॥
वन सौमनस जिनालय चारों ही वन्दन के योग्य हैं।
अनेकान्तमय स्याद्वाद की ध्वजा चढ़ाने योग्य हैं॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ सौमनसवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

सुवन सौमनस से ऊपर है पांडुक वन पहचानिये।
तीर्थंकर अभिषेक प्रांगण अति पवित्र है मानिये॥
पूर्व दिशा के चैत्यालय को सुरगण सभी जुहारते।
अनेकान्तमय जिनशासन की ध्वजा सदा फहरावते॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ पांडुकवनस्थित-पूर्वदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दक्षिण दिशि चैत्यालय महिमा गौरवमयी विचित्र है।
निज स्वरूप निर्मल अति शुचिमय पर का कहीं न चित्र है॥
आत्मज्ञान की ध्वजा चढ़ाकर शिवनगरी में आइए।
अनेकान्तमय जिनशासन की ध्वजा सदा फहराइये॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ पांडुकवनस्थित-दक्षिणदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पश्चिम दिशा जिनालय पावन का संदेश महान है।
आत्मतत्व सर्वोच्च जगत में गरिमामयी प्रधान है॥
आत्मज्ञान की बजा बांसुरी सप्त तत्व स्वर साधिये।
अनेकान्तमय जिनशासन की ध्वजा सदा फहराइये॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ पांडुकवनस्थित-पश्चिमदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

उत्तरदिशि जिनभवन अनोखा ध्वजा पंक्ति का कोष है।
परभावों से सदा भ्रमित है किन्तु जीव सदा निर्दोष है॥
चारों दिशि के चार जिनालय ही वन्दन के योग्य हैं।
अनेकान्तमय जिनशासन की ध्वजा चढ़ाने योग्य हैं॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ पांडुकवनस्थित-उत्तरदिक्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पूर्णार्घ्य

दोहा

अचलमेरु सोलह भवन, पूर्ण अर्घ्य ले नाथ।
भावसहित पूजन करूँ, सदा झुकाऊँ माथ॥
चमत्कार चितिपिंड हूँ, रत्नकरंड प्रसिद्ध।
निर्निमेष संकीर्तन, करूँ बनूँ मैं सिद्ध॥
मृत्युंजयी स्वभाव का, छोड़ूँ कभी न साथ।
मुक्ति-कामिनी वरण कर, उस को करूँ सनाथ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

पर की ममता त्याग कर, निज में ममता धार।
समताभाव सम्हारिये, प्रिय चैतन्य कुमार॥

छन्द – रोला

भव तन भोग उदास बनूँ निज को ही ध्याऊँ।
पर द्रव्यों से मोह त्याग, जिन-दीक्षा धारूँ॥
निज को पर से भिन्न जान, निज में रम जाऊँ।
त्रैकालिक ध्रुव निज स्वरूप के दर्शन पाऊँ॥
निश्चय त्याग धर्म है अनुपम जग विख्याता।
पर ममत्व से रहित शक्तिशाली शिवदाता॥
औषधि शास्त्र अभय आहार दान है ख्याता।
यह व्यवहार त्याग है स्वर्ग सुखों का दाता॥
तन ममत्व जननी ममत्व तज निज को निरखूँ।
पितृ-मोह तज सुत ममत्व तज निज को परखूँ॥
राज्य धान्य-धन वनिता गृह ममत्व सब त्यागूँ।
परद्रव्यों से निर्ममत्व हो निज हित लागूँ॥
क्रोध मान माया लोभादि कषाय तजूँ मैं।
राग-द्वेष मोहादि भाव तज आत्म भजूँ मैं॥

उत्तम त्याग धर्म ही पालूँ सतत निरन्तर।
भेद-भाव परिहार करूँ शुचि हो अभ्यन्तर॥
चौ प्रकार व्यवहार दान का मार्ग सुसम्यक्।
है प्रभु निश्चय-त्याग अनूठा मुक्ति प्रदर्शक॥
इसी त्याग के अवलम्बन से पाप नशाऊँ।
पर्यायों से मोह त्याग-कर निज पद पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं.....

वीरछंद

अचलमेरु के सोलह जिनगृह हमने पूजे हर्षित हो।
मालाचिन्ह विभूषित ध्वजा चढ़ाऊँ स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुणसंपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

[तर्ज- करूणा सागर भगवन, भव पर लगा देना]

अशरीरी-सिद्ध भगवान, आदर्श तुम्हीं मेरे।
अविरुद्ध शुद्ध चिद्घन, उत्कर्ष तुम्हीं मेरे॥ टेक॥
सम्यक्त्व सुदर्शन ज्ञान अगुरू लघु अवगाहन।
सूक्ष्मत्व वीर्य गुणखान, निर्बाधित सुखवेदन॥
हे गुण अनन्त के धाम, वन्दन अगणित मेरे॥ १॥
रागादि रहित निर्मल, जन्मादि रहित अविकल।
कुल गोत्र रहित निश्कुल, मायादि रहित निश्छल॥
रहते निज में निश्चल, निष्कर्म साध्य मेरे॥ २॥
रागादि रहित उपयोग, ज्ञायक प्रतिभासी हो।
स्वाश्रित शाश्वत-सुख भोग, शुद्धात्म-विलासी हो॥
हे स्वयं सिद्ध भगवन, तुम साध्य बनो मेरे॥ ३॥
भविजन तुम-सम निज-रूप, ध्याकर तुम-सम होते।
चैतन्य पिण्ड शिव-भूप, होकर सब दुख खोते॥
चैतन्यराज सुखखान, दुख दूर करो मेरे॥ ४॥

पूजन क्रमांक-१५

अचलमेरु सम्बन्धी चार गजदंत जिनालय पूजन

स्थापना

वीरछंद

खंडधातकी पश्चिम दिशि में अचलमेरु है महिमावंत।
इसकी विदिशाओं में अद्भुत हस्तिदंत सम हैं गजदंत॥
संख्या में हैं चार श्रृंग जिन पर हैं सिद्धकूट-जिन चार।
निज स्वभाव शिवसुख प्रदाय है ले जाता भव-सागर पार॥

दोहा

अष्टद्रव्य ले थालभर, पूजूँ श्री जिनदेव।
जिनदर्शन से प्राप्त हो, निज दर्शन स्वयमेव॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरु सम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छन्द – अवतार

जल आकिंचन्य महान मिथ्यामल नाशक।
यह जगत अनित्य, असार, अशरण, परकाशक॥
गजदन्त जिनालय चार श्री जिनवर वन्दूँ।
ध्रुव अचल अगम अविकार अनुपम अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज आकिंचनरूप भव-दुर्गन्ध हरे।
यह जगत महादुख कूप तत्क्षण नष्ट करे॥गजदन्त०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

आकिंचन अक्षत रूप निज एकत्वमयी।
पर-सत्ता से अति भिन्न हूँ अन्यत्वमयी॥गजदन्त०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम आकिंचन पुष्प शुचिमय भेंट करूँ।
यह अशुचि काम की पीर अब परिपूर्ण हरूँ॥
गजदन्त जिनालय चार श्री जिनवर वन्दूँ।
ध्रुव अचल अगम अविकार अनुपम अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

आकिंचन सुचरु महान संवरमय लाऊँ।
निर्जरा शक्ति से नाथ पूर्ण तृप्ति पाऊँ॥गजदन्त०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकिंचन दीप प्रजाल जगमग ज्योतिर्मय।
भासित हो लोकालोक युगपत् एक समय॥गजदन्त०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम आकिंचन धूप अति दुर्लभ लाया।
निज-बोधि प्राप्ति के हेतु चरणों में आया॥गजदन्त०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आकिंचन तरु विकसाय धर्म सुफल पाऊँ।
शिवफल हित हे जिनराय तुव महिमा गाऊँ॥गजदन्त०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम आकिंचनरूप अर्घ्य सजाया है।
द्वादश भावना विचार, निजपद भाया है॥गजदन्त०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

चौपई

सुरगिरिअचलदिशा आग्नेय। नामसौमनसरजत अमेय।
सप्त कूट हैं स्वर्णमयी। सिद्धकूट त्रैलौक्य जयी॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरोःआग्नेयविदिशि सौमनसगजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु अचल नैऋत्य सुकोण। विद्युत्प्रभ गजदंत अचौन।
नव-कूटों में एक प्रसिद्ध। जिनगृह महिमावंत सुसिद्ध॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरोःनैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु अचल वायव्य महान। गंधमादनाचल छविमान।
सप्तकूट में एक प्रधान। श्री जिनभवन अकृत्रिम जान॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरोः वायव्यविदिशि गंधमादनाचलपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु ईशान प्रसिद्ध। माल्यवान नीलम मणिसिद्ध।
नवकूटों में एक प्रधान। जिनगृह उत्तम श्रेष्ठ महान॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरोः ईशानविदिशि माल्यवानगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सोरठा

अचल जिनभवन चार, हस्तिदंत गजदंत के।
नमूँ त्रियोग संवार, पूर्ण-अर्घ्य अपर्ण करूँ॥

उपजाति

चैतन्य का ही यदि ज्ञान कर लूँ।
समस्त संकल्प-विकल्प हर लूँ॥
यही भावना भवभ्रांति क्षय हित।
इतना बहुत है शिव शान्ति के हित॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

आकिंचन्य स्वरूप लख, तज दूँ सर्व विकार।
ज्ञानामृत पी मैं लहूँ, समयसार का सार॥

वीरछन्द

उत्तम आकिंचन्य धर्म है सर्व ममत्व भाव से दूर।
परद्रव्यों की चकाचौंध से रहित ज्ञान से है भरपूर॥
अपरिग्रही अनिच्छुक मुनिवर आकिंचन व्रत धारी हैं।
उत्तम आकिंचन विरागमय अनुपम शिवसुखकारी है॥
अंतरंग चौदह, दस हैं बहिरंग परिग्रह दुखदाता।
इनका त्यागी ही त्रिगुप्ति से युक्त परम शिवसुख पाता॥
आकिंचन्य धर्म के द्वारा तीर्थंकर पाते निर्वाण।
आकिंचन स्वरूप रथ चढ़कर, लेते जिन-मुनि मुक्ति वितान॥
अनित्यादि भावना सुतरु पर फलता है यह आकिंचन।
चेतन तथा अचेतन द्रव्यों से ममत्व जाता तत्क्षण॥
पर-द्रव्यों से राग न हो तो तृष्णाओं पर जय होती।
सर्व परिग्रह त्यागी मुनियों की ही सदा विजय होती॥
उत्तम आकिंचन व्रत जग में श्रेष्ठ धर्म विख्याता है।
परमज्ञान रस निजानन्दमय सिद्ध स्वपद उर लाता है॥
कब निर्ग्रन्थ दशा होगी प्रभु आकिंचन व्रत धारूँगा।
सर्व परिग्रह से ममता तज निज सिद्धत्व संवारूँगा॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

अचलमेरु गजदंत जिनालय हमने पूजे हर्षित हो।
सिंह चिन्ह की ध्वजा चढ़ाएँ अंतर्मन से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

इत्याशीर्वाद:

पूजन क्रमांक-१६

अचलमेरु संबंधी धातकी शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजन

स्थापना

वीरछन्द

खंडधातकी द्वीप सु पश्चिम अचल दिशा ईशान प्रधान।
वृक्ष धातकी पृथ्वीकायिक उत्तरशाखा जिनगृह जान॥
दिशि नैऋत्य-कोण में शाल्मलि वृक्ष सुशोभित है छविमान।
स्वर्ण कलश ध्वजदंड रत्नमय ध्वजा पंक्तियाँ उच्च महान॥
मानस्तंभ सहित जिनमंदिर दोनों ही हैं स्वर्णमयी।
अनेकान्तमय वस्तु समझकर आज बनूँगा कर्मजयी॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छन्द – सखी

उर ब्रहमचर्य गुण गाऊँ, अस्पर्शी चित जल लाऊँ।
मिथ्यामल त्वरित हटाऊँ, धातकि-शाल्मलि जिन ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन गरिमामय लाऊँ, मैं अरस स्वभाव सजाऊँ।
निज में निज दृष्टि जमाऊँ, धातकि-शाल्मलि जिन ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ब्रह्म अखण्डित ध्याऊँ, निर्ग्रन्थ स्वरूप लखाऊँ।
क्षत-विक्षत भाव नशाऊँ, धातकि-शाल्मलि जिन ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चिद्ब्रह्म सुमन चुन लाऊँ, चैतन्य अरूपी ध्याऊँ।
कामादि विकार मिटाऊँ, धातकि-शाल्मलि जिन ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चरु ब्रह्म स्वरस मय लाऊँ, गुण वचन-अगोचर पाऊँ।
कर्णेन्द्रिय विषय नशाऊँ, धातकि-शाल्मलि जिन ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ब्रह्म प्रकाश जगाऊँ, संकल्प-विकल्प मिटाऊँ।
मन का अवलम्ब नशाऊँ, धातकि-शाल्मलि तरु ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ब्रह्म ध्यान प्रजलाऊँ, अब धूम अब्रह्म उड़ाऊँ।
अव्यक्त स्वरूप सुपाऊँ, धातकि-शाल्मलि जिन ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चिदब्रह्म विलास लसाऊँ, कैवल्य सुफल प्रगटाऊँ।
संस्थान रहित हो जाऊँ, धातकि-शाल्मलि तरु ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अनलिंग-ग्रहण मैं पाऊँ, पद ब्रह्म अनर्घ्य लखाऊँ।
अष्टम भू पर जम जाऊँ, धातकि शाल्मलि जिन ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

चौपई

अचलमेरु धातकी सुवृक्ष, गृह ईशान दिशा प्रत्यक्ष।
साम्यभाव पीयूष महान, हर्षित होय करूँ नित पान ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपस्थ-अचलमेरुसम्बन्धि-धातकीवृक्षस्थित जिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु शाल्मलि तरु जान, गृह नैऋत्य कोण में मान।
समभावों के पुंज प्रधान, अर्पण कर मैं बनूँ महान ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपस्थ अचलमेरुसम्बन्धि-शाल्मलिवृक्षस्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

अचलमेरु द्वय वृक्ष प्रसिद्ध, दो जिन-चैत्यालय सुविशुद्ध।
रोम-रोम पुलकित हो जाय, पूर्ण-अर्घ्य जिन-चरण चढ़ाय ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपस्थ अचलमेरुसम्बन्धिधातकीशाल्मलिवृक्षद्वय स्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

मुक्तिवधू के श्रेष्ठ वर, वीतराग भगवान।
परम ब्रह्म में लीन हैं शुद्ध ब्रह्म गुण-खान ॥

चौपाई

उत्तम ब्रह्मचर्य उर धारूँ, नव बाढ़ों से शील सम्भारूँ।
ब्रह्मचर्य तो निज स्वभाव है, इसमें रंच न परविभाव है ॥
तन का ब्रह्मचर्य बलदायक, मन का ब्रह्मचर्य शिवदायक।
आत्मब्रह्म में चर्या करना, यही मुक्ति-सुख का है झरना ॥
शोषण कामबाण को वर्जूं, अरु सन्ताप काम को वर्जूं।
उच्चारण अरु वशीकरण तज, इंगित चेष्टा मारण अघ तज ॥
नवधा शील करूँ नित पालन, उदर-पूर्ण त्यागूँ मैं भोजन।
कामकथा, शैयाशन तज दूँ, वनिता का श्रृंगार न निरखूँ ॥

कामोत्तेजक भोजन त्यागूँ, राग युक्त वच नहिं अनुरागूँ।
पूर्व भोग की याद न आवे, वनिता का सहवास न भावे॥
नारी मनहर अंग न निरखूँ, शील स्वरूप स्वयं को परखूँ।
ब्रह्मचर्य की अद्भुत महिमा, मैं भी पाऊँ इसकी गरिमा॥
काम वासना नष्ट करूँ मैं, शीलाचरण न भ्रष्ट करूँ मैं।
लाख चौरासी उत्तर गुणमय, ब्रह्मचर्य व्रत की हो जय जय॥
सभी अठारह सहस्त्र दोष हर, हैं परिपूर्ण ब्रह्ममय जिनवर।
परम शील की महिमा गाऊँ, शुद्ध ब्रह्म निज में रम जाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपस्थ अचलमेरुसम्बन्धिधातकीशाल्मलिवृक्षद्वय स्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

अचलमेरु धातकि-शाल्मलि तरु जिनगृह पूजे हर्षित हो।
अंशुक चिन्ह विभूषित ध्वज-आरोहण करता हूँ पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

तू जाग रे चेतन प्राणी कर आतम की अगवानी।
जो आतम को लखतें हैं उनकी है अमर कहानी॥ टेक॥
है ज्ञान मात्र निज ज्ञायक जिसमें हैं ज्ञेय झलकते।
यह झलकन भी ज्ञायक है, इसमें नहिं ज्ञेय महकते॥
मैं दर्शन ज्ञान स्वरूपी मेरी चैतन्य निशानी॥१॥
अब समकित सावन आया, चिन्मय आनन्द बरसता।
भीगा है कण-कण मेरा, हो गई अखण्ड सरसता॥
समकित की मधु चितवन में झलकी है मुक्ति निशानी॥२॥
ये शास्वत भव्य जिनालय, है शान्ति बरसती इनमें।
मानों आया सिद्धालय, मेरी बस्ती हो उसमें॥
मैं हूँ शिवपुर का वासी भव-भव की खतम कहानी॥३॥

पूजन क्रमांक-१७

अचलमेरु संबंधी सोलह वक्षार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – मालिनी

अचलगिरि पूरब में आठ वक्षार देखे।
अचलगिरि पश्चिम में आठ वक्षार लेखे॥
इन्हीं वक्षारों पर जिनालय श्रेष्ठ जानो।
पधारे मम उर में बिम्ब रत्नेष्ठ मानो॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डस्थित अचलमेरुसम्बन्धि पूर्वपश्चिमविदेहस्थ षोडश-वक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छंद - चांद्रायण

जिन पूजन से आत्मज्ञान होता सहज।
गुण अनन्त जल हृदयपान होता सहज॥
चिन्ता का निरोध होना ही ध्यान है।
वक्षारों का गौरव महा महान है॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जलं....

गुरु-उपासना चन्दन ही भवताप हर।
उज्ज्वल आत्मस्वरूपी सहजानन्द कर॥
वक्षारों को वन्दूँ उर-उत्साह भर।
चार ध्यान में पहिला आरत ध्यान हर॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो चंदनं....

अक्षत स्वाध्याय ही सुख का मूल है।
जग हितकारी, शुक्लध्यान का कूल है॥
वक्षारों को वन्दूँ उर-उत्साह भर।
दूजा रौद्रध्यान दुर्गतिमय नाश कर॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षतं....

संयमतरु-पुष्पों की मधुमय गन्ध ले।
काम वेदना नाशूँ पद निर्बन्ध ले॥
वक्षारों को वन्दूँ पाऊँ नम्रता।
तीजा धर्म-ध्यान हो निज एकाग्रता॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं....

तप स्वरूप नैवेद्य तृप्ति दाता स्वयं।
सुख अखण्ड का स्रोत जहाँ बहता परम॥
वक्षारों को वन्दूँ उर उत्साह हो।
चौथा शुक्लध्यान ही अनुपम ध्यान हो॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं...

दान-नेहमय दिव्य प्रकाश मुझे मिले।
केवलज्ञान महान हृदय में रवि खिले॥
वक्षारों को वन्दूँ उर उत्साह भर।
आर्त प्रशस्तरु अप्रशस्तमय ध्यान हर॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो दीपं.....

षट आवश्यक धूप सुगंधित हो सहज।
ध्यान अग्नि में धू-धू जलती कर्मरज॥
वक्षारों को वन्दूँ उर उत्साह भर।
पंच पाप संरक्षण रौद्र कुध्यान हर॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो धूपं.....

अणुव्रत तरु का मधुरिम फल पाऊँ प्रभो।
पाप वासना सर्व जीत जाऊँ प्रभो॥
वक्षारों को वन्दूँ उर उत्साह भर।
धर्म ध्यान के चार भेद निर्धार कर॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो फलं....

निश्चय अरु व्यवहार महाव्रत धार लूँ।
संयमी तरणी पा भव सागर पार लूँ॥
वक्षारों को वन्दूँ उर उत्साह भर।
शुक्लध्यान भी चार प्रकार विचार कर॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्थी-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं—

अर्घ्यावलि

सोरठा

सीता पूर्वविदेह, भद्रशाल वेदी निकट।
चित्रकूट जिनगेह, उत्तर तट पर जानिये॥
चारकूट में एक, श्री जिनभवन प्रधान है।
आत्मतत्व ही एक, जग में महिमावान है॥१॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता पूर्वविदेह, उत्तर तट अति भव्य है।
पद्मकूट जिनगेह, भाव सहित पूजन करूँ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता पूर्व विदेह, उत्तर तट पर जाइये।
नलिनकूट जिनगेह, सिद्धायतन महान है॥३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता पूर्वविदेह, उत्तर तट सुविशाल है।
एक शैल जिनगेह, स्वर्णमयी जिनभवन है॥४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे एकशैलवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता पूर्वविदेह, वेदी देवारण्य है।
है त्रिकूट जिनगेह, दक्षिणतट पर पूजिये॥५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ सीतासरिदक्षिणतटे त्रिकूटवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता पूर्वविदेह, दक्षिण तट रमणीय है।
वैश्रवण जिनगेह, है स्वर्णिम सिद्धायतन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतासरिदक्षिणतटे वैश्रवणवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता पूर्वविदेह, दक्षिण तट शोभा अमित।
है अजंन जिनगेह, चारकूट में एक पर ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतासरिदक्षिणतटे अंजनवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये र्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता पूर्वविदेह, दक्षिण तट पर जाइये।
अंजनात्मा गेह, है वक्षार नमन करूँ ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतासरिदक्षिणतटे अंजनात्मावक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद – रोला

भद्रशाल वेदी सीतोदा दक्षिण तट पर।
श्रद्धावान प्रसिद्ध एक वक्षार मनोहर ॥
जिनप्रभु के दर्शन कर मैं मिथ्यात्व भगाऊँ।
सम्यग्दर्शन प्राप्त करूँ निज घर में आऊँ ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ-सीतोदासरिदक्षिणतटेश्रद्धावानवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा दक्षिण तट है वक्षार मनोरम।
विजटावान महान स्वर्णमय है सर्वोत्तम ॥
अणुव्रत लेकर प्रथम संयमासंयम धारूँ।
सावधान हो, अविरति भाव पूर्ण निरवारूँ ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरिदक्षिणतटेविजटावानवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा दक्षिण तट है पश्चिम विदेह में।
आशीविष वक्षार विराजे प्रभु स्वगेह में ॥

संयम ले सम्पूर्ण प्रमादों पर जय पाऊँ।
पंचमहाव्रत धारूँ निज का ध्यान लगाऊँ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरिदक्षिणतटे आशीविषवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा दक्षिण तट पर वक्षार सुखावह।
चारकूट में एक कूट पर जिनवर विग्रह॥
अब कषाय जय करने का पुरुषार्थ जगाऊँ।
श्रेणी क्षायिक चढूँ, मोह अरि पर जय पाऊँ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदासरिदक्षिणतटे सुखावहवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा उत्तर तट भूतारण्य सुवेदी।
चंद्रमाल वक्षार जिनालय है भव-छेदी॥
ज्ञानावरणी कर्म नाश कर केवल पाऊँ।
योगों का निरोध कर अन्तिम ध्यान लगाऊँ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे चन्द्रमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा के दक्षिण तट वक्षार मनोहर।
सूर्यमाल चारों कूटों में इक पर मंदिर॥
भवातीत, पक्षातिक्रान्त सिद्धालय पाऊँ।
गुणस्थान तज सिद्ध बनूँ निजवैभव ध्याऊँ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नागमाल वक्षार सरित सीतोदा दक्षिण।
चारकूट में एक कूट जिन पूजूँ प्रतिक्षण॥
धर्म ध्यान की महिमा का तो पार नहीं है।
शुक्लध्यान यदि हो तो फिर संसार नहीं है॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे नागमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

देवमाल वक्षार सुदक्षिण सीतोदा तट।
मंगल द्रव्यों से शोभित जिन-मंदिर के पट॥
निज विवेक से त्यागूँ विषयों की लोलुपता।
वीतराग-विज्ञान जगा पाऊँ उज्ज्वलता॥ १६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे देवमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद – दोहकीय (उल्लाला)

सोलह ही वक्षार के, पूजूँ सर्व जिनेन्द्र अब।
एक लक्ष्य हो दृष्टि में, शुद्धातम सुख केन्द्र अब॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डस्थ अचलमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारस्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

वीरछंद

मन हो जब एकाग्र, रहित चिन्ता से तब होता है ध्यान।
चार ध्यान के चार-चार हैं भेद इन्हें, अब लूँ मैं जान॥
आर्तध्यानमय इष्ट वियोग, अनिष्ट योग, दुखदाता है।
तीजा है वेदना जन्य, चौथा निदान कहलाता है॥
आर्तध्यान पहिले से छठवें गुणस्थान तक जाता है।
पर छठवें में तो निदान का नाम नहीं रह पाता है॥
रौद्रध्यान के चार भेद हैं हिंसानन्दि मृषानन्दी।
तीजा चौर्यानन्दी दुखमय, चौथा परिग्रहानन्दी॥
पहिले से लेकर यह पंचमगुणस्थान तक जाता है।
इन चारों से प्राणी, नरक निगोदादिक दुख पाता है॥
धर्म-ध्यान के चार भेद हैं आज्ञाविचय अपायविचय।
तीजा ध्यान विपाकविचय है चौथा है संस्थानविचय॥
चौथे से लेकर यह सप्तम गुणस्थान तक होता है।
धर्मध्यान बिन सम्यग्दर्शन रहित जीव ही होता है॥

शुक्लध्यान के चार भेद हैं पहिला है पृथकत्व वितर्क।
यह वितर्क वीचार सहित है दूजा है एकत्व वितर्क॥
यह वितर्क वीचार रहित, अरु तीजा सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति।
काय-योगधारी को है, अरु चौथा व्युपरत-क्रिया-निवर्ति॥
योग रहित जीवों को होता जो केवली कहाते हैं।
आगे ध्यान सहज होता, बस मोक्षपुरी में जाते हैं॥
आर्त-रौद्र संसार हेतु हैं धर्म-शुक्ल हैं शिवपुर हेतु।
धर्मध्यान धर समकित धारो हर कर मिथ्याभ्रम का केतु॥
अष्टम श्रेणी चढ़ते ही तो शुक्ल ध्यान होता आरंभ।
पहिला दसवें तक होता दूजा बारहवें में प्रारंभ॥
तेरहवें तक यह रहता है फिर होता तीजा प्रारंभ।
चौदहवें के प्रथम समय में चौथा होता है आरंभ॥
चौदहवें तक यह रहता है प्रकृति पिचासी करता नाश।
ध्यानातीत जीव हो जाता एक समय में शिवपुरवास॥
चारों ध्यानों के स्वरूप को समझ आत्म-कल्याण करूँ।
धर्मध्यान की महिमा द्वारा समकित सम्यकज्ञान वरूँ॥
ध्यान विनश्वर मैं अविनश्वर मैं ज्ञाता मैं ज्ञेय अनूप।
मैं ध्यानों से रहित, शुद्ध चैतन्यराज हूँ ध्येय स्वरूप॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डस्थ अचलमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारस्थितजिनालयजिन बिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

अचर मेरु वक्षारों के श्री जिनगृह पूजे हर्षित हो।
गरुड़ चिन्ह की ध्वजा चढ़ाऐं विनयभाव से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभहोसुगतिगमन हो जिनगुणसंपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक-१८

अचलमेरु संबंधी चौतीस विजयार्ध जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – चांद्रायण

अचलमेरु विजयार्ध निकट अब हूजिये।
पूर्व और पश्चिम विदेह जिन पूजिये॥
दोनों दिशि में सोलह-सोलह जानिये।
भरतैरावत एक-एक है मानिये॥
इन सब पर चौंतीस जिनालय भव्य हैं।
स्वर्णिम चैत्यालय से शोभित दिव्य हैं॥
भावसहित मैं श्री जिनेन्द्र पूजन करूँ।
वीतराग की महिमा से भव-भय हरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपस्थ अचलमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वत स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छंद – इन्द्रवज्रा

भवतापहारी जल आज लाऊँ।
जिनराज चरणों में अब चढ़ाऊँ॥
चौंतीस विजयार्ध महान जाऊँ।
सर्वज्ञ स्वामी जिनराज ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवतापहारी चंदन चढ़ाऊँ।
जिनवर-चरण में मस्तक झुकाऊँ॥ चौंतीस० ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

भवतापहारी अक्षत अनूठा।
संसार पर्वत अब तक न टूटा॥
चौंतीस विजयार्ध महान जाऊँ।
सर्वज्ञ स्वामी जिनराज ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

भवतापहारी निज पुष्प लाऊँ।
भव-वासनाऐं पूरी मिटाऊँ॥ चौंतीस०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भवताप हारी नैवेद्य लाऊँ।
परभाव-तरणी को अब डुबाऊँ॥ चौंतीस०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवतापहारी दीपक संजोऊँ।
ज्ञानाब्धि मैं लीन परिपूर्ण होऊँ॥ चौंतीस॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

भवतापहारी ध्रुव धूप लाऊँ।
कर्माग्नि सारी अब में बुझाऊँ॥ चौंतीस०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भवतापहारी फल शुद्ध लाऊँ।
भवभार तत्क्षण पूरा हटाऊँ॥ चौंतीस०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवताप हारी निज अर्घ्य लाऊँ।
संसार सागर के पार जाऊँ ॥ चौंतीस० ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

छंद — पीयूषनिर्झर

पूर्व पश्चिम रजतगिरि की सुछवि न्यारी। भरत-ऐरावतजिनालयबड़े भारी ॥
पुण्य का संयोग यह कितना प्रबल है। आत्मा में गुण अनन्त, अनंतबल है ॥

छंद - अवतार

सीतासरि उत्तर तीर गिरि विजयार्ध जहाँ।
है कच्छा क्षेत्र विशाल जिनगृह एक महा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छादेशेविजयार्धपर्वत स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजयार्ध सुकच्छा देश रूपाचल सुन्दर।
नवकूटों पर इक कूट पर जिनगृह मनहर ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशेविजयार्धपर्वत स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है देश महाकच्छा, गिरि वैताढ्य परम।
इक-शत-वसु प्रतिमायुक्त चैत्यालय अनुपम ॥३ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कच्छकावती है देश पूर्व विदेह मही।
विजयार्ध जिनेन्द्र भवन सुन्दर श्रेष्ठ सही ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आवर्ता देश समुच्च रूपाचल सोहे।
है सिद्धकूट जिनगेह सबका मन मोहे ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे आवर्तदेशे विजयार्धपर्वत स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है देश लांगलावर्त गिरि वैताढ्य भवन।
तोरण द्वारों से युक्त मंदिर मन-भावन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्कला देश के मध्य गिरि वैताढ्य गगन।
है स्वर्ण कलश से युक्त श्री जिनराज भवन ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्कलावती है देश सुन्दर रजताचल।
जिनभवन अकीर्तम पूज पाऊँ पद अविचल ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद — बसंती/मानव

परिणति में समकित आए। मिथ्या भ्रम पूर्ण नशाए ॥
अंगना में संवर नाचे। निजरूप हृदय में राचे ॥
संग भाव-निर्जरा लाए। कर्मों के बंध हटाए ॥
फिर मोक्षमहल पहुँचाए। परिपूर्ण सौख्य प्रगटाए ॥

छंद — ताटंक

वत्सादेश मध्य में है इक रजतशीर्ष जिनराज भवन।
अर्घ्यं चढ़ाऊँ नाचूँ गाऊँ पाऊँ अविकल सिद्ध-सदन ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेशे विजयार्धपर्वत स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुवत्सा के सुमध्य में गिरि वैताढ्य जिनालय ज्ञेय।
जिनदर्शन से उपादेय निज हो जाता, पर होता हेय ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश महावत्सा रूपाचल पर जिन-भवन अकीतर्म है।
जिन-दर्शन-से-एक समय में जाता सब भव-विभ्रमहै ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे महावत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश वत्सकावती अनूठा है विजयार्ध जिनालय सार।
जिनपूजन का सम्यक् फल है सम्यग्दर्शन-ज्ञान अपार ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रम्यादेश मध्य में है विजयार्ध शिखर जिन-भवन प्रधान।
अर्घ्य समर्पित करके स्वामी पाऊँ आत्मधर्ममय ज्ञान ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्ववेदहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुरम्या में रजताचल गिरि विजयार्ध महान पवित्र।
इक-शत-वसु जिन-बिम्ब पूजकर पाऊँ प्रभु सम्यक् चारित्र ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रमणीया शुभ देश अनोखा है विजयार्ध शिखर जिनगेह।
रत्नमयी जिन प्रतिमा वन्दूँ पाऊँ रत्नत्रय रस मेह ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रमणीयादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश मंगलावती जिनेश्वर के होते पाँचों कल्याण।
गिरिविजयार्ध रजतगिरिपूजूँ जिन-चैत्यालयमहिमावान ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे मंगलावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद – रोला

भद्रशाल के निकट देश पद्मा रूपाचल।
भव्यजीव जिनगृह दर्शन कर होते निर्मल ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे पदमादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुपदमा मध्य रजतगिरि शुभ छविवाला।
सिद्धकूट पर जिनमंदिर है एक निराला ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुपदमादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश महापदमा विदेह में अति मन-भावन।
सिद्धायतन जिनेन्द्र देव प्रतिमायें पावन ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे महापदमादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश पदमकावती मध्य विजयार्ध मनोरम।
सिद्धकूट जिनमंदिर में जिनवर छवि अनुपम ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे पदमकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंखादेश विदेह मध्य रूपाचल भारी।
जिनगृह जिन प्रतिमायें रत्निम ज्यों अविकारी ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे शंखादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नलिनादेश विदेह मध्य विजयार्ध अनूठा।
जिनगृह दर्शन करते ही मिथ्याभ्रम टूटा ॥ २२ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे नलिनादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुमुदादेश विदेह मध्य विजयार्ध सलोना।
जिनगृह लख हर्षित है मन का कोना-कोना ॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे कुमुदादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सरिता देश विदेह मध्य विजयार्ध रजतमय।
वंदित्तु सव्वसिद्धे से मिट जाते सातों भय॥ २४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सरितादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद – ज्योति

नवल मंगलधाम पूजूँ सकल सुख अभिराम को।
ज्योति-पुंज ललाम जिनवर रजतगिरि जिनधाम जो॥

दोहा

सीतोदा उत्तर दिशा रजताचल छविमान।
वप्रा देश महान में जिनगृह एक प्रधान॥ २५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुवप्रा मध्य में रूपाचल छविमान।
जिनगृह प्रांगण मध्य में मानस्तंभ महान॥ २६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धी-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुवप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश महावप्रा निकट है विजयार्ध प्रसिद्ध।
जिन-पूजन कर भव्य जन हो जाते हैं सिद्ध॥ २७॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे महावप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश वप्रकावती में है वैताढ्य प्रधान।
जिन-चैत्यालय शोभता महिमामय छविमान॥२८॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधादेश विदेह में रजताचल जिनराज।
कूट एक पर शोभते गुण अनन्त साम्राज्य॥ २९॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपाचल पर जिनभवन देश सुगंधा मध्य।
इन्द्रादिक सुर मिल सभी नित्य चढ़ाते अर्घ्य ॥३०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुगंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश गंधिला मध्य में रजताचल विजयार्ध।
शाश्वत जिनगृह पूजकर सिद्ध करूँ परमार्थ ॥३१॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधिलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधमालिनी देश में रजताचल के शीष।
बार-बार वंदन करूँ चैत्यालय जगदीश ॥३२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधमालिनीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - रोला

अचलमेरु के दक्षिण में है भरत मनोहर।
काल चतुर्थम में होते हैं जिन-तीर्थंकर॥
रजताचल विजयार्ध जिनालय नमन करूँ मैं।
पाप, ताप, संताप आदि सब शमन करूँ मैं॥३३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-भरतक्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचलमेरु के उत्तर में ऐरावत अनुपम।
छह कालों में सर्वोत्तम है काल चतुर्थम॥
इसी काल में होते हैं चौबीस जिनेश्वर।
मैं पूजूँ वैताढ्य जिनालय अर्घ्य चढ़ाकर॥३४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-ऐरावतक्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद - बसंततिलका

चौंतीस चैत्यालय कष्टहारी। इनकी सुछवि अब हमने निहारी॥
विजयार्ध गिरि के सुन्दर जिनालय। पूजा करूँ मैं भवभार हो लय॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपस्थ अचलमेरुसम्बन्धि चुतस्त्रिंशतविजयार्धपर्वत-स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्ध्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद - छप्पय

चंद्रकला से भूषित हैं विजयार्ध रजतमय।
स्वर्ण ज्योति से दमक रहे हैं सब चैत्यालय॥
भव्यों को ये सदा मोक्ष का मार्ग बताते।
वीतराग सर्वज्ञ स्वपद उर में दर्शाते॥
तीनसहस छह शतक बहत्तर चैत्यगृहों के मध्य हैं।
स्वर्णमयी जिनगेह सब बार-बार दृष्टव्य हैं॥

छंद - सोरठा आचलीबद्ध, चाल-मारी दीन तणी सुन वीनती

प्राणी आत्मस्वभाव जगाइये।
जो ले जाए भवपार, ऐसा ज्ञान उपाइये॥
प्राणी धर्म अहिंसा पालिये।
जीवों की दया विचार, सर्व पापमल हानिये॥
प्राणी सत्य धरम उर धारिये।
भाव असत्य निवार, अपना रूप निहारिये॥
प्राणी धर्म अचौर्य सुपालिये।
पर का ग्रहण निवार, पर से राग हटाइये॥
प्राणी ब्रह्मचर्य व्रत पालिये।
सर्व कुशील निवार, शील स्वभाव सजाइये॥
प्राणी अपरिग्रह उर धारिये।
मूर्छा को कर क्षार, इच्छा सर्व जलाइये॥

प्राणी पंचमहाव्रत पालिये।
पाओ भव का पार, अब तो शिवपुर जाइये॥
प्राणी अप्रमत्त बन जाइये।
श्रेणी चढ़ इस बार, शुक्ल ध्यान ही ध्याइये॥
प्राणी रत्नत्रय आराधिये।
ले समयसार का सार, त्रिभुवन पति बन जाइये॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपस्थ अचलमेरुसबन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वत स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

अचलमेरु विजयार्ध जिनालय सविनय पूजे हर्षित हो।
वृषभ चिन्ह का ध्वज आरोहण करते स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

भजन

हे प्रभो ! चरणों में तेरे आ गये।
भावना अपनी का फल पा गये॥टेक॥
वीतरागी हो तुम्हीं सर्वज्ञ हो।
मुक्ति का मारग तुम्हीं से पा गये॥१॥
विश्व सारा है झलकता ज्ञान में।
किन्तु प्रभुवर लीन है निज ध्यान में॥
ध्यान में निज ज्ञान को हम पा गये॥२॥
तुमने बताया जगत के सब आत्मा।
द्रव्य-दृष्टि से सदा परमात्मा॥
आज़ निज परमात्मा पद पा गये॥३॥

पूजन क्रमांक-१९

अचलमेरु संबंधी षटकुलाचल जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – हरिगीतिका

दक्षिणोत्तर अचलगिरि हैं गगनचुम्बी षटकुलाचल।
हिमवन महाहिमवान निषधरु नील उज्ज्वल मुकुट भूतल॥
रुक्मि शिखरी पर बड़े द्रह सलिल जल से भरे निर्मल।
मध्य में प्रत्येक पर हैं एक पृथ्वीकाय सु कमल॥
श्री ह्री धृति कीर्ति बुद्धि सु लक्ष्मी के भवन सुन्दर।
पर्वतों पर षट जिनालय स्वर्णमय अकृत्रिम मनहर॥
दे रहे सन्देश शक्ति अनन्त का है आत्मा घर।
बिम्ब छह सौ और अड़तालीस पूजूँ उर विनय धर॥

दोहा

शक्ति अनन्तानन्त से मंडित हैं भगवान।
मुख्य शक्तियाँ जानिए सैंतालीस प्रधान॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमधातकीखण्डद्वीपस्थ अचलमेरुसम्बन्धि षटकुलाचलस्थित जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छंद – दिग्वधू

उज्ज्वल स्वभाव जल से त्रय व्याधियाँ मिटाऊँ।
जीवत्व शक्ति अपनी इस बार मैं जगाऊँ॥
जिनगेह षटकुलाचल मैं बार-बार ध्याऊँ।
परमात्म तत्त्व अपना शाश्वत अपूर्व पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल स्वभाव चंदन भवताप नाशहारी।
चितशक्ति की प्रभा भी चैतन्य से न न्यारी॥ जिन०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल स्वभाव अक्षत अक्षय स्वपद प्रदाता।
है शक्ति ज्ञान दर्शन की प्राप्ति में सुख्याता॥
जिनगेह षटकुलाचल मैं बार—बार ध्याऊँ।
परमात्म तत्त्व अपना शाश्वत अपूर्व पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल स्वभाव कुसुमांजलि कामव्यथा नाशक।
है ज्ञान शक्ति अपनी केवल स्व-पर प्रकाशक॥ जिन०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामवाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल स्वभाव के चरु हैं क्षुधारोग हारी।
सुखशक्ति आत्मा की आनंदमयी भारी॥ जिन०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धी-षटकुलाचलस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल स्वभाव दीपक अज्ञान नाशकारी।
है वीर्य शक्ति अनुपम अतुलित स्वबल की धारी॥ जिन०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय निर्वपामीति दीपं स्वाहा।

उज्ज्वल स्वभाव की ही यह धूप कर्म नाशक।
प्रभुत्व शक्ति निज की प्रभुता परम प्रदायक॥ जिन०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल स्वभाव के फल हैं मोक्ष पद प्रदाता।
विभुत्व शक्ति विभुतामय रत्नत्रय की दाता॥ जिन०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल स्वभाव अर्घ्यों से पद अनर्घ्य पाऊँ।
सामर्थ्य सर्वदर्शित्व शक्ति उर बसाऊँ॥ जिन०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद प्रप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

छन्द—दिग्बध्

दक्षिण दिशा अचलगिरि हिमवान श्रृंग जाऊँ।
ग्यारहवें कूट इक पर जिनगेह सदा ध्याऊँ॥
सर्वज्ञ शक्ति अनुपम सर्वज्ञ दशा पाऊँ।
स्वच्छत्व शक्ति दर्पण सम निज स्वरूप ध्याऊँ॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-हिमवानपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हिमवान महापर्वत जिनराज गेह ध्याऊँ।
प्रगटा प्रकाश शक्ति आतम प्रकाश पाऊँ॥
असंकुचित विकासत्व शक्ति निज विकासूँ।
शक्ति अकार्य-कारण, कर्तृत्व-पर हटाऊँ॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-महाहिमवानपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवकूट निषध गिरि पर मैं एक कूट ध्याऊँ।
परिणम्य-परिणामकत्व की शक्ति शुद्ध भाऊँ॥
त्याग-उपादान शून्य शक्ति हृदय धर लूँ।
अगुरुलघुत्व शक्ति परमात्म दशा वर लूँ॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-निषधपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है नील शिखर नीलाभ सिद्धभवन जाऊँ।
उत्पाद-व्यय ध्रुवत्व से सत्स्वरूप पाऊँ॥
परिणाम शक्ति द्वारा परिणाम शुद्ध कर लूँ।
शक्ति अमूर्तत्व निज छवि अमूर्त वर लूँ॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-नीलपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है रुक्मि शिखर रूपामय ध्यान निज लगाऊँ।
बन कर अकर्ता अपनी अकर्तृत्व शक्ति पाऊँ॥

शक्ति अभोक्तृत्व मैं हूँ सदा अभोक्ता।
है निष्क्रियत्व शक्ति अक्रिय स्वरूपद्योता ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-रुक्मिपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरी शिखर पै जाऊँ निज भावना जगाऊँ।
मैं नियत प्रदेशत्व की शक्ति हृदय लाऊँ॥
स्वधर्म-व्यापकत्व निज शक्ति को सजाऊँ।
साधारण असाधारण सम असम शक्तिपाऊँ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-शिखरीपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सोरठा

अचलमेरु सुप्रसिद्ध, चैत्यालय षटकुलाचल।
धर्म अनंते सिद्ध, अनेकान्तमय हैं अचल॥
अर्घ्य चढ़ाऊँ पूर्ण, ज्ञानभाव से विनय युत।
निजशुद्धात्म महान, बार-बार वंदन करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद – ताटंक

है विरुद्ध-धर्मत्व-शक्ति तत अततरूप मयता वाली।
तत्त्वशक्ति है मोह राग-द्वेषादि दोष हरने वाली॥
शक्ति अतत्व आत्मा को पर से करती है भिन्न सदा।
है एकत्व शक्ति अपनी अपने से पूर्ण अभिन्न सदा॥
अनेकत्व की शक्ति सर्व पर्यायें एक समय का सत।
भावशक्ति के कारण होती है पर्याय द्रव्य में नित॥
शक्ति अभाव, विद्य[१] मे होती अन्य अवस्था नहीं कदा।
भाव-अभाव शक्ति बतलाती व्यय होती पर्याय सदा॥

---

१. विद्य = वर्तमान पर्याय में

शक्ति अभाव-भाव, आगामी परिणति होने वाली है।
भाव-भाव शक्ति कहती, पर्याय अवश्यंभावी है॥
शक्ति अभाव-अभाव कह रही अनहोनी होती न कभी।
भाव शक्ति से षट्कारक से सहित वस्तुएँ सदा सभी॥
क्रिया शक्ति से क्रिया-भावमय होता है नित वस्तु स्वरूप।
कर्म शक्ति से प्राप्त भावमय रहे सदा चेतन चिद्रूप॥
है कर्तृत्व शक्ति, अंतर में दुख से करती है उद्धार।
करण शक्ति, निज साधन मय ले होता जीव जगत के पार॥
संप्रदान की शक्ति स्वयं को निर्मलता प्रदान करती।
अपादान की शक्ति जागृत हो भव-भाव त्वरित हरती॥
शक्ति अधिकरण अपना ही आधार आत्मा लेता है।
बस संबंध शक्ति से स्व-स्वामित्व स्वयं का वेत्ता है॥
सैंतालीस शक्तियाँ निज की जानूँ निज कल्याण करूँ।
इन्हें प्रगट करके हे स्वामी महा मोक्ष निर्वाण वरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

अचल षटकुलाचल के जिनगृह हमने पूजे हर्षित हो।
कमल चिन्ह के ध्वज आरोहण करते स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक-२०

अचलमेरु संबंधी दक्षिणोत्तर द्वय इष्वाकार जिनालय पूजन

स्थापना

वीरछंद

द्वीप धातकी दक्षिणोत्तर अचलमेरु द्वय इष्वाकार।
द्वय पर्वत पर द्वय चैत्यालय दर्शन से होता भ्रम क्षार॥
दोनों में दो-सौ-सोलह जिनबिम्ब रत्नमय शोभावान।
आओ श्री जिनराज पधारो मम अन्तर में हे भगवान॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-दक्षिणोत्तरद्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छंद – विजया

ज्ञान की चांदनी ने कहा एक दिन, तू अंधेरे में कब तक करेगा विराम।
शुद्ध जल से न्हवन कर तू निज में समा, अपने परमात्मा को तू करले प्रणाम॥
इष्वाकार सुगिरि दक्षिणोत्तर अचल, मेरुद्वय जिनभवन अकृत्रिम स्वर्णमय।
शाश्वत शुद्ध चैतन्य परमात्मा, आज दर्शन करूँ नाश कर सप्तभय॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान चन्दन ने मस्तक छुआ ही नहीं, भव के संताप से ही दुखी मैं हुआ।
अपने परमात्मा को तो देखा नहीं इसलिए न कभी प्रभु सुखी मैं हुआ॥इष्वा०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान अक्षत की महिमा तो जानी नहीं, पाया अक्षय स्वपद मैंने पल भर नहीं।
निज की शुद्धात्मा मुझको भायी नहीं, फैंका भवभार भी एक तिल भर नहीं॥इष्वा०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान के पुष्प चुनचुन के लाया नहीं, काम की वेदना से दुखी ही रहा।
रूप निष्काम अपना सुहाया नहीं, स्वर्ग में भी कभी ना सुखी ही रहा॥
इष्वाकार सुगिरि दक्षिणोत्तर अचल, मेरुद्वय जिनभवन अकृत्रिम स्वर्णमय।
शाश्वत शुद्ध चैतन्य परमात्मा, आज दर्शन करूँ नाश कर सप्तमय॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानरस के सुचरु मैंने पाये नहीं, क्षुधा व्याधि ने प्रभु दिये दुख बहुत।
पाता परिपूर्ण तृप्त स्वभाव अगर, फिर तो होता मुझे शाश्वत सुख बहुत॥ इष्वा०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानमय दीप की ज्योति देखी नहीं, मोह-तम को मैं कैसे मिटाता प्रभो।
भेद-विज्ञान होता हृदय में अगर, ज्ञान कैवल्य संपूर्ण पाता विभो॥ इष्वा०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानमय धूप की गंध लाता अगर, कर्म आठों जलाता सदा को प्रभो।
शुक्ल ध्यानों की लेकर सहज श्रृंखला, सिद्धपुर में ही रहता सदा को विभो॥ इष्वा०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान के शिवमयी फल न पाए कभी, मोक्षपद कैसे मिलता यह बतलाइये।
है नयातीत होने की क्या कुछ कला, आज हे नाथ मुझको भी समझाइये॥ इष्वा०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान के अर्घ्य मैंने चढ़ाए नहीं, मैंने देखा अनर्घ्य स्वपद न कभी।
चारों गतियों की भंवरों में भ्रमता रहा, वीतरागी स्वपद भी न पाया कभी॥ इष्वा०॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि-द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

छन्द - सरसी

खंडधातकी द्वीप द्वितीय दक्षिणदिशि इष्वाकार।
चार कूट में एक कूट जिन शिवसुख मंगलकार॥

चार लाख योजन लम्बा है विस्तृत एक सहस।
चार शतक योजन ऊँचा पर्वत स्वर्णिम है बस॥
लवण उदधि से कालोदधि के तट तक इसका नाप।
शुद्ध भावना से जिन पूजूँ नाशूँ भव संताप॥१॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि दक्षिणदिशि इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खंड धातकी उत्तरदिशि में पर्वत इष्वाकार।
चार लाख योजन लंबा विस्तृत इक सहस निहार॥
चार शतक योजन ऊँचे पर चारकूट हैं दिव्य।
एक कूट पर श्री जिनमंदिर शोभाशाली भव्य॥
लवण उदधि से कालोदधि तट तक ही सीमा है।
स्वर्णमयी पर्वत है सुन्दर अद्भुत महिमा है॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि उत्तरदिशि इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद – भुजंगप्रयात

स्वपरभेद-विज्ञान उर में जगाऊँ।
महामोह मिथ्यात्व का भ्रम भगाऊँ॥
प्रभो ज्ञान सम्यक्त्व चारित्र संयम।
इसीका स्वबल ले मैं शिवपुर में जाऊँ॥

छंद – शार्दूलविक्रिड़ित

शिवसुख से आपूर्ण नाथ मैं हूँ मुझको पता ही नहीं।
चारों गतियों में सदैव घूमा पाया नहीं सुख कहीं॥
इष्वाकार जिनेन्द्र गेह पूजूँ प्रभु रहूँ निज-कुंज में।
निज चैतन्य-स्वभाव भाव बल से भव्य प्रभा पुंज में॥

ॐ ह्री श्री अचलमेरुसम्बन्धि दक्षिणोत्तरदिक्षु द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

सात तत्त्व को जानकर, करूँ भेद-विज्ञान।
पर द्रव्यों से भिन्न निज, जीवतत्त्व को जान॥

छंद - पद्धटिका

शुभ-अशुभ आस्रव को पिछान, ये बंधमयी दुःखमय महान।
है अशुभ आस्रव कुगति भूत, वसु कर्मों को करते प्रसूत॥
शुभ आस्रव सातामयी जान, स्वर्गादिक करते हैं प्रदान।
जब हो जाते संपूर्ण शेष, जाता निगोद में यह चिदेश॥

यह क्रम न कभी टूटा प्रसिद्ध, बंधन से ही मैं रहा बिद्ध।
संवर से यह डरते त्रिकाल, मिट जाते इनके मोह जाल॥
जो बंध पूर्व में हुए कर्म, झर जाते पा निर्जरा धर्म।
जब सब झर जाते बद्ध कर्म, प्राणी हो जाते सिद्ध पर्म॥

मेरा स्व-काल आया सुनाथ, सम्यक्दर्शन का मिले साथ।
मैं निज में आऊँ इस प्रकार, आस्रव को कर दूँ क्षार-क्षार॥
स्वयमेव मिटेंगे कर्मबंध, क्षय होगा प्रभु संसार द्वंद।
होगा अनंत गुण का विकास, शिवपुर में ही होगा निवास॥

छंद - मंदाक्रान्ता

कुछ समयों में प्रकट करके पावनी ज्ञानधारा।
पल भर में मिथ्यात्व शत्रु जीत लूँ आज सारा॥
पाओगे शुद्धात्म अपना आज अनमोल न्यारा।
क्षण भर में कट जाए निश्चित दुखमयी कर्म कारा॥

ॐ ह्रीं श्री अचलमेरुसम्बन्धि दक्षिणोत्तरदिक्षु द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

अचल मेरु इष्वाकारों के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
गजचिन्हांकित ध्वज आरोहण करता स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण संपति मिले जिनेश॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक-२१

पूर्व पुष्करार्ध द्वीपस्थ मंदरमेरु स्थित सोलह जिनालय पूजन

स्थापना

दोहा

मंदर-मेरु प्रसिद्ध से, संबंधित छविमान।
जिनमंदिर हैं अठत्तर, अनुपम दिव्य महान॥
श्री जिनवर दर्शन करूँ, आतम दर्शन होय।
स्याद्वाद ध्वज फहरता, संशय विभ्रम खोय॥

छंद – चांद्रायण

सोलह लाख सुयोजन पुष्कर द्वीप है।
मध्य मानुषोत्तर पर्वत सु समीप है॥
तृतिय द्वीप का अर्द्ध भाग है पुष्करार्ध।
पूर्व दिशा मंदर-सुमेरु पूजूँ निजार्थ॥
तृतिय द्वीप को घेरे पुष्करवर उदधि।
है योजन बत्तीस लाख यह नीर-निधि॥

छंद – गीतिका

धर्म से होकर प्रभावित मेरु-मंदर जाइये।
चार वन में जिनालय सोलह उन्हें ही ध्याइये॥
सहस चौरासी सु योजन उच्च है पर्वत प्रधान।
गूँजते तीर्थंकरों के जन्म पर शुभ यशोगान॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्धद्वीपे मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्वाननम्)।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्धद्वीपे मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ ठः ठः (इति स्थापनम्)।

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्धद्वीपे मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (इति सन्निधिकरणम्) (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

छंद—सखी

निर्जरा नीर मैं लाऊँ, संवर के गीत सुनाऊँ।
मंदर-सुमेरु के जिनगृह, पूजूँ मैं होकर निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं.....

निर्जरा स्वचंदन लाऊँ, प्रभु भव-ज्वर दाह मिटाऊँ।
मंदर-सुमेरु के जिनगृह, पूजूँ मैं होकर निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं.....

निर्जरा सुअक्षत लाऊँ, निज अक्षय पद प्रगटाऊँ।
मंदर-सुमेरु के जिनगृह, पूजूँ मैं होकर निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं.....

निर्जरा सुपुष्प चढ़ाऊँ, मकरध्वज पीर मिटाऊँ।
मंदर-सुमेरु के जिनगृह, पूजूँ मैं होकर निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं.....

निर्जरामयी चरु लाऊँ, निज ध्रुव धुन नित्य लगाऊँ।
मंदर-सुमेरु के जिनगृह, पूजूँ मैं होकर निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं.....

निर्जरा ज्योति निज लाऊँ, अपना अज्ञान मिटाऊँ।
मंदर-सुमेरु के जिनगृह, पूजूँ मैं होकर निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिबिम्बेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं.....

निर्जरा स्व-धूप चढ़ाऊँ, कर्मों के बंध हटाऊँ।
मंदर-सुमेरु के जिनगृह, पूजूँ मैं होकर निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं.....

निर्जराभाव-फल लाऊँ, मैं शिवफल अनुपम पाऊँ।
मंदर-सुमेरु के जिनगृह, पूजूँ मैं होकर निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं.....

निर्जरा स्वअर्घ्य बनाऊँ, पदवी अनर्घ्य प्रकटाऊँ।
मंदर-सुमेरु के जिनगृह, पूजूँ मैं होकर निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं.....

अर्घ्यावलि

छंद - पीयूषवर्षी

भूमि भूधर भद्रशाल महान है।
दिशा पूरब जिनालय भगवान है॥
आत्मतत्व अपूर्व की ही प्रभा है।
ज्ञानछवि कैवल्य की ही विभा है॥१॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ भद्रशालवनस्थित-पूर्वादिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दिशा दक्षिण जिनालय भगवान का।
मिला अवसर कर्म के अवसान का॥
ज्ञानज्योति प्रकाश जितना चाहिये।
आत्मा में आत्मा से पाइये॥२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ भद्रशालवनस्थित-दक्षिणदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दिशा पश्चिम में जिनालय श्रेष्ठ है।
भाव-पर सारा सदा ही नेष्ठ है॥
अतीन्द्रिय आनन्द पूरा आयगा।
सिद्धपुर का निमंत्रण मिल जायगा॥३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ भद्रशालवनस्थित-पश्चिमदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दिशा उत्तर जिनालय स्वर्णिम लखो।
आत्मा के स्वाद को अब तो चखो॥
ज्ञान रवि कैवल्य की किरणावली।
प्रगट होने में न लगती आवली॥४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ भद्रशालवनस्थित-उत्तरदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

सुवन नंदन पर जरा ऊपर चलो।
पूर्व जिनगृह देख भव कंटक दलो॥
बंध के जो भाव हैं वे हेय हैं।
शुद्ध भाव सदैव पूर्ण उपेयहै॥५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ नंदनवनस्थित-पूर्वदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

सुवन नंदन की दिशा दक्षिण गहन।
रागजित को भाव से कर लो नमन॥
पारिणामिक भाव सबके पास है।
किन्तु फिर भी क्यों नहीं विश्वासहै॥६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ नंदनवनस्थित-दक्षिणदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

सुवन नंदन दिशा पश्चिम जाइये।
जिनभवन को पूज निज घर आइये॥
आज ही सम्यक्त्व पाना चाहिए।
शीघ्र ही शुद्धात्मा अपनाइए॥७॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ नंदनवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

रम्य वन नंदन दिशा उत्तर सही।
पूजिये जिनराज फिर भव-दुख नहीं॥
आत्मा परमात्मा बन जायगा।
गीत यह जग आपही के गायगा॥८॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ नंदनवनस्थित-उत्तरदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

सौमनस वन की लखो हरियालियाँ।
पूर्व-गृह पूजन सजाओ थालियाँ॥
सप्तछद सुअशोक चंपक आम्र तरु।
देवक्रीड़ा भूमि भी है यह प्रवर॥९॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ सौमनसवनस्थित-पूर्वदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

सौमनस दक्षिण दिशा में जाइये।
भवन श्री जिनराज का ही ध्याइये॥

आत्म की अनुभूति ही जिनधर्म है।
शेष आस्रव-बंधमय सब कर्म है॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ सौमनसवनस्थित-दक्षिणदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

सौमनस पश्चिम दिशा सुविशाल है।
श्रेष्ठ जिनगृह इस जगत का भाल है॥
स्वानुभूति महान का आनंद लो।
भव्य अपनी आत्मा सुखकंद लो॥११॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ सौमनसवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

सौमनस उत्तर दिशा क्यों ना जती।
स्वर्णमय जिन-भवन से यह साजती॥
आत्मा प्रभु है सदा विभु है सदा।
आत्मा के गीत गाओ सर्वदा॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ सौमनसवनस्थित-उत्तरदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

मेरु पांडुकवन जिनालय पूर्व में।
पूजिये जिनदेव भक्ति अपूर्व में॥
भाव औपाधिक समस्त मिटाइये।
सर्व कर्मावरण पूर्ण हटाइये॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ पांडुकवनस्थित-पूर्वदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दिशा दक्षिण पांडुकवन जाइये।
जिनालय है स्वर्णमय जो ध्याइये॥
चार भावों का न आश्रय लीजिये।
पारिणामिक भाव सन्मुख कीजिये॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ पांडुकवनस्थित-दक्षिणदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दिशा पश्चिम पांडुक वन सोहता।
इन्द्र सुर विद्याधरों को मोहता॥
सुमति का ही अनुसरण कीजे सदा।
कुमति का अनुसरण तजकर सर्वदा॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ पांडुकवनस्थित-पश्चिमदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

दिशा उत्तर पांडुक वन दिव्य है।
जिनालय अरहंत का अति भव्य है॥
तत्त्व का अभ्यास संग में जाएगा।
रुचि जगी तो आत्मा में आएगा॥ १६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरौ पांडुकवनस्थित-उत्तरदिक् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पूर्णार्घ्य

छंद – तिलोकी

गिरि सुमेरु मंदर सोलह गृह पूजिये।
नर-पर्याय सुकीजे सफल महान अब॥
समकित का ही पूर्ण अर्घ्य अब लाइए।
हो जाएगा कर्मों का अवसान तब॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

छंद – श्रृंगार

रहा मैं परभावों में चूर, नहीं देखा निज आत्मस्वरूप।
किए हैं सदा कर्म के बंध, न पाया निज शुद्धात्मस्वरूप॥
सहस्रों बार लिया मुनिव्रत, गया ग्रैवेयक के भी द्वार।
वहाँ भी स्वर्ग सुखों का लोभ, गिरा ग्रैवेयक से हर बार॥
बिना सम्यक्त्व भ्रमा जगबीच, न पाया दुख का मैंने अंत।
कभी पाया न भेद-विज्ञान, कर्म भी बँधते रहे अनंत॥
कभी प्रगटा नहिं संवर तत्त्व, किया परसे ही सदा ममत्व।
बिना समकित के निज को भूल, न पाया मैंने कभी समत्व॥
सदा ही भाये मुझे विभाव, न निरखा अपना शुद्धस्वभाव।
हुई समता से कभी न प्रीति, न जागा उर में आत्म स्वभाव॥
प्रभो होवे मेरा दुःख दूर, मुझे दो आत्म शक्ति बलवान।
निरंतर करूँ आत्मकल्याण, मिले मुझको भी प्रभु निर्वान॥

छंद — सवैया-इकतीसा

आजतक जीव तूने किया मोह-मद पान,
माता जिनवाणी से भी गया तू बहक-बहक।
फिर यह नर-तन तूने पाया बड़े भाग्य,
आत्मरस पी ले आस्था से तू चहक-चहक॥
शुद्ध सम्यक्त्व की पवन दशों दिशा चली,
अब संसार ज्वाल में न तू दहक-दहक।
माता भारती की सीख बावरे तू मान ले रे,
अपनी स्वभाव गंध से ही तू महक-महक॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे मंदरमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछन्द

मंदरमेरु सुचारों वन के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
माला चिन्ह विभूषित ध्वजा चढाएँ स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो, जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

आओ रे आओ रे ज्ञानानन्द की डगरिया
तुम आओ रे आओ, गुण गाओ रे गाओ
चेतन रसिया आनन्द रसिया ॥टेक॥
बड़ा अचम्भा होता है, क्यों अपने से अनजान रे।
पर्यायों के पार देख ले, आप स्वयं भगवान रे॥१॥
दर्शन-ज्ञान स्वभाव में, नहीं ज्ञेय का लेश रे।
निज में निज को जानकर तजो ज्ञेय का वेश रे॥२॥
मैं ज्ञायक मैं ज्ञान हूँ, मै ध्याता मैं ध्येय रे।
ध्यान ध्येय में लीन हो, निज ही निज का ज्ञेय है॥३॥

पूजन क्रमांक - २२

मंदरमेरु संबंधी चार गजदंत जिनालय पूजन

स्थापना

छंद – राधिका

मंदर-सुमेरु गजदंत जिनालय पावन।
नव-जीवन दाता भव्य जीव मनभावन॥
आग्नेय और नैऋत्य दिशा में जाओ।
वायव्य कोण ईशान दिशा में आओ॥
हैं महिमावंत रत्नमय जिन प्रतिमाएँ।
संस्तवन भाव भीने स्वर में हम गाएँ॥
अब आओ हे जिनराज पधारो उर में।
परिणति में तिष्ठो गुण गाऊँ मधु स्वर में॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्धद्वीपस्थ मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)।

छंद – राधिका

जल लाऊँ केसरी द्रह से शीतल निर्मल।
जन्मादिरोग नाशक स्वभाव निज उज्ज्वल॥
मंदर-सुमेरु गजदंत चार गृह पावन।
नवजीवन दाता भव्य जीव मन भावन॥

ॐ ह्रीं श्री मन्दरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा

चंदन सुगंधमय नंदन वन से लाऊँ।
भवज्वर को अब तो पूरा शान्त बनाऊँ॥ मंदर०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूट-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

जाकर नमेरु तरु उत्तम अक्षत लाऊँ।
अक्षय पद पाने को प्रभु अग्र चढ़ाऊँ॥
मंदर सुमेरु गजदंत चार गृह पावन।
नवजीवन दाता भव्य जीव मन भावन॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्कर शाल्मलि तरु पुष्प बीन कर लाऊँ।
निष्काम शील भावना सदा ही भाऊँ॥मंदर०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरु सम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पद्रुम से नैवेद्य रस भरे लाऊँ।
प्रभु क्षुधा रोग संपूर्ण जीत मैं जाऊँ॥मंदर०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गदन्तपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नाकर से मैं रत्नदीप ले आऊँ।
मोहान्धकार पर पलभर में जय पाऊँ॥मंदर०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्रुवधाम धूप की निज सुगंध में लाऊँ।
वसु कर्म जीतकर सिद्धपुरी मैं जाऊँ॥मंदर०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल पांडुक वन से मंगलकारी लाऊँ।
निर्वाण मोक्षफल स्वाद सदा ही पाऊँ॥मंदर०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्रप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

देवोपम द्रव्य सजा वसु अर्घ्य बनाऊँ।
निरुपम अनर्घ्यपद एक समय में पाऊँ॥मंदर०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

चौपई

आग्नेय दिशि में गजदंत, रजत सौमनस महिमावंत।
सप्तकूट में एक महान, जिन चैत्यालय गरिमावान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरोः आग्नेयविदिशि सौमनसगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युत्प्रभ नैऋत्य प्रसिद्ध, नवकूटों में एक सुसिद्ध।
पद निर्वाण शीघ्र कर प्राप्त, हो जाऊँ शिवसुख से व्याप्त॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरोः नैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णिम गंधमादनाचल, सप्तकूट में एक विमल।
गृह वायव्य कोण भगवंत, दशा प्राप्त कर लूँ अरहंत॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरोः वायव्यविदिशि गन्धमादनाचलपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माल्यवान गिरि दिशि ईशान, नवकूटों में एक प्रधान।
स्वर्णिम जिन मंदिर सुविशाल, करूँ वन्दना नाथ त्रिकाल॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरोः ईशानविदिशि माल्यवानपर्वतस्थित-सिद्धकूट-जिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद – रास

नर जीवन भी हाय पूर्ण बेकार हुआ।
मोह महामद पिया दीर्घ संसार हुआ॥
जब प्रभुदर्शन कर आनंद अपार हुआ।
निश्चित अब तो चुल्लू भर संसार हुआ॥
स्वर्ग सुखों का स्वप्न क्षणिक में भंग हुआ।
निज स्वभाव का अब तो उत्तम रंग हुआ॥

पुलकित मेरा रोम रोम हर अंग हुआ।
इस फागुन में ही समकित का ही रंग हुआ॥

छंद – मधुवल्लरी

गजदंत चार सुमेरु के महिमामयी।
विदिशा सुशोभित विश्व में गरिमामयी॥
परिणाम पुद्गल से सदा मैं भिन्न हूँ।
पूर्ण अर्घ्यं चढ़ा प्रभो मैं धन्य हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद – गीतिका

आत्म श्रद्धा से सहज है लाभ की शुभ कामना।
यही शिवपथ है अनूठा मुक्ति की हो भावना॥
निर्विकल्प स्वरूप अपना निरख ले निज भान से।
यही प्रोहण रत्नत्रय जोड़े सदैव स्वभाव से॥
हो रहा सम्यक्त्व द्वारा आत्मा का अभ्युदय।
फिर स्वरूपाचरण द्वारा जीव हो जाता अभय॥
तनिक साधारण विवेक स्वहितमयी जागे प्रथम।
भेदज्ञान महान द्वारा जाएगा मिथ्यात्व भ्रम॥
द्रव्य-पर में कल्पना निज की महान विडंबना।
मोह ममता त्याग कीजे आत्मा की चिन्तना॥
अधिगमज या निसर्गज सम्यक्त्व होगा प्राप्त जब।
ज्ञानमय चारित्र सम्यक् निकट होगा श्रेष्ठ तब॥
मोह भाव अनिष्टकारी नष्ट होगा स्वयं ही।
आस्रव शुभ-अशुभ सारा भ्रष्ट होगा स्वयं ही॥
क्षमा धर्म स्वभाव से तू ज्ञान का कर सदुपयोग।
शुद्ध संवर निर्जरा से कर्म का होगा वियोग॥

ज्ञान द्वारा ज्ञान को तू ज्ञान में ही रमा ले।
एक अपने आत्मा को ज्ञान से ही जमा ले॥
आस्रव अरु बंध संवर निर्जरा अरु मोक्ष पाँच।
प्रथम द्वय के नाश से बुझ जायगी संसारी ऑच॥

छंद – उपजाति

जो सर्व जाने सर्वज्ञता है।
चैतन्य प्रभु की आत्मज्ञता है॥
एकत्व निश्चय की प्राप्ति सुन्दर।
सम्यक्त्वमय है निज भाव मनहर॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

मंदरमेरु सुगजदंतों के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
सिंह चिन्ह की ध्वजा चढ़ाएँ अंतर्मन से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

देख तेरी पर्याय की हालत क्या हो गई भगवान।
तू तो गुण अनंत की खान।
चिदानन्द चैतन्य राज क्यों अपने से अनजान।
तुझ में वैभव भरा महान॥टेक॥

बड़ा पुण्य अवसर यह आया, श्री जिनवर का दर्शन पाया।
जिनने निज को निज में ध्याया, शाश्वत सुखमय वैभव पाया॥
इसीलिये श्री जिन कहते है, कर लो भेद-विज्ञान॥१॥

तन-चेतन को भिन्न पिछानों, रत्नत्रय की महिमा जानो।
निज को निज पर को पर जानो, राग भाव से मुक्ति मानो॥
सप्त तत्व की यही प्रतीति देगी मुक्ति महान॥२॥

पूजन क्रमांक-२३

मंदरमेरु संबंधी पुष्कर एवं शाल्मलि वृक्ष जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - पीयूषवर्षी

पुष्करार्ध महान की पूरब दिशा।
मेरु मंदर की विरल उत्तर दिशा॥
एक पुष्कर तरु दिशा ईशान में।
शाख उत्तर जिन-भवन नभयान में॥
देवकुरु नैऋत्य कोण प्रसिद्ध है।
शाल्मलि-तरु भूमि- कायिक सिद्ध है॥
शाख दक्षिण पर जिनालय शोभता।
देव सुरपति आदि के मन मोहता॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थित-मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

चौपई

गंगाजल लेकर उत्कृष्ट, नाशूँ त्रिविध ताप निकृष्ट।
वृक्षद्वय जिनभवन महान, जिनपूजन से निज कल्याण॥

ॐ ह्री श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जलं...

चंदन मलय सुगंधी सार, भव आतप नाशे दुःखकार।
वृक्षद्वय जिनभवन महान, जिनपूजन से निजकल्याण॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो चंदनं.....

ले अक्षत अति महिमावान, अक्षय पद पाऊँ निर्वाण।
वृक्षद्वय जिनभवन महान, जिनपूजन से निजकल्याण॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों की ले दिव्य सुवास, कामभाव का कर दूँ नाश ।
वृक्षद्वय जिनभवन महान, जिनपूजन से निजकल्याण ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं....

चरु लाऊँ मैं जगत प्रसिद्ध, क्षुधा व्याधि हर होऊँ सिद्ध ।
वृक्षद्वय जिनभवन महान, जिनपूजन से निजकल्याण ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं.

ज्योतिर्मय निज दीप प्रजाल, हर मिथ्यात्व मोह जंजाल ।
वृक्षद्वय जिनभवन महान, जिनपूजन से निजकल्याण ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो दीपं....

धूप सुवासित पर से भिन्न, अष्टकर्म हों निर्बल छिन्न ।
वृक्षद्वय जिनभवन महान, जिनपूजन से निजकल्याण ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो धूपं.....

फल लाऊँ मैं गरिमावान, पाऊँ महा मोक्ष निर्वाण ।
वृक्षद्वय जिनभवन महान, जिनपूजन से निजकल्याण ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो फलं.

लाऊँ अर्घ्य अनेक प्रकार, पाऊँ पद अनर्घ्य अविकार ।
वृक्षद्वय जिनभवन महान, जिनपूजन से निजकल्याण ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.

अर्घ्यावलि

चौपई

मंदरमेरु सु पष्कर वृक्ष, तरु ईशान दिशा प्रत्यक्ष ।
उत्तरकुरु भू-भोग विशाल, पुण्य भोग का क्षेत्र सुकाल ॥
परभावों का कर अवसान, निजस्वभाव में करूँ प्रयाण ।
ध्वजा चढ़ाऊँ मंगलकार, भव्य जिनालय शिव सुखकार ॥१ ॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्व पुष्करार्धद्वीपस्थ-मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करवृक्षस्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मंदरमेरु शाल्मलि वृक्ष, गृह नैऋत्य कोण प्रत्यक्ष।
भोगभूमि देवकुरु जान, दक्षिण दिशि में सातावान॥
निजभावों की ध्वजा महान, आज चढ़ाऊँ मैं मतिवान।
पूजूँ मन-वन-काय सँवार, भव्य जिनालय शिवसुखकार॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थ-मंदरमेरुसम्बन्धि-शाल्मलिवृक्ष स्थित-जिनालयजिन बिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सोरठा

पुष्कर शाल्मलि वृक्ष, पूजूँ मंदरमेरु के।
दो-सौ-सोलह बिम्ब, पूर्ण-अर्घ्य अर्पण करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थ-मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वय स्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

दर्शन ज्ञान स्वभाव में, रमना ही पुरुषार्थ।
मोह-क्षोभ का क्षय करूँ, यही मुक्ति सत्यार्थ॥

वीरछंद

दर्शनभूत अतीन्द्रिय ज्ञानात्मक निजात्म का ही लूँ स्वाद।
पंच बंध के सर्व विवादों को प्रभु क्षय कर दूँ अविवाद॥
मोह-क्षोभ से रहित आत्मा का स्वभाव ही है समभाव।
साम्यभाव परिणामों द्वारा पर-विभाव का करूँ अभाव॥
रागात्मक भावों को क्षय कर रागातीत अवस्था लूँ।
वीतराग सर्वज्ञ स्वपद के ही अनुरूप व्यवस्था लूँ॥
रूप गंध रस पर्शमयी जड़ पुद्गल तन से तजूँ सनेह।
आत्मोन्मुख हो ज्ञानामृतरस का ही बरसे उर में मेह॥
जीवों का स्वभाव गौरवमय तथा अगौरवमय इतिहास।
ज्ञान और दर्शन उपयोगमयी है वस्तु करो विश्वास॥

सदा कुगतियों में भ्रमता आया हूँ शुद्ध आत्मा भूल।
पर के ही अनुकूल बना हूँ निज स्वभाव के हो प्रतिकूल ॥
ज्ञानांजन की एक शलाका का लो चमत्कार पावन।
निजस्वरूप शाश्वत सुखदाता तीन लोक में मनभावन ॥
आज जिनेश्वर को वन्दन कर निज स्वभाव में आऊँगा।
सहज शुद्ध चैतन्यराज को निज परिणति में ध्याऊँगा ॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थ मंदरमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

मेरु चतुर्थम पुष्कर शाल्मलितरु जिन पूजे हर्षित हो।
अंशुक चिन्ह विभूषित ध्वजा चढ़ाऊँ स्वामी पुलकित हो ॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश ॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

होली खेलें मुनिराज.....
होली खेले मुनिराज शिखर वन में रे अकेले वन में,
मधुवन में
मधुवन में आज मची रे होली मधुवन में
चैतन्य गुफा में मुनिवर बसते, अनन्त गुणों में केली करते
एक ही ध्यान रमायी वन में, मधुवन में.....
ध्रुवधाम ध्येयकी धूनी लगाई ध्यान की धधकती अग्नि जलाई
विभाव का ईंधन जलावें वन में, मधुवन में.....
अक्षय घट भरपूर हमारा, अन्दर बहती अमृत धारा
पतली धार न भाई मन में, मधुवन में .....
हमें तो पूर्ण दशा ही चाहिये, सादि अनंत का अनंद लहिये
निर्मल भावना भाई वन में, मधुवन में...
पिता झलक जयों पुत्र में दिखती जिनेन्द्र झलक मुनिराज चमकती
श्रेणी मांडी पलक छिन में, मधुवन में.....
नेमीनाथ गिरनार में देखी, शत्रुंजय पर पाण्डव देखी
केवलज्ञान लियो है छिन में, मधुवन में .....
बार-बार वन्दन हम करते शीश चरण में उनके धरते
भव से पार लगाये वन में, मधुवन में.....

पूजन क्रमांक-२४

मंदरमेरु संबंधी षोडश वक्षार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - मत्तगयंद सवैया

पूर्व-विदेह सुमेरु सुमंदर सीता सरिता तट पर जाओ।
पूरब पश्चिम हैं वक्षार जिनालय स्वर्णिम नितप्रति ध्याओ॥
क्षेत्र विदेह सुदक्षिण उत्तर सीतोदा के तट पर जाओ।
दोनों के सोलह वक्षार जिनेन्द्र भवन पूजो सुख पाओ॥

छंद - जलहरण

लेकर पवित्र भाव शुद्ध अपना स्वभाव,
उर में विराज अभिषेक जिनबिम्ब का।
ज्ञान की हरीतिमा की लाऊँ मैं सुगंध आज,
समभावी अक्षत स्व-पद निज प्रभुका॥
भव की विडंबना को महाशील से विनाश,
चरु दीप धूप फल लाऊँ स्वच्छ विभु का।
चंद्रमा सी ज्योति तथा सूरज सा शौर्य लेय,
समर्पण करूँ अब अर्घ्य निज विभु का॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे मन्दरमेरुसंबंधि पूर्वपश्चिमविदेहक्षेत्रस्थ षोडशवक्षारपर्वत स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

चौपाई

द्रहतिगिच्छ का नीर चढ़ाऊँ, भवपीड़ा संपूर्ण मिटाऊँ।
गिरि वक्षार जिनालय ध्याऊँ, पर परिणाम भाव विनशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल सुगिरि से चंदन लाऊँ, अब संसार ताप विनशाऊँ।
गिरि वक्षार जिनालय जाऊँ, पर-परिणाम भाव विनशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

भंद्रशालि के अक्षत लाऊँ, अक्षय पद अपूर्व मैं पाऊँ।
गिरि वक्षार जिनालय जाऊँ, पर-परिणाम भाव विनशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दन वन से पुष्प मंगाऊँ, काम बाण पीड़ा विनशाऊँ।
गिरि वक्षार जिनालय ध्याऊँ, पर-परिणाम भाव विनशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लौकांतिक नैवेद्य चढ़ाऊँ, क्षुधा व्याधि संपूर्ण मिटाऊँ।
गिरि वक्षार जिनालय ध्याऊँ, पर-परिणाम भाव विनशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्गों के दीपक उजियारूँ, मोह तिमिर अज्ञान निवारूँ।
गिरि वक्षार जिनालय ध्याऊँ, पर-परिणाम भाव विनशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशांग-धर्ममय लाऊँ, अष्ट कर्म अरि सब विनशाऊँ।
गिरि वक्षार जिनालय ध्याऊँ, पर-परिणाम भाव विनशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मन्दरमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदर मेरु सुफल ले आऊँ, परम मुक्ति फल सादर पाऊँ।
गिरि वक्षार जिनालय ध्याऊँ, पर-परिणाम भाव विनशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य स्वभाव भावमय लाऊँ, पद अनर्घ्य अविरल प्रगटाऊँ।
गिरि वक्षार जिनालय ध्याऊँ, पर-परिणाम भाव विनशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

दोहा

भद्रशाल वेदी निकट, चित्रकूट वक्षार।
ध्वजा चढ़ाऊँ आज मैं, जय-जिनेन्द्र अविकार॥१॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षारस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता उत्तर जाइये, पद्मकूट वक्षार।
मंगल ध्वजा चढ़ाइये, अनेकान्त सुखकार॥२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षारस्थित- सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता उत्तर देखिये, नलिनकूट वक्षार।
स्याद्वाद जयवन्त हो, जिनवाणी सुखकार॥३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता उत्तर निरखिये, एकशैल वक्षार।
धन्य-धन्य जिनदेव तुम, अविनाशी अविकार॥४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे एकशैलवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता दक्षिण वेदिका, देवारण्य प्रधान।
शुभत्रिकूट वक्षार को, नितवन्दूँ धर ध्यान॥५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे त्रिकूटवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता दक्षिण तट निकट, वैश्रवण वक्षार।
मंगलमय मंगलकरण, जिनशासन शिवकार॥६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वैश्रवणवक्षारास्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता दक्षिण तट निकट, शुभ अंजन वक्षार।
जिनदर्शनसे प्राप्तहो, शाश्वतसुख अविकार ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे अंजनवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता दक्षिण सरि निकट, आत्मांजन वक्षार।
वीतराग सर्वज्ञ की, धर्मध्वजा सुखकार ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे आत्मांजनवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - सोरठा

पश्चिम दिशा विदेह सीतोदा दक्षिण दिशा।
भद्रशाल शुभनाम वेदी का अब जानिये॥
है वक्षार सुनाम श्रद्धावान विचारिये।
एक-शतक-वसु बिम्ब ध्वजा चढ़ाऊँ भावमय ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटेश्रद्धावानवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा तट ओर विजटावान सुनाम है।
हैवक्षार महान मंगल धर्म ध्वजा धरूँ ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे विजटावानवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशीविष वक्षार सीतोदा दक्षिण सुतट।
रत्नबिम्ब जिनदेव ध्वजा चढ़ाऊँ हर्ष से ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे आशीविषवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाम सुखावह जान सीतोदा दक्षिण निकट।
है वक्षार प्रधान स्याद्वाद ध्वनि गूँजती ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे सुखावहवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वेदी भूतारण्य सीतोदा उत्तर दिशा।
चन्द्रमाल वक्षार अनेकान्तध्वज गगनमें ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे चन्द्रमालवक्षारस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्यमाल वक्षार सीतोदा उत्तर दिशा।
सुरपति गाते गीत सम्यग्दर्शन ध्वजसहित ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमालवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नागमाल वक्षार सीतोदा सरिता निकट।
एक-शतक-वसु बिम्ब,सम्यग्ज्ञानध्वजा धवल ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे नागमालवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवमाल वक्षार सीतोदा उत्तर सुतट।
हैं रत्निम जिनबिम्ब सम्यक्चारित्र ध्वज महा ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे देवमालवक्षार स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद - चंचला

चाहने को चाह मोक्ष हो के जरा सावधान।
कर्म जंजाल अब शीघ्र करो अवसान॥
मोह-राग-द्वेषमयी दूर करो अज्ञान।
पदवी जिनेन्द्र की मिलेगी यही है विधान॥

सोरठा

मंदर-गिरि वक्षार सोलह जिनगृह पूजिये।
पूर्णअर्घ्य के पुंज श्री जिन-चरण चढ़ाइये॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वापरविदेहस्थित-षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

हे जिन तुव उपदेश से, जाना आत्मस्वरूप।
पर द्रव्यों से भिन्न हूँ, मैं चेतन चिद्रूप॥

छंद - मत्तसवैया

ज्ञाता दृष्टा ही रहूँ सदा महके मेरा निज नंदन वन।
हो प्राप्त महा कल्याण पंच मैं सफल करूँ मानव जीवन॥
मैं ब्रह्मा विष्णु महेश बुद्ध हरि हर त्रिपुरारी शंकर हूँ।
अनुकंपा सिन्धु अचिन्त्यात्मा अति सौम्यात्मा अभ्यंकर हूँ॥
ऐसा मैं अद्भुत शक्ति निहित निज गुण अनंत महिमा मंडित।
त्रिभुवनपति हूँ त्रैलोक्यनाथ निज गौरव ध्रुव गरिमा पंडित॥
क्षय कर्म चार अरि कर क्षण में, मैं बनूँ अर्धनारीश्वर प्रभु।
मैं बनूँ चतुर्मुख अतिशय से शोभायमान बनकर सम्प्रभु॥
फिर शेष कर्म चारों क्षय कर हो जाऊँ त्रिभुवन तिलक नाथ।
ज्ञातव्य ज्ञान में सब झलके आनन्द सिन्धु का रहे साथ॥
आत्मेश बनूँ त्रैलोक्येश जगशीर्ष शिखरमणि परम भव्य।
तनुवातवलय अंतिम सीमा पाऊँ स्वामी परिपूर्ण दिव्य॥
निर्मल प्रकाश स्वच्छत्व शक्ति द्योतक पाऊँ प्रभु मैं अपूर्व।
जयगीत भव्य गूँजे चहुँदिश पश्चिम दक्षिण उत्तर सुपूर्व॥
निजपथ जिनपथ समस्त जानूँ दोनों में कुछ भी भेद नहीं।
जब तक मूर्छित हूँ पर में प्रभु, पाऊँगा कभी अभेद नहीं॥
चितिशक्ति आत्मा की अद्भुत चैतन्यचंद्र धुति गरिमामय।
चंद्रिका ज्ञान की मोहित है मेरे ऊपर मैं महिमामय॥
चिच्चमत्कार चिन्मयरूपी चैतन्य विलासी चिद्रूपी।
यदि प्राप्ति नहीं होगी इसकी मैं बना रहूँगा विद्रूपी॥
शोभित अनंतगुण मणियों से भवतमहारी है दिव्य दीप्ति।
संसार समुद्र नाश करती है निज आत्म-तत्त्व की ही प्रतीति॥

महिमाशाली संयम पाऊँ, मैं बनूँ साधु निर्ग्रन्थ आज।
पाए शिवपुर का प्रांगण निज ऐरावत चढ़ चैतन्यराज॥

दोहा

आत्मधर्म ध्रुव शक्तिमय वीतराग-विज्ञान।
गुरुप्रसाद से प्राप्त हो श्रद्धा ज्ञान महान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वापरविदेहस्थ षोडशवक्षारपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

पुष्करार्ध वक्षार जिनालय हमने पूजे हर्षित हो।
गरुड़ चिन्ह के ध्वज आरोहण करते स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

परम दिगम्बर मुनिवर देखे।
हृदय हर्षित होता है॥
आनन्द उल्लसित होता।
हो सम्यग्दर्शन होता है॥

वास जिनका वन उपवन में, गिरि शिखर के नदी तटे।
वास जिनका चित्त गुफा में, आतम आनन्द में रमे॥१॥
कंचन कामिनी के त्यागी, महा तपस्वी ज्ञानी ध्यानी।
काया की माया के त्यागी, तीन रतन गुण भंडारी॥२॥
परम पावन मुनिवरों के पावन चरणों में नमूँ।
शान्त मूर्ति सौम्य मुद्रा आतम आनन्द में रमूँ॥३॥
चाह नहीं है राज्य की, चाह नहीं है रमणी की।
चाह हृदय में एक यही है शिव रमणी को वरने की॥४॥
भेद ज्ञान की ज्योति जलाकर शुद्धातम में रमते हैं।
क्षण-क्षण में अन्तर्मुख हो, सिद्धों से बातें करते हैं॥५॥

पूजन क्रमांक-२५

मंदरमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन

स्थापना

चौपाई

मंदरमेरु पूर्व अरु पश्चिम, हैं बत्तीस विदेह भव्यतम।
इनमें हैं बत्तीस रजतगिरि, भरतैरावत एक-एक गिरि॥
इन सब पर चौंतीस जिनालय, रत्निम हैं इनके गर्भालय।
विनय भाव से है आह्वानन, परिणति में करता स्थापन॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित- सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

छन्द - त्रिलोकी/चान्द्रायण

अनियन्त्रित ही रहा आज तक मैं प्रभो।
संयम जल से मात्र नियन्त्रित हो गया॥
चौंतीसों विजयार्ध सुगिरि वन्दन करूँ।
वीतराग छवि का अभिनन्दन हो गया॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयाधपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह नींद में सुप्त पड़ा था आजतक।
ज्ञानगन्ध से मैं अभिमन्त्रित हो गया॥चौंतीसों॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत विक्षत था मेरा ज्ञान शरीर प्रभु।
अक्षयपद लख मैं आनन्दित हो गया॥चौंतीसों॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज भाव पुष्पों की माला मिल गई।
निज परिणति से मैं भी वन्दित हो गया॥
चौंतीसों विजयार्ध सुगिरि वन्दन करूँ।
वीतराग छवि का अभिनन्दन हो गया॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वसंनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

विविध भाँति के चरु अतृप्तिदायक मिले।
ज्ञान सुचरु ले निज में अर्पित होगया॥चौंतीसों०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ दीपक से भव का तिमिर मिटा नहीं।
ज्ञान दीप अब शीघ्र प्रज्ज्वलित हो गया॥चौंतीसों०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप ध्यान की मोक्षमार्ग दिखला रही।
शुक्ल अनल से कर्म जर्जरित हो गया॥चौंतीसों०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शिवफल की महिमा से ओतप्रोत हूँ।
मुक्ति सुफल से मैं अब सज्जित हो गया॥चौंतीसों०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य विभाव भाव के मैं चाहूँ नहीं।
पद अनर्घ्य से आज निमज्जित हो गया॥चौंतीसों०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

छंद - दिग्पाल

पूरब विदेह. अनुपम कच्छा सुदेश भीतर।
विजयार्ध के शिखर पर जिनराज गृह मनोहर ॥१ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदहेस्थ-सीतानद्युत्तरतटे कच्छादेशे विजयार्धपर्वत-स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है देश इक सुकच्छा सीता नदी के उत्तर।
जिनभवन एक अनुपम विजयार्धरजत गिरि पर ॥२ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदहेस्थ-सीतानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशे विजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है देश महाकच्छा में आर्यखंड अनुपम।
विजयार्धशीर्ष पर है जिनगेह इक अकीर्तम ॥३ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशे विजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है कच्छाकवती में विजयार्ध गिरि रजतसम।
जिनभवन अकृत्रिमहै शाश्वत सुश्रेष्ठ निरुपम ॥४ ॥

ॐ ह्री श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरब विदेह आवर्ता देश है निराला।
शाश्वत जिनेन्द्र गृह है जो स्वर्णरत्नवाला ॥५ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे आवर्तादेशे विजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है लांगलावर्ता में विजयार्ध तुंग उज्ज्वल।
जिनबिम्ब रत्नमय सब जिनगेह मेंसमुज्ज्वल ॥६ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है देश पुष्कला में वैताढ्य चंद्रिकामय।
अति शोभनीय अद्भुत जिनदेव का जिनालय ॥७ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशे विजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

विजयार्ध मध्य में है इक पुष्कलावती के।
जिन-भवन देखतेही बंधन कटें कुगतिके ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थ-सीतानद्युत्तरतटे पुष्कलावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

मंदर मेरु विदेह वेदी देवारण्य है।
सुन्दर वसु विजयार्ध सीतादक्षिण जानिये॥

छंद - पीयूषराशि

भगवती भवितव्यता लायी स्वकाल।
जिसे पाकर हो गया मैं तो निहाल॥
पूजती हैं लब्धियाँ-पाँचों चरण।
अब किया सम्यक्त्व को मैंने वरण॥

सोरठा

वत्सादेश सुमध्य गिरि विजयार्ध प्रसिद्ध है।
जिनबिम्बों से युक्त चैत्यालय जिनराज का॥९॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेशे विजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुवत्सा पास गिरि विजयार्ध महान है।
जिन-मंदिर को पूज आत्मतत्त्व ध्याऊँसदा॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेशे विजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्यखंड है एक देश महावत्सा महा।
रजताचल जिनगेह पूजूँ स्वपर विवेकहित॥११॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे महावत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

म्लेच्छखंड है पांच देश वत्सकावती में।
आर्यखंड है एक रूपाचल जिनगेह हैं॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावतीदेशे विजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रम्यादेश प्रसिद्ध रूपाचल जिन-धाम है।
निश्चयभूत पदार्थ पाऊँ निज पुरुषार्थ से ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशे विजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुरम्या बीच रजताचल जिनगेह है।
सर्वोत्तम उत्कृष्ट अनुभव रस का मेह है ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेशे विजयार्धपर्वत स्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रमणीया के मध्य है वैताढ्य सुहावना।
सारे जग के जीव सब ही सिद्ध समान हैं ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रमणीयादेशेविजयार्ध पर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरगिरि पूर्व प्रसिद्ध देश मंगलावती के।
रजताचल के चैत्य भावसहित नित वन्दिये ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे मंगलावतीदेशेविजयार्ध पर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - शक्ति पूजा

क्यों अब तक का ज्ञान सर्वथा व्यर्थ हुआ।
पलभर को भी यह न कभी परमार्थ हुआ॥
जिनवाणी पर जब मैंने विश्वास किया।
असत्यार्थ परिवर्तित हो सत्यार्थ हुआ॥
समकित की छवि हृदयंगम हो गई सहज।
अभूतार्थ उड़ गया स्वयं भूतार्थ हुआ॥
रंग-राग से भिन्न भेद से मैं सदा।
मैं ज्ञाता मैं ज्ञेय यही परमार्थ हुआ॥
चेतन की चञ्चल कल्लोलें शान्त हो।
लीन हुई चैतन्य जलधि में ज्ञात हुआ॥

विलय भई कर्तृत्त्व भाव की वासना।
हे जिनवर ! अब सहज सिद्ध सर्वार्थ हुआ ॥

चौपाई

पदमादेश निराला सुन्दर, इसमें है विजयार्ध मनोहर।
पूजूँ शाश्वत जिन-चैत्यालय, ध्वजा चढ़ा जाऊँ सिद्धालय ॥१७ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुपदमा शोभाशाली, रूपाचल की छटा निराली।
ध्वजा चढ़ाऊँ भावसहित मैं, हो जाऊँ परभाव रहित मैं ॥ १८ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे सुपद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश महापदमा शोभायुत, है विजयार्ध जिनालय संयुत।
ध्वजा चढ़ाऊँ मंगल गाऊँ, सम्यग्दर्शन उर प्रकटाऊँ ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे महापद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश पदमावती सुहाना, गिरि विजयार्ध रजतमय जाना।
आत्मज्ञान परिपूर्ण प्राप्त कर, शिवपुर जाऊँ ध्वजा चढ़ाकर ॥२० ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंखादेश विदेह पूर्व में, शाश्वत रजताचल अपूर्व में।
ध्वजा चढ़ाऊँ मुनिपद पाऊँ, अप्रमत्त हो निजगुण गाऊँ ॥ २१ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे शंखादेशे विजयार्धपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नलिना देश सुमंदर पश्चिम, रूपाचल जिनगेह अकीर्तम।
श्रेणी चढ़ूँ, न पीछे आऊँ, क्षपकश्रेणि भज ध्वजा चढ़ाऊँ ॥ २२ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे नलिनादेशे विजयार्धपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुमुदादेश रजत गिरि सुन्दर, सीतोदा के दक्षिण तटपर।
अब मैं ऐसी करूँ व्यवस्था, पाऊँ मैं अरहंत अवस्था ॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे कुमुदादेशे विजयार्धपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सरिता देश मध्य रूपाचल, सुस्थित शाश्वत जिनगृह अविचल।
सिद्धशिला सिंहासन पाऊँ, सादि अनंत सौख्य ध्वज पाऊँ ॥ २४ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानदीदक्षिणतटे सरितादेशे विजयार्धपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

सीतोदा उत्तर सुतट, वप्रादेश प्रधान।
रजताचल के शीष पर, श्री जिनभवन महान॥
शुद्धातम अनुभव करूँ, तजदूँ सब व्यवहार।
निश्चयनय भूतार्थ से, नष्ट करूँ संसार॥ २५ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे वप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताचल विजयार्ध गिरि, देश सुवप्रा मध्य।
इकशत वसु जिनबिम्ब गृह, नित्य चढ़ाऊँ अर्घ्यं॥
जप तप व्रत संयम सभी, समकित के बिन व्यर्थ।
एकमात्र सम्यक्त्व ही, शिवसुखप्रद निज अर्थ॥ २६ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे सुवप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश महावप्रा निकट, गिरि विजयार्ध उतंग।
जिन चैत्यालय नमनकर, जीतूँ दुष्ट अनंग॥
ध्येय एक है लोक में, ध्यान योग्य है एक।
एक शुद्ध निज-आत्मा, परम ज्ञानमय एक॥ २७ ॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे महावप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश वप्रकावती में, भव्य रजत गिरि एक।
इकशत वसु जिन-चैत्य को, वन्दन करूँ अनेक॥
जन्म-मरण दुःख क्षय करूँ, धर्मौषधि कर पान।
राग-द्वेष सब नाशकर, पाऊँ मुक्ति विहान॥ २८॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे वप्रकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधादेश विदेह में, रजताचल छविमान।
पंचसमिति पालन करूँ, पूजूँ जिन-भगवान॥
पर्यायें क्रमबद्ध हैं, यह आगम का सार।
जो भी हो भवितव्यता, होती अपनी बार॥ २९॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे गंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित- सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुगंधा मध्य में, रूपाचल अति दिव्य।
पूजूँ जिनगृह भाव से, तीन गुप्ति लूँ भव्य॥
इन्द्रादिक अहमिन्द्र सब, या जिनेन्द्र भगवान।
परिवर्तन भवितव्य में, हैं असमर्थ सुजान॥ ३०॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे सुगंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश गंधिला पास है, रूपाचल विजयार्ध।
जिन चैत्यालय पूजकर, पाऊँ ध्रुव सत्यार्थ॥
निश्चय से अरहंत हूँ, निश्चय से हूँ सिद्ध।
पर व्यवहाराधीन हूँ, हूँ अतएव असिद्ध॥ ३१॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे गंधिलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधमालिनी देश में, रूपाचल विख्यात।
जिनगृह वन्दूँ आत्मा ही, ध्याऊँ प्रख्यात॥

आत्मसिद्धि सुख प्राप्ति का, है उद्देश्य महान।
निज परमात्म-प्रकाश कर, हो जाऊँ भगवान॥ ३२॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थ सीतोदानद्युत्तरतटे गंधमालिनीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - रोला

दक्षिण मंदरमेरु भरत में इक रजताचल।
जिन मंदिरके स्वर्णशिखर परजिनध्वज उज्ज्वल॥
कर्मभूमि में काल चतुर्थम जब आता है।
चौबीसी की गुन्जित होती जय गाथा है॥ ३३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-भरतक्षेत्रस्थ-विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर मंदरमेरु क्षेत्र ऐरावत सुन्दर।
जिनमंदिर की ध्वजा पंक्तियाँ स्वर्णिम मनहर॥
कर्मभूमि यह त्रेसठ महाशलाका वाली।
सर्व श्रेष्ठ तीर्थंकर होते महिमाशाली॥ ३४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-ऐरावतक्षेत्रस्थ-विजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद - कनकमंजरी

सुविधि हो गई पूर्ण अंत में, जिन पूजन उर के दिगंत में।
श्रमण धर्म कल्याणमयी प्रिय, निज आश्रय से सुख पाते जिय॥

छंद - चांद्रायण

गिरि चौंतीस ध्याइये अब विजयार्ध के।
मंदरमेरु निकट वर्ती जो भाव से॥
एक-एक पर एक भवन जिनराज है।
निज स्वभाव का जिनगृह में साम्राज्य है॥

पूर्ण अर्घ्य जिन-प्रतिमा चरण चढ़ाइये।
तीन सहस छह शतक बहत्तर ध्याइये॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

मैं त्रिकाल चैतन्य, पूजित पंचम भाव।
कारण-परमातम स्वयं, ज्ञानानन्द स्वभाव॥
उपशमादि पर्याय जो, जिन कहते परभाव।
एक पारिणामिक सहज, अपना शुद्ध स्वभाव॥

छंद - रोला

विनयसहित वसु द्रव्य चढ़ाकर निज को ध्याऊँ।
भाव पारिणामिक का बल ले शिवपुर जाऊँ॥
जीवों के हैं पाँच भाव सुख-दुख के दाता।
इनके भेद-प्रभेद जानकर पाऊँ साता॥
पहिले औपशमिक दो भेद सु समकित चरित।
दूजे क्षायिक में सदैव नौ भेद समाहित॥
तीजे क्षायोपशमिक भाव के भेद अठारह।
चौथा भाव औदयिक भेद इक्कीस दुक्खग्रह॥
पंचम भाव पारिणामिक के भेद मात्र त्रय।
एक अनादि-अनंत शेष द्वय हो जाते क्षय॥
चार भाव पर्याय रूप हैं यह भी जानो।
एक भाव जीवत्व पारिणामिक ध्रुव मानो॥
औपशमिक क्षायोपशमिक औदयिक नाशमय।
क्षायिक सादि अनंतभाव उज्ज्वल प्रकाशमय॥
पंचम का जो आश्रय लेते शिवसुख पाते।
पाप-पुण्य पर-भाव नाश सिद्धालय जाते॥

दोहा

विजयमेरु सिद्धायतन, पूजे अति हर्षाय।
भेद-ज्ञान की शक्ति ही, उत्तम शिव सुखदाय॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे मंदरमेरुसम्बन्धि-चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजय-मेरु के सोलह जिनगृह हमने पूजे हर्षित हो।
माला चिन्ह विभूषित ध्वजा चढाऊँ स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण संपत्ति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

कर लो जिनवर का गुणगान, आई सुखद घड़ी।
आई सफल घड़ी, देखो मंगल घड़ी॥करलो०॥

वीतराग का दर्शन-पूजन भव-भव को सुखकारी।
जिन प्रतिमा की प्यारी छवि लख मैं जाऊँ बलिहारी॥करलो०॥

तीर्थंकर सर्वज्ञ हितंकर महा मोक्ष का दाता।
जो भी शरण आपकी आता, तुम सम ही बन जाता॥करलो०॥

प्रभु दर्शन से आर्त रौद्र परिणाम नाश हो जाते।
धर्म ध्यान में मन लगता है, शुक्ल ध्यान भी पाते॥करलो०॥

सम्यग्दर्शन हो जाता है मिथ्यातम मिट जाता।
रत्नत्रय की दिव्य शक्ति से कर्म नाश हो जाता॥करलो०॥

निज स्वरूप का दर्शन होता, निज की महिमा आती।
निज स्वभाव साधन के द्वारा सिद्ध स्वगति मिल जाती॥करलो०॥

पूजन क्रमांक-२६

मंदरमेरु संबंधी षट कुलाचल जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - रोला

मंदरगिरि दक्षिण उत्तर छह पर्वत जानो।
हिमवन तथा महाहिमवन निषधाचल मानो॥
नील रुक्मि शिखरी की शोभा निरुपम न्यारी।
एक-एक द्रह शोभित जिन की छटा निराली॥
सभी षट कुलाचल जिन चैत्यालय से शोभित।
वही जीव दुख पाता जो निज से है द्रोहित॥
आओ श्री जिनराज पधारो मम अन्तर में।
भक्ति भाव से पूजूँ मैं पधराऊँ उर में॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपस्थ-मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचल स्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

चौपई

पुन्डरीक द्रह का जल लाय, श्री जिनचरण चढ़ाऊँ आय।
भवन कुलाचल जिन भगवान, शुद्ध आत्मा का हो ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयज चंदन भरी सुगंध, भवज्वाला कर देती बंद।
भवन कुलाचल जिन भगवान, शुद्ध आत्मा का हो ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।.

उज्ज्वल अक्षत दिव्य अनूप, अक्षय पद दाता चिद्रूप।
भवन कुलाचल जिन भगवान, शुद्ध आत्मा का हो ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प सुवासित गरिमावान, काम भाव करते अवसान।
भवन कुलाचल जिन भगवान, शुद्ध आत्मा का हो ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रसभीने चरु चरण चढ़ाय, क्षुधाव्याधि नाशूँ दुखदाय।
भवन कुलाचल जिन भगवान, शुद्ध आत्मा का हो ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षट्कुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप ज्योति का नवल प्रकाश, लाता केवलज्ञान प्रकाश।
भवन कुलाचल जिन भगवान, शुद्ध आत्मा का हो ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम धूप गंध महकाय, कर्माष्टक संपूर्ण जलाय।
भवन कुलाचल जिनभगवान, शुद्ध आत्मा का हो ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल नयनाभिराम रस कोष, मोक्ष प्रदायक हरते दोष।
भवन कुलाचल जिन भगवान, शुद्ध आत्मा का हो ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य अर्घ्य जिन-चरण चढ़ाय, पद अनर्घ्य अनुपम प्रगटाय।
भवन कुलाचल जिन भगवान, शुद्ध आत्मा का हो ध्यान॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - त्रिभंगी

निजरूप सजाऊँ, ज्ञान बढ़ाऊँ, शिवपद पाऊँ, सुखकारी।
ध्रुव महिमा मंडित, दर्शन पंडित, आस्रवखंडित, दुःखहारी॥

इन्द्रध्वज पूजन; उज्ज्वल है मन, हूँ आनंदघन, अविकारी।
मैं शिवपुर जाऊँ, कर्म नशाऊँ, निजपद ध्याऊँ, गुणधारी॥

अर्घ्यावलि

वीरछंद

पुष्करार्ध की पूर्व दिशा में मंदरगिरि दक्षिण हिमवान।
निकट पद्मद्रह के जिनमंदिर सुरगण ध्वज ले गाते गान॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-हिमवानपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये निर्वपामीति स्वाहा।

अचल महाहिमवान मनोहर वसुकूटों में इक पर जान।
महापद्मद्रह निकट जिनालय स्वर्ण कलश ध्वज सूर्य समान॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-महाहिमवानपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो निर्वपामीति स्वाहा।

निषधाचल पर नवकूटों में एक कूट जिन महिमावान।
द्रह तिंगिच्छ जल से पूरितद्रह जिनगृह ध्वजयुत शोभावान॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-निषधपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

नील सुगिरि पर नवकूटों में एक कूट है जिन भगवान।
केसरि द्रह के मध्य कमल है जिनगृह ध्वज युत महिमावान॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-नीलपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं......

रुक्मिशिखर पर पुन्डरीक द्रह निकट जिनालय श्री भगवान।
उत्तरदिशि मंदर सुमेरु के ध्वजा पंक्तियाँ गरिमावान॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-रुक्मिपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरी पर्वत के ऊपर है एक जिनालय शोभावान।
जलमय महापुंडरीक द्रह फहरें ध्वजा अनेक महान॥ ६॥

ॐ ह्रीं श्री मंदरमेरुसम्बन्धि-शिखरीपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद - उर्मिला

षट कुलाचल के सकल जगदीश।
छहशतक हैं और अड़तालीस॥
प्रथम सारी कषायें कर मंद।
पूर्ण अर्घ्य चढ़ाइये सानंद॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद - मत्तसवैया

भव का नैराश्य गगन धुंधला आवरण कर्म का लाता है।
निज आत्म-गगन की महिमा से सम्यक्त्व भवन मिल जाता है॥
इन्द्रादिक चरणों में आकर विनयित हो शीष झुकाते हैं।
शचियों के पग घुंघरू ध्वनि स्वर प्रभु के जयगीत सुनाते हैं॥
अपना प्रभुत्व अपना विभुत्व सर्वज्ञ दशा प्रगटाता है।
परिपूर्ण सर्वदर्शित्व शक्ति का वैभव दर्शन पाता है॥
सुख ज्ञान शक्ति मुखरित होती जीवत्व शक्ति का बल पाकर।
मैं ही साधन साधना साध्य साधक अनंत गुण रत्नाकर॥
लक्षण है दर्शन-ज्ञानमयी उपयोग जीव का अति प्रसिद्ध।
जड़-द्रव्य अचेतन सर्व पाँच सारी जगती में सुप्रसिद्ध॥
जो पर से पृथक हुआ वह तो परिपूर्ण अवस्था पाता है।
सर्वज्ञ तीर्थंकर जैसी कैवल्य अवस्था लाता है॥

छंद - रूपमाला

ज्ञान दर्शनमयी निज शुद्धात्म की अनुरक्ति।
एक निज एकत्व की पर से सदैव विभक्ति॥
निज स्वभाव जगा करूँ मैं शक्तियों की व्यक्ति।
सिद्ध हो पुरुषार्थ सारा शुद्ध हो अभिव्यक्ति॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे मंदरमेरुसम्बन्धि-षटकुलाचलस्थित-सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

पुष्करार्ध मंदर के षट कुलाचल सुपूजे हर्षित हो।
कमल चिन्ह की ध्वजा चढ़ाएँ अंतर्मन से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

गगन मण्डल में उड़ जाऊं
तीन लोक के तीर्थक्षेत्र सब वंदन कर आऊं ॥ गगन. ॥

प्रथम श्री सम्मेद शिखर पर्वत पर मैं जाऊं।
बीस टोंक पर बीस जिनेश्वर चरण पूज ध्याऊं ॥ गगन. ॥

अजित आदि श्री पार्श्वनाथ प्रभु की महिमा गाऊं।
शाश्वत तीर्थराज के दर्शन करके हषाऊं ॥ गगन. ॥

फिर मंदारगिरि पावापुर वासुपूज्य ध्याऊं।
हुए पंच कल्याणक प्रभु के पूजन कर आऊं ॥ गगन. ॥

उर्जयंत गिरनार शिखर पर्वत पर फिर जाऊं।
नेमिनाथ निवार्ण क्षेत्र को वन्दूं सुख पाऊं ॥ गगन. ॥

फिर पावापुर महावीर निर्वाण पुरी जाऊं।
जल मंदिर में चरण पूजकर नाचूं हर्षाऊं ॥ गगन. ॥

फिर कैलाश शिखर अष्टापद आदिनाथ ध्याऊं।
ऋषभदेव निर्वाण धरा पर शुद्ध भाव लाऊं ॥ गगन. ॥

पंच महातीर्थों की यात्रा करके हर्षाऊं।
सिद्धक्षेत्र अतिशय क्षेत्रों पर भी मैं हो आऊं ॥ गगन. ॥

तीन लोक की तीर्थ वंदना कर निज घर आऊं।
शुद्धात्म से कर प्रतीति मैं समकित उपजाऊं ॥ गगन. ॥

फिर रत्नत्रय धारण करके जिन मुनि बन जाऊं।
निज स्वभाव साधन से स्वामी शिव पद प्रगटाऊं ॥ गगन. ॥

पूजन क्रमांक-२७

पश्चिम पुष्करार्ध द्वीपस्थ विद्युन्मालीमेरु स्थित

सोलह जिनालय पूजन

स्थापना

दोहा

विद्युन्माली मेरु से, संबंधित जिनगेह।
अस्सी पूजूँ भाव से, पाऊँ निजरस मेह॥

वीरछंद

पुष्करार्धकी पश्चिमदिशिमेंस्वर्णिममेरुजगतविख्यात।
सहस चुरासी योजन ऊँचा विद्युन्माली है प्रख्यात॥
पंचम सुरगिरि मेरु जिनालय तीन लोक से हैं न्यारे।
चारों वन में सोलह जिनगृह शोभित निज महिमा धारे॥
सतरहसौ अरु अट्ठाईस बिम्ब-जिन मैं वन्दूँ वसुयाम।
श्री जिनवर को आह्वानन कर परिणति में थापूँ अभिराम॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्वाननम्)

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनम्)

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (इति सन्निधिकरणम्) (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

छंद - ताटंक

ज्ञायकभावसरलपरमोत्तम त्रिविधव्याधिक्षयकरताहै।
संक्लिष्टपरिणाम नष्ट कर त्रिभुवन को जय करताहै॥
विद्युन्माली मेरु शाश्वत भवन अकृत्रिम महिमामय।
मानस्तंभों से शोभितहैं तोरण द्वारों से छविमय॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं...

ज्ञायकभाव सुचंदन मलयज भवाताप सब हरता है।
पर परिणाम नष्ट करता परिणाम शुद्ध निज करता है॥
विद्युन्माली मेरु शाश्वत भवन अकृत्रिम महिमामय।
व्यंतर देवों के द्वारा पूजित जिन प्रभु की जय जय जय॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय **चंदनं**.....

ज्ञायकभाव सुअक्षत उज्ज्वल अक्षयपद उर धरता है।
पाप-पुण्य सारे विभाव क्षय करके शिवसुख भरता है॥
विद्युन्माली मेरु शाश्वत भवन अकृत्रिम महिमामय।
सभी ज्योतिषी देवों द्वारा पूजित जिन प्रभु की जय जय॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं.....

ज्ञायकभाव सुपुष्प मनोहर काम व्यथा क्षय करता है।
कुगति बंध सर्वथा नाशता सुगति जीव की करता है॥
विद्युन्माली मेरु शाश्वत भवन अकृत्रिम महिमामय।
सौधर्म अरु ईशान इन्द्र के द्वारा वंदित प्रभु जय जय॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं.....

ज्ञायकभाव चरु रसभीना क्षुधा व्याधि क्षय करता है।
अप्रमत्त अथवा प्रमत्त मुनिदशा जीव की करता है॥
विद्युन्माली मेरु शाश्वत भवन अकृत्रिम महिमामय।
सनत्कुमार-महेन्द्र इन्द्र के द्वारा पूजित प्रभु जय जय॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं.....

ज्ञायकभाव सुदीप ज्ञानमय मोह-क्षोभ क्षय करता है।
मुनिवर को श्रेणी प्रदान कर केवल-रवि उर भरता है॥
विद्युन्माली मेरु शाश्वत भवन अकृत्रिम महिमामय।
इन्द्र ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर द्वारा पूजित जिन प्रभु की जय जय॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं.....

ज्ञायकभाव सुधूप गुणाकर कर्माष्टक क्षय करता है।
यह अरहंत दशा प्रदान कर पूर्ण ज्ञान उर भरता है॥
विद्युन्माली मेरु शाश्वत भवन अकृत्रिम महिमामय।
लान्तव अरु कापिष्ठ शुक्र अरु महाशुक्रपति गाते जय॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं.....

ज्ञायकभाव सुफल मनभावन निकट मोक्ष सुख करता है।
देता है सर्वज्ञ महापद निजानन्द उर भरता है॥
विद्युन्माली मेरु शाश्वत भवन अकृत्रिम महिमामय।
इन्द्र शतार-सहस्रार अरु आनत प्राणत गाते जय॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं.....

ज्ञायकभाव अर्घ्य शिवदायक पद अनर्घ्य उर भरता है।
अक्षातीत अतीन्द्रिय नित्य निरंजनपद उर धरता है॥
विद्युन्माली मेरु शाश्वत भवन अकृत्रिम महिमामय।
सबस्वर्गोंकेइन्द्र आदि सुर सब मिलगाते जय जय जय॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

छंद - विराग (सुशीला)

सिद्धों ने बुलाया मुझे सिद्धपुरी में,
भेदज्ञान लेने आया मुझे पहली बार।
प्राप्त सम्यक्त्व हुआ सुदृढ़ महान,
पायी है लहर सम्यग्ज्ञान अपार॥
सम्यक्चारित्र की मिली है तरणी
सभी देवी देवता रहे मुझे निहार।
भव तट छोड़ चली अब मेरी नाव,
दोनों हाथ थामी मैंने निज पतवार॥
मोह केतु पल में विलय हो गए,
पल में ही क्षय हुआ मेरा संसार॥

उनके दिए रत्नत्रय रथ ने
आदर के साथ किया मुझे भवपार ॥

अर्घ्यावलि

छंद – विष्णु (चाल-कहाँ गए चक्री जिन जीता)

निंदनीय आस्रव के द्वारा होगा नहीं भला ।
पुण्य-पाप विषवृक्ष कभी भी उत्तम नहीं फला ॥
भद्रशाल वन पूर्व दिशा में जिनगृह मनभावन ।
भाव सहित वन्दूँ निजात्मा मंगलमय पावन ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ भद्रशालवनस्थित-पूर्वदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

भद्रशाल वन दक्षिण दिशि का जिनमंदिर ध्याऊँ ।
मात्र आत्मा की चर्चा द्वारा समकित पाऊँ ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ भद्रशालवनस्थित-दक्षिणदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं...

भद्रशाल वन पश्चिम दिशि में चैत्यालय जाऊँ ।
सम्यग्ज्ञान प्राप्त कर स्वामी शिवपथ पर आऊँ ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ भद्रशालवनस्थित-पश्चिमदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं..

भद्रशाल वन उत्तर दिशि में शीष झुका आऊँ ।
निज सम्यक्चारित्र प्राप्त कर संयम उपजाऊँ ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ भद्रशालवनस्थित-उत्तरदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

नंदनवन की पूर्व दिशा में है जिन-चैत्यालय ।
पंचमहाव्रत निरतिचार पा पाऊँ ज्ञानालय ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ नन्दनवनस्थितपूर्वदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

नंदनवन की दक्षिण दिशि गृह वन्दन कर आऊँ ।
अप्रमत्त हो निज स्वरूप दर्शन कर हर्षाऊँ ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ नन्दनवनस्थित-दक्षिणदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

नंदनवन की पश्चिम दिशि केसर्भा चैत्य ध्याऊँ।
षष्टम में अंतमुहूर्त रह सप्तम में आऊँ॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ नन्दनवनस्थित-पश्चिमदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

नंदनवन की उत्तर दिशि का चैत्यालय ध्याऊँ।
सप्तम से नीचे आऊँ तब षष्टम को जानूँ॥ ८॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ नन्दनवनस्थित-उत्तरदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

सुवन सौमनस पूर्व दिशा चैत्यालय को ध्याऊँ।
षष्टम अट्ठाईस मूलगुण पालूँ मुसकाऊँ॥ ९॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ सौमनसवनस्थित-पूर्वदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

सुवन सौमनस दक्षिण दिशि में वन्दूँ जिन-आलय।
ज्ञानभाव से निज को निरखूँ सप्तम करके जय॥ १०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ सौमनसवनस्थित-दक्षिणदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

सुवन सौमनस पश्चिम दिशा जिनालय में जाऊँ।
शुद्ध स्वरूपालंबन बल ले श्रेणी चढ़ जाऊँ॥ ११॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ सौमनसवनस्थित-पश्चिमदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं...

सुवन सौमनस उत्तर दिशि चैत्यालय में आऊँ।
अष्टम भी तज नवम दशम में निज के गुण गाऊँ॥ १२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ सौमनसवनस्थित-उत्तरदिग् जिनालयजिनिबम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पांडुकवन की पश्चिम दिशि को सविनय नमन करूँ।
ग्यारहवें में कभी न जाऊँ नीचे नहीं गिरूँ॥ १३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ पाण्डुकवनस्थित-पूर्वदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पांडुकवन की दक्षिण दिशि को करूँ नित्य वन्दन।
बारहवाँ पा चार घातिया का नाशूँ बन्धन॥ १४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ पाण्डुकवनस्थित-दक्षिणदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

पांडुकवन की पश्चिम दिशि को बार-बार वन्दूँ।
तेरहवें में निजस्वभाव को सादर अभिनन्दूँ॥ १५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ पाण्डुकवनस्थित-पश्चिमदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

पांडुक वन की उत्तर दिशि का पूजूँ चैत्यालय।
चौदहवें को तजूँ हर्ष से पाऊँ सिद्धालय ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ पाण्डुकवनस्थित-उत्तरदिग् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं.....

पूर्णार्घ्य

सोरठा

विद्युन्माली मेरु, सोलह जिनगृह पूजिये।
निज आनन्द-सुमेरु, पूर्ण अर्घ्य दे पाइये ॥

छंद - राजधुन

मोह-राग-द्वेष का करूँगा मैं अभाव।
शीघ्र प्राप्त करूँगा मैं अपना स्वभाव ॥
कर्म बादरी ने मुझे घेरा चहुं ओर,
भव-भ्रान्ति पवन चलाई घनघोर।
सर्व क्षय करना है मुझको विभाव ॥ मोह० ॥
कर्मज्वाल से ही मैं झुलसता रहा।
चारों गतियों के मध्य बसता रहा।
ध्यान अग्नि कणिका जलाएगी कुभाव ॥ मोह० ॥

सोरठा

पाण्डुक वन सर्वोच्च, चार शिलाएँ शोभती।
तीर्थंकर पद उच्च, वन्दूँ मैं पूर्णार्घ्य ले ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

वीरछन्द

पांडुक वन में श्री जिनेन्द्र का जन्मोत्सव होता सानंद।
जिन-प्रभु के दर्शन को पाकर ज्ञानी हो जाते निर्द्वंद्व ॥
जन्म समय प्रभुदर्शन सबसे प्रथम शची ही करती है।
प्रभु को गोदी में सुरपति के बड़े प्यार से धरती है ॥

ऐरावत पर इन्द्र निरखता प्रभु की छवि को बारंबार।
सहस्त्र नेत्र कर वह निहारता तृप्त नहीं होता हर बार॥
पंचम क्षीर समुद्र सुयोजन पांच कोटि अरु बारह लाख।
श्वेतदुग्ध समप्रासुक जल भी प्रभु पदपा होता विख्यात॥
क्षीरोदधिसे स्वर्णकलश सुर भरते एक सहस अरु आठ।
इन्द्र न्हवन करते हैं प्रभु का अद्भुत होता मंगल ठाठ॥
चिर यौवन सुरललनाओं की पायल ध्वनि है झंकृत।
साढ़े बारह कोटि प्रकार वाद्य बज रहे हैं सुरकृत॥
इन्द्राणी प्रभु का करती है वस्त्राभूषण से श्रृंगार।
स्वर्गों के मानस्तंभों से लाती सुन्दर वस्त्र निहार॥
कटि करधनो कंठ में माला पग में पायल की झंकार।
शीष मुकुट कानों में कुण्डल हाथों में कंगन मनहार॥
जिन-प्रभु का श्रृंगार अनूठा मोहित करता त्रिभुवन को।
एक लाख योजन का ऐरावत पधराता भगवन को॥
सूर्य चंद्र ज्योतिर्मय होते नित अपने परिवार सहित।
जिन-प्रभु के चरणों में तो हैं सारी निधियाँ स्वतः निहित॥
मात-पिता को सौंप इन्द्र करता है नाटक नृत्य महान।
प्रभु अंगुष्ठ दाहिने पग में, उसी चिन्ह से हो पहिचान॥
नाम स्वेच्छा से रखता है होता नभ में जय-जय गान।
पंचाश्चर्य पूर्वक होते अद्भुत आनंद महिमावान॥
तीर्थंकर का जन्म-कल्याणक महा पुण्य से होता है।
त्रिभुवन हो आनंद मग्न भव-शोक पूर्णतः खोता है॥
प्रभु को जब वैराग्य जागता होते आत्म तपस्या लीन।
पांच प्रकार चरित्र शक्ति से करते पूर्ण मोह अरि क्षीण॥
यह षोडश भावना चिन्तवन का परिणाम अपूर्व महान।
यशोप्रकृति तीर्थंकर बँधती संग में पुण्य सातिशय जान॥
तेरहवें में प्रकृति तीर्थंकर का होता उदय महान।
समवशरण की रचना होती जो त्रिभुवन में महिमावान॥

दिव्यध्वनि द्वारा करते प्रभु सकल जगत जन का कल्याण।
इन्द्रादिक सुर प्रभु-चरणों में शीष झुकाते सविनय आन॥
एक सहस्त्र अष्ट नामों से इन्द्र संस्तवन करता है।
सबके मन को पुलिकत करता अपना भी दुःख हरता है॥
इसी प्रकार सभी तीर्थंकर प्रगटाते हैं केवलज्ञान।
अष्टकर्म क्षय कर प्रभु पाते उत्तम महा मोक्ष-कल्याण॥
तन कपूरवत उड़ जाता है शेष केश नख रहते हैं।
इन्द्र उन्हें क्षीरोदधि जल में त्वरित प्रवाहित करते हैं॥
एक समय में सिद्धशिला पर प्रभु जाकर विराजते हैं।
सादि अनंतानंत काल तक ज्ञायक बने राजते हैं॥
ऐसी निरुपम महिमा से शोभित होते जिन तीर्थंकर।
गुण अनंत प्रगटा हो जाते तीन लोक पति अभ्यंकर॥
सभी जीव आनंद मग्न हों जिन प्रभु की महिमा गाएँ।
अपना आत्मस्वरूप निरखकर तीर्थंकर प्रभु बन जाएँ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरौ षोडशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछन्द

विद्युन्माली मेरु वनों के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
माला चिन्ह विभूषित ध्वजा चढ़ाएँ स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक -२८

विद्युन्मालीमेरु संबंधी चार गजदंत-जिनालय पूजन

स्थापना

दोहा

विद्युन्माली के निकट, विदिशा में गजदंत।
हस्तिदंत सम जानिये, अनुपम महिमावंत॥
चार जिनालय पूजकर, निरखूँ शुद्ध स्वभाव।
अविनाशी अविकार है, पर का पूर्ण अभाव॥

छंद - गीतिका

आत्मा की वार्ता भी रुचि सहित जो कर रहे।
निकट भव्य स्वरूप निश्चित नहीं वे भवदधि बहे॥
आत्मतत्त्व प्रतीति ही केवल जगत में सार है।
शेष सब कुछ हेय है संसार पूर्ण असार है॥
एक निश्चयभूत है निज आत्मा ही शक्तिमान।
एक चिर उज्ज्वल स्वभावी भरा है कैवल्यज्ञान॥
द्रव्य का लक्षण सदा सत् जानकर ध्रुव सत् समझ।
लक्ष्य में ले द्रव्यसत् निज अब नहीं पर में उलझ॥
श्री जिनेन्द्र शरण ग्रहण कर वन्दना का कर यतन।
करूँ आह्वानन व थापन और प्रभु सन्निधिकरण॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थ विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धी-चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

छंद - सुंदरी सवैया (चाल वीर हिमालच तैं निकसी)

उज्ज्वल शुद्ध स्वभावमयी जल से जन्मादिकरोग मिटाऊँ।
प्राप्त करूँ अरहंत दशा शुद्धातम के ही गीत सुनाऊँ॥
चार जिनेन्द्र भवन अति पावन हैं गजदंत सुपर्वत चारों।
मोह विनाश करूँ तत्क्षण अब सर्व विभाव प्रभो निरवारों॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल शुद्ध स्वभावमयी चंदनसे मैंभवतापमिटाऊँ।
दर्शनज्ञान स्वरूपमयी शुद्धातम के ही गीत सुनाऊँ ॥चार० ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धी चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल शुद्ध स्वभावमयी अक्षतसेअक्षयपदप्रगटाऊँ।
शक्ति अनंतानंतमयी शुद्धातम के ही गीत सुनाऊँ ॥चार० ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन-बिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल शुद्ध स्वभावमयी पुष्पों सेकामव्यथाविनशाऊँ।
ज्ञान-पयोनिधिपान करूँ शुद्धातम के ही गीत सुनाऊँ ॥चार० ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वलशुद्ध स्वभावमयी नैवेद्य चढ़ाभव-भूखभगाऊँ।
तृप्त स्वभावीपद पाऊँ शुद्धातम के ही गीत सुनाऊँ ॥चार० ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वलशुद्धस्वदीपप्रभामय लेअज्ञानतिमिरविनशाऊँ।
मोहमहामद चूरकरूँ शुद्धातम केही गीत सुनाऊँ ॥चार० ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वलशुद्धस्वधूप अनल में कर्माष्टकसंपूर्ण जलाऊँ।
नित्य निरंजन भवदुःखहर शुद्धातम केही गीत सुनाऊँ ॥चार० ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वलशुद्धस्वभावी फलले मोक्षमहाफल प्रभुमैंपाऊँ।
सादि अनंत सुखामृतपी शुद्धातम केही गीत सुनाऊँ ॥चार० ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल शुद्धस्वभाव अरघ ले स्वपद अनर्घ्य अभी उर लाऊँ।
मंगलमय शिव मंगल पा शुद्धातम के ही गीत सुनाऊँ॥
चार जिनेन्द्र भवन अति पावन हैं गजदंत सुपर्वत चारों।
मोह विनाश करूँ तत्क्षण अब सर्व विभाव प्रभो निरवारों॥

ॐ ह्री श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन-बिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - हीर (मेरे प्रभु वीतराग और नहिं कोई)

करुणानिधि करुणामय व्यथा सुन लीजिये।
भव भव में भटक रहा आप कृपा कीजिये॥
आत्मतत्त्व की प्रतीति जगा आप दीजिये।
अपने समकक्ष आप बिठा मुझे लीजिये॥

अर्घ्यावलि

छंद - सरसी

विद्युन्माली आग्नेय दिशि एक रजत गजदंत।
नाम सौमस सप्तकूट में एक कूट अरहंत॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ-आग्नेयविदिशि सौमनसगजदन्तपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली दिशि नैऋत्य सु स्वर्णमयी गजदंत।
विद्युत्प्रभ के नवकूटों में इक पर गृह भगवंत॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ-नैऋत्यविदिशि विद्युत्प्रभगजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली दिशि वायव्य सुगंध मादनाचल।
स्वर्णिम सप्तकूट में इक पर जिनगृह श्रेष्ठ विमल॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ वायव्यविदिशि गंधमादनाचलगजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युन्माली दिशि ईशान सु माल्यवान गजदंत।
है वैडूर्यमयी नवकूटों में इक पर गृह भगवंत॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरौ ईशानविदिशि माल्यवानगजदन्तपर्वतस्थितसिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

है चारो गजदंत जिनालय अतिशय शोभावान।
चार शतक बत्तीस बिम्ब है उज्ज्वल महिमावान॥
पूर्ण अर्घ्य मैं करूँ समर्पित जगा आत्मविश्वास।
सर्व विभावों को क्षय कर शिवपुर में करूँ निवास॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

जिनवाणी का पान कर, हुआ मुझे निज ज्ञान।
उपादेय अरु हेय की, हुई सहज पहिचान॥

छंद - हरिगीतिका

एक निज की साधना में जब समा जाता स्वयं।
जागृत चैतन्य होता मोक्षसुख होता परम॥
शक्तियाँ सब सजग हो चैतन्य चरण पखारती।
सतत जागृत गुणों में जा आत्म रूप निहारती॥
उपादेय स्वरूप निर्मल है विकारी भाव हेय।
आत्मा ही लक्ष्य में ले पूर्णतः जो है उपेय॥
त्रिकाली चैतन्य ध्रुव की ही सतत कर वन्दना।
शुद्ध दर्शन ज्ञान भावों में स्वरत कर अर्चना॥
ज्ञान प्रत्याख्यान है यह बात उर में धार लूँ।
विकल्पों के घन तिमिर भ्रमजल्प सर्व निवार लूँ॥
एक निश्चय ही मुझे ले जायगा संसार पार।
जगत विस्मृति सहित लूँ वैराग्य अविकल्पी अपार॥
नाथ पूर्णानंद का मैं स्वयं ही भगवान हूँ।
निज स्वभाव स्वरूप में ही उच्च मुक्ति विहान हूँ॥

त्रिकाली ध्रुवधाम का पाकर निमंत्रण हूँ सुखी ।
चरण शिव पथ पर बढ़ाऊँ नहीं होऊँ फिर दुःखी ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धी चतुर्गजदन्तपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीरछंद

विद्युन्माली गजदंतों के जिनगृह पूजे हर्षित हो ।
सिंह चिन्ह की ध्वजा चढ़ाएँ अन्तर्मन से पुलकित हो ॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष ।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश ॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

भजन

भावना रथ पर चढ़ जाऊं
मध्यलोक तेरह द्वीपों तक दर्शन कर आऊं ।
भावना रथ पर चढ़ जाऊं ॥
स्वर्ण थाल में वसु विधि प्रासुक द्रव्य सजा लाऊं ।
चार शतक अट्ठावन जिनगृह, पूजन कर आऊं ॥
भावना रथ पर चढ़ जाऊं ॥
पंचमेरु गजदंत वृक्ष, वक्षारों पर जाऊं ।
गिरि विजयार्ध कुलाचल वन्दूं, नाचूं हर्षाय ।
भावना रथ पर चढ़ जाऊं ॥
इष्वाकारों मानुषोत्तर के जिन गृह ध्याऊं ।
नंदीश्वर के कुन्डल व रुचक, गिरि पूजन कर आऊं ॥
भावना रथ पर चढ़ जाऊं ॥
जिन पूजन का सर्वोत्तम फल, भेद ज्ञान लाऊं ।
शुद्धात्म का अनुभव करके, सिद्ध स्वपद पाऊं ॥
भावना रथ पर चढ़ जाऊं ॥

पूजन क्रमांक-२९

विद्युन्मालीमेरु संबंधी पुष्कर एवं शाल्मलिवृक्ष जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - रोला

पश्चिम पुष्कर में सुमेरु है विद्युन्माली।
उत्तर कुरु में भोग भूमि उत्तर दिशि वाली॥
है ईशान कोण में पुष्कर वृक्ष मनोहर।
जिनगृह, पृथ्वीकायिक तरु की शाखा उत्तर॥
भोग सुभूमि देवकुरु दक्षिण दिशा जानिये।
आग्नेयदिशि शाल्मलि तरु अति दिव्य मानिये॥
तरु की दक्षिण शाखा पर जिन-भवन मनोरम।
दोय शतक सोलह जिनबिम्ब पूज लूँ अनुपम॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थित विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वय स्थित जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

छंद - अवतार

सच्चिदानंद चिद्रूप की महिमा गाऊँ।
अनुभव जल पाऊँ नाथ निज में आ जाऊँ॥
पुष्कर शाल्मलि द्वय वृक्ष जिनगृह शोभित हैं।
स्वर्गों के सुर इन्द्रादि इन पर मोहित हैं॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धातम तत्त्व अनूप की महिमा गाऊँ।
अनुभव चंदन ले नाथ भव-ज्वर विनशाऊँ॥पुष्क०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ज्ञायक भाव स्वरूप की महिमा गाऊँ।
अनुभव अक्षत ले नाथ अक्षत पद पाऊँ॥
पुष्कर शाल्मलि द्वय वृक्ष जिनगृह शोभित हैं।
स्वर्गों के सुर इन्द्रादि इन पर मोहित हैं॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानानन्दी निज रूप की महिमा गाऊँ।
अनुभव के सुमन चढ़ा काम पर जय पाऊँ॥पुष्कर०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामवाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज निजानन्द चिद्रूप की गरिमा गाऊँ।
अनुभव रस के चरु लाय नाश क्षुधा पाऊँ॥पुष्कर०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि-पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज एक अखण्ड स्वरूप की गरिमा गाऊँ।
अनुभव के दीप सजाय भवभ्रम विनशाऊँ॥पुष्कर०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सहजानन्दी चिद्रूप की महिमा लाऊँ।
अनुभव निज धूप चढ़ाय अरि रज विनशाऊँ॥पुष्कर०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चैतन्यचन्द्र चिद्रूप की महिमा गाऊँ।
अनुभव के सुफल चढ़ाय शिवपद प्रगटाऊँ॥पुष्कर०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

चैतन्यराज चिद्रूप की महिमा गाऊँ।
अनुभव के अर्घ्य बनाय पद अनर्घ्य पाऊँ ॥ पुष्कर. ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

वीरछंद

पुष्कर तरु का जिन चैत्यालय वन्दूँ भावसहित मन लाय।
अंतरमुख हो निजचैतन्य स्वरूप निरखलूँ शिव सुखदाय ॥
मैं निमित्त को निमित्त जानकर स्याद्वाद पहचानूँगा।
उपादान को निज शक्ति जानकर अनेकान्त ध्वज लाऊँगा ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थ विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पुष्करवृक्षस्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शाल्मलितरुकाजिन-चैत्यालय वन्दूँभावसहितमनलाय।
कोई भी पर भाव न उर में आने पाये भव दुःखदाय ॥
स्व-पर तत्त्व को आज जानकर भेदज्ञान प्रगटाऊँगा।
स्वयंसिद्ध चैतन्य निरखकर मंगल ध्वजा चढ़ाऊँगा ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थ विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि शाल्मलिवृक्षस्थितजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद - सरसी

किया ज्ञान ने ज्ञानसिंधु बन ज्ञानामृत रस पान।
आत्मकोष की सारी निधियाँ पायी हैं भगवान ॥
इसी लक्ष्य से हो जाता है कर्मों का अवसान।
कुछ पल में हो आप्त पाऊँगा उत्तम पद निर्वाण ॥

दोहा

अष्ट द्रव्य ले पूज लूँ, पुष्करतरु भगवंत।
शाल्मलि तरु जिन पूज लूँ, हो जाऊँ अरहंत ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थ विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद - कुन्डलिया

श्री जिनवर शिवपथ कहें, निश्चय अरु व्यवहार।
मोक्ष महल में आइए, प्रिय चैतन्यकुमार॥
प्रिय चैतन्यकुमार एक निज आतम जानो।
वीतरागता मोक्षमार्ग है निश्चय मानो॥
व्रत तप संयम भाव कहें व्यवहार जिनेश्वर।
इनसे मुक्ति न होय बन्ध कहते श्री जिनवर॥

वीरछंद

लोकोत्तर निश्चय होते ही होता लोकोत्तर व्यवहार।
दृष्टि अलौकिक हो जाती है परभावों से लेश न प्यार॥
साधक दशा प्रगट होती है मुक्ति रमा भी मुस्काती।
परम अतीन्द्रिय सदा अनिन्द्रिय सुख समुद्र पा हर्षाती॥
गुण अनंत की मूर्ति आत्मा धर्मामृत से ओत-प्रोत।
निजानंद आनंद कंद है अनुभव रस का अजस्र स्रोत॥
है कर्तृत्व-बुद्धि से विरहित अकर्तृत्व की प्रतिपल सृष्टि।
निश्चयदृष्टि सहज हो जाती होती अनुभवरस की वृष्टि॥
जब आनंद अतीन्द्रिय को पात्रता भोगने की आती।
निजस्वभाव जागृत हो जाता है पर-परिणति भगजाती॥
विनय पूर्वक गुरु चरणों में अपना शीष झुकाता हूँ।
गुर आज्ञा हृदयंगम करके मोक्षमार्ग पर आता हूँ॥

छंद - उपेन्द्रवज्रा

संसार-दुख का नहिं अंत पाया।
भव-भ्रान्ति के ही ज्वर ने सताया॥
शुद्धात्मा को मैंने न भाया।
अवसर मिला, पर उसको भुलाया॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थ विद्युन्मालीमेरुसबन्धि पुष्करशाल्मलिवृक्षद्वयस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

विद्युन्माली पुष्कर शाल्मलि तरु गृह पूजे हर्षित हो।
अशुंकचिन्हविभूषित ध्वज आरोहण करता पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

भजन

तुम्हारे दर्श बिन स्वामी मुझे नहि चैन पड़ती है।
छवि वैराग तेरी सामने आखों के फिरती है॥ टेक॥

निरा भूषण विगत दूषण, परम आसन मधुर भाषण।
नजर नैनों की आशा की उनी पर से गुजरती है॥ १॥

नहीं कर्मों का डर हमको, कि जब लग ध्यान चरणन में।
तेरे दर्शन से सुनते हैं, करम रेखा बदलती है॥ २॥

मिले गर स्वर्ग की सम्पति अचम्भा कौन सा इसमें।
तुम्हें जो नयन भर देखे गति दुरगति की टलती है॥ ३॥

हजारों मूर्तियां हमने बहुत सी अन्य मत देखी।
शान्ति मूरत तुम्हारी सी नहीं नजरों में चढ़ती है॥ ४॥

जगत सिरताज हो जिनराज सेवक को दरश दीजे।
तुम्हारा क्या बिगड़ता है मेरी बिगड़ी सुधरती है॥ ५॥

पूजन क्रमांक-३०

विद्युन्मालीमेरु संबंधी षोडशवक्षार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - रोला

विद्युन्माली के सोलह वक्षार जानिये।
पूर्व और पश्चिम विदेह में है प्रमाणिये॥
स्वर्णमयी षोडश जिनगृह रत्निम जिन जानो।
एक सहस अरु सातशतक अट्ठाइस मानो॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वपश्चिमविदेहस्थषोडश-वक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

छंद - विधाता (तुम्हारे दर्श बिन स्वामी)

गरल मद मोह विषमय पी, पिया मिथ्यात्व का आसव।
सदा मैंने किए स्वामी, शुभाशुभ बंधमय आस्रव॥
सिन्धु सरि नीर अति शीतल, चढ़ाकर जन्म दुःख नाशूँ।
जिनागम की कृपा से मैं, भाव श्रुतज्ञान उर भासूँ॥
जजूँ वक्षार सोलह नित, करूँ निज आत्मा का हित॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलय चंदन देह ज्वर हर, चढ़ाऊँ प्रभु भवातप हर।
आत्म-श्रद्धान हो उर में, मोह-जंजाल को क्षय कर॥
अंग द्वादश सहित वाणी, सूत्र अनुयोग मय उत्तम।
पूर्व चौदह प्रकीर्णक चूलिका परिकर्म सर्वोत्तम॥ जजूँ॰॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

विमल अक्षत चढ़ाऊँ मैं, स्वपद अक्षय सहित स्वामी।
शुभाशुभ भाव सब क्षत हों, बनूँ सर्वज्ञ जग नामी॥

अंगबाह्यरु अंग प्रविष्ट भेद, दोनों ही पहिचानूँ।
द्रव्य उत्पाद व्यय युत सत्, वस्तु लक्षण सदा जानूँ॥
जजूँ वक्षार सोलह नित, करूँ निज आत्मा का हित॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुगंधित पुष्प लाऊँ मैं, भोग के भाव विनशाऊँ।
ज्ञानइन्द्रियन चाहूँ मैं, अतीन्द्रिय ज्ञान प्रगटाऊँ॥
पढ़ूँ अनुयोग चारों मैं, स्वपद कल्याणकारी जो।
धर्म के मार्ग पर लाते, सभी को सौख्यकारी जो॥ जजूँ०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरूसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस नैवेद्य लाऊँ मैं, क्षुधा पर शीघ्र जय पाऊँ।
स्वर्ण वक्षार के जिनगृह, हृदय माहात्म्य ले आऊँ॥
सदा चैतन्य निज निरखूँ खोलकर दिव्य अंतर दृष्टि।
स्व-पर का ज्ञान कर लूँ मैं, बनूँ हे नाथ मैं समदृष्टि॥ जजूँ०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चरण में ज्ञानमय दीपक, चढ़ाऊँ मोह-अरि जयकर।
बनूँ मैं नाथ श्रुतकेवलि, भाव अरु द्रव्य श्रुत उरधर॥
अनंतानंत मुझमें शक्ति, अनंतानंत मुझमें गुण।
नाश आशा सभी पर की, करूँ मैं नष्ट सब दुर्गुण॥ जजूँ०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दर्शनमयी लाऊँ, कर्म वसु नाश कर डालूँ।
अतुल अविरुद्ध मैं चेतन, चेतना ज्ञानमय पा लूँ॥
अचल अविकल निराकुल पद, शीघ्र ही नाथ प्रगटाऊँ।
कृपा हो आपकी तो, मैं शिखर लोकाग्र को पाऊँ॥ जजूँ०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुफल प्रभु पद चढ़ाकर मैं, मोक्षपद शीघ्र ही पाऊँ।
घातिया नाश कर मैं भी, अहो ! कैवल्य प्रगटाऊँ ॥
निराला तीन लोकों से, अनश्वर है स्वपद अपना।
दिव्यध्वनि में सदा आया, अरे संसार है सपना ॥
जजूँ वक्षार सोलह नित, करूँ निज आत्मा का हित ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्घ्य उत्तम चढ़ाऊँ मैं, चिदानन्दी स्वपद पाऊँ।
अघाति नाशकर स्वामी, सहज ही सिद्ध होजाऊँ ॥
कर्मकेइन कुचक्रों को, कुचल दूँ मात जिनवाणी।
भावना यह सदा भाऊँ, सुखी होवें सभी प्राणी ॥ जजूँ० ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्घ्यावलि

छंद - ताटंक

पूर्वविदेह सरित सीता उत्तर तट भद्रशाल वेदी।
चित्रकूट वक्षार स्वर्णमय जिन-मंदिर है भवभेदी ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे चित्रकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पद्मकूट वक्षार मनोरम जिन-चैत्यालय से शोभित।
देव-देवियाँ इन्द्रादिक सुर मुनिवर विद्याधर मोहित ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पद्मकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

नलिन कूटवक्षार मनोहरजिन-चैत्यालय शोभावान।
रत्नमयी इकशतवसुप्रतिमा से भूषितहै महामहान ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे नलिनकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

एक शैल वक्षार वर्ण कंचन मय पर जिन-चैत्यालय।
रत्नमयी जिन-बिम्ब शाश्वत मानो यहहो सिद्धालय ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बधि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे एकशैलवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता सरिता दक्षिण तट है वेदी सुन्दर देवारण्य।
है त्रिकूट वक्षार शाश्वत पूजूँ नाशूँ जगत अरण्य ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे त्रिकूटवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैश्रवण वक्षार अकृत्रिम रत्नमयी जिनबिम्ब महान।
पूजूँ ध्याऊँ अष्ट द्रव्य ले करूँ आत्मा का कल्याण ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वैश्रवणवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है अंजन वक्षार शाश्वत सिद्धकूट पर है जिनधाम।
भक्तिभाव से करूँ अर्चना नित प्रति सादर करूँ प्रणाम ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे अंजनवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनात्मा है वक्षार शाश्वत जिन-चैत्यालय युक्त।
नमन करूँ जिनवर गुण गाऊँ गुण अनंत से हूँ संयुक्त ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे आत्मांजनवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा दक्षिण तट वेदी भद्रशाल चारों वक्षार।
पहिला श्रद्धावान नाम है जिनगृह महिमा अपरंपार ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे श्रद्धावानवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजटावान द्वितिय वक्षार मनोहर भव्य अकृत्रिम है।
चारकूट में एक कूट पर जिन-चैत्यालय स्वर्णिम है ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे विजटावानवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशीविष वक्षार तीसरा सिद्धकूट पर जिन-मंदिर।
ज्ञानोदधि की विमल तरंगों से अभिषेक करूँ जिनवर ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे आशीविषवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धायतन युक्त वक्षार सुखावह चौथा है भगवंत।
गुण-पर्ययवत् द्रव्य बनूँ मैं नाथ वीतरागी अरहंत ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सुखावहवक्षारस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीतोदा सरिता उत्तर तट भूतारण्य बड़ी वेदी।
चन्द्रमाल वक्षार एक है भव-दुःख सागर का छेदी ॥१३॥

ॐ ह्री श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि-पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे चन्द्रमालवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णिम सूर्यमाल मनहर वक्षार जिनालय करूँ प्रणाम।
मैं शाश्वत चैतन्यमूर्ति हूँ शिवम् सदन है मेरा धाम ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सूर्यमालवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नागमाल वक्षार नाम है सिद्धकूट है जगत प्रसिद्ध।
व्यय-उत्पाद-ध्रौव्य युत सत् हूँ, वस्तुस्वरूप स्वयं से सिद्ध ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे नागमालवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवमाल वक्षार चतुर्थम सिद्धायतन मनोज्ञ महान।
चारकूट में एककूट पर जिन-मंदिर है श्रेष्ठ प्रधान ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे देवमालवक्षार स्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सोरठा

ये षोडश वक्षार, जिनगृह पूजे भाव से।
आस्रव कर दूँ क्षार, स्वाध्यायमय अर्घ्य ले॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वापरविदेहस्थ षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

उपादान बलवान है, कार्य सिद्धि में जान।
यह निमित्त परद्रव्य है, कभी न प्रेरक मान॥
उपादान स्वयमेव ही, परिणमता कृत रूप।
हैं निमित्त असमर्थ सब, उदासीन निज रूप॥
उपादान हो जाग्रत, तब होता है कार्य।
तब निमित्त की उपस्थिति, होती है अनिवार्य॥
जो निमित्त का रूप है, उपादान का नाहिं।
उपादान का रूप भी, तो निमित्त का नाहिं॥
यह निमित्त-नैमित्तिकी, जानो है संबंध।
उपादान निज जाग्रत, करके बनो अबंध॥
दोनों की सत्ता पृथक, कार्य प्रथक्य स्वतंत्र।
अपना-अपना कार्य है, नहीं कोई परतंत्र॥
दोनों की करनी सदा, भिन्न-भिन्न पहचान।
निजस्वरूप की ओर लख, यही श्रेष्ठ बलवान॥

छंद - सवैया

एक शुद्ध आत्मा की छवि को निहारूँ शीघ्र,
धर्मचक्रवर्ती पद मिले आत्मज्ञान से।
आत्मा के गीत गाऊँ आत्मा की प्रीत पाऊँ,
आत्मा का कमल खिलेगा निज भान से॥

आत्मा की रस भीनी आयी बरसात आज,
अनुभव रस धार बहे भेद-ज्ञान से ॥
महामोक्ष सिंहासन सूना-सूना दीखे आज,
हो जाऊँ विराजमान मात्र आत्मज्ञान से ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वापरविदेहस्थ षोडशवक्षारपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीरछंद

जम्बूद्वीप वक्षारों के जिनगृह पूजे हर्षित हो ।
अंशुक चिन्ह विभूषित ध्वज-आरोहण करता पुलकित हो ॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष ।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो, जिनगुण-संपति मिले जिनेश ॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

भजन

तिहारे ध्यान की मूरत अजब छवि को दिखाती है ।
विषय की वासना तज कर निजातम लौ लगाती है ॥

तेरे दर्शन से हे स्वामी, लखा है रूप मैं मेरा ।
तजूँ कब राग तन धन का ये सब मेरे विजाती हैं ॥ १ ॥

जगत के देव सब देखे, कोई रागी कोई द्वेषी,
किसी के हाथ आयुध है, किसी को नार भाती है ॥ २ ॥

जगत के देव हठ ग्राही, कुनय के पक्षपाती हैं,
तू ही सुनय का है वेत्ता, वचन तेरे अघाती है ॥ ३ ॥

मुझे कुछ चाह नहीं जग की यही है चाह स्वामी जी,
जपूँ तुम नाम की माला जो मेरे काम आती है ॥ ४ ॥

तुम्हारी छवि निरख स्वामी निजातम लौ लगी मेरे,
यही लौ पार कर देगी जो भक्तों को सुहाती है ॥ ५ ॥

पूजन क्रमांक-३१

विद्युन्मालीमेरु संबंधी चौंतीस विजयार्ध जिनालय पूजन

स्थापना

वीरछंद

विद्युन्माली पूर्व तथा पश्चिम विदेह में गिरि विजयार्ध ।
दोनों दिशि में सोलह-सोलह भरतैरावत दो विजयार्ध ॥
रजतमयी पर्वत पर जिनगृह एक शतक वसु प्रतिमायुक्त ।
तीन सहस छह शतक बहत्तर जिन प्रतिमाओं से संयुक्त ॥
णमो जिणाणं णमो जिणाणं ध्वनि हो अंतर में साकार ।
अप्पा सो परमप्पा जपकर वन्दन करता हर्ष अपार ॥
भक्ति भाव से पूजन करता गिरिवर चौंतीसों अभिराम ।
आओ श्री जिनराज पधारो परिणति में हो पूर्ण विराम ॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । (पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।)

छंद - शिखरणी

चढ़ाऊँ जल उत्तम रोग त्रय के नाशहित जिन ।
जजूँ मैं रजतालय हनूँ मैं मोह अरि को ॥
प्रथम मिथ्यात्व नाशूँ प्राप्त समकित करूँ मैं ।
अहो जिनवर स्वामी नयन-पथगामी बनो तुम ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चढ़ाता हूँ चंदन भवातप के नाशहित जिन ।
जजूँ मैं रजतालय बनूँ मैं रागजित अब ॥
अनन्तानुबंधी क्षय कर स्वरूपाचरण लूँ ।
अहो जिनवर स्वामी नयन-पथगामी बनो तुम ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

चढ़ाऊँ निज अक्षत अष्टमद के नाशहित जिन।
जजूँ मैं रजतालय बनूँ प्रभु द्रोहजित मैं॥
प्रथम अविरति नाशूँ देशसंयम धरूँ मैं।
अहो जिनवर स्वामी नयन-पथगामी बनो तुम॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चढ़ाऊँ पुष्प अनुपम काममद के नाशहित जिन।
जजूँ मैं रजतालय बनूँ मैं इन्द्रियजयी॥
हरूँ प्रत्याख्यानी सकल संयम उर धरूँ।
अहो जिनवर स्वामी नयन-पथगामी बनो तुम॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चढाऊँ चरु रसमय क्षुधादुख के नाशहित जिन।
जजूँ मैं रजतालय बनूँ प्रभु मानजित मैं॥
संज्वलन भी कर क्षय यथाख्यातं उर धरूँ।
अहो जिनवर स्वामी नयन-पथगामी बनो तुम॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चढ़ा दीपक अनुपम लहूँ कैवल्य रवि मैं जिन।
जजूँ मैं रजतालय वीतरागी पद लहूँ॥
प्रगट हो ज्ञान दर्शन सुख बल अनन्तानन्त।
अहो जिनवर स्वामी नयन-पथगामी बनो तुम॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि हो ध्यान रूपी कर्म अरि ईंधन जले जिन।
जजूँ मैं रजतालय बनूँ संसार जित अब।

विजय त्रिभुवन करके सिद्ध पदवी वरूँ मैं।
अहो जिनवर स्वामी नयन-पथगामी बनो तुम॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लहूँ मैं शिवमय मोक्ष सुख की प्राप्तिहित अब जिन।
जजूँ मैं रजतालय बनूँ मैं विश्वजित प्रभु॥
विराजूँ सिद्धालय में मुक्ति रमणी को वरूँ मैं।
अहो जिनवर स्वामी नयन-पथगामी बनो तुम॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य लाऊँ अद्भुत स्वपद शिवसुख प्राप्तिहित मैं जिन।
जजूँ मैं रजतालय बनूँ कृतकृत्य अब मैं॥
निराकुल निज-आनन्द भोगूँगा काल अनन्त।
अहो जिनवर स्वामी नयन-पथगामी बनो तुम॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थितसिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

छन्द - रोला

भद्रशाल वेदी है उत्तर सीता तट पर।
कच्छादेश मध्यरूपाचल जिनगृह सुन्दर॥
विनयसहित मैं ध्वजा चढ़ाऊँ जिनगृह आकर।
जिनपूजन का फल पाऊँ निज गुण रत्नाकर॥१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे कच्छादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुकच्छा मध्य एक विजयार्ध जिनालय।
सप्त-तत्त्व श्रद्धा करके लूँ निज का आश्रय॥२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थ सीतानद्युत्तरतटे सुकच्छादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश महाकच्छा में रूपाचल वितान है।
आस्रवभावों का निरोध संवर महान है॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे महाकच्छादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश कच्छकावती रजतगिरि जिनगृह वन्दूँ।
संवरभाव जगा स्वभाव अपना अभिनन्दूँ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे कच्छकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आवर्ता है देश रजतगिरि जिनचैत्यालय।
चिन्मय का आश्रय लेकर पाऊँ मुक्तालय॥५ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे आवर्तादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश लांगलावर्ता रजताचल जिन-आलय।
एकमात्र शुद्धात्म तत्त्व ही निज ज्ञानालय॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं. श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे लांगलावर्तादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश पुष्कला रजताचल जिनगृह मंगलमय।
भाव द्रव्य निर्जरा शक्ति लाती सुख शिवमय॥७ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे पुष्कलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश पुष्कलावती मध्य विजयार्ध मनोरम।
अरहंतों के द्रव्य और गुण जानूँ हरदम॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटेपुष्कलावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सीता दक्षिण देवारण्य निकट रजताचल।
वत्सादेश मध्य में जिनगृह स्वर्णिम उज्ज्वल॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुवत्सा मध्य रजतगिरि दर्शनीय है।
निज-स्वरूप छवि त्रिभुवन में अति वन्दनीय है ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुवत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश महावत्सा गिरि मंदिर अर्चनीय है।
आत्मस्वभाव त्रिकाली ध्रुव अभिनन्दनीय है ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे महावत्सादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश वत्सकावती मध्य रूपाचल जिनगृह।
वन्दन करके करूँ शुद्ध सामायिक निस्पृह ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे वत्सकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रम्यादेश विदेह मध्य रजताभ जिनालय।
छेदोपस्थापन चारित्र वरूँ शुद्धालय ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रम्यादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुरम्या चैत्यालय विजयार्ध नमन कर।
मैं धारूँ परिहार-विशुद्धी निज आश्रय कर ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे सुरम्यादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश दिव्य रमणीया में विजयार्ध जिनालय।
सूक्ष्मसाम्परायी चारित्र धरूँ मंगलमय ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धी पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे रमणीयादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश मंगलावती रजतगिरि जिनगृह पावन।
यथाख्यात चारित्र यथा चैतन्य सुहावन ॥

विनय सहित मैं ध्वजा चढ़ाऊँ जिनगृह आकर।
जिनपूजन का फल पाऊँ निज गुण रत्नाकर ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पूर्वविदेहस्थसीतानदीदक्षिणतटे मंगलावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - उपमान (अहो जगत गुरु देव)

सीतोदा के पास पद्मादेश मनोहर।
गिरि विजयार्ध प्रसिद्ध जिन-चैत्यालय सुन्दर ॥
वन्दूँ मैं जिनदेव नित्य निरंजन स्वामी।
ध्वज-आरोहण आज जिनगृह जग में नामी ॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुपद्मा मध्य रजताचल जिनगेहा।
तत्त्व विचार सदैव नित्य करूँ धर नेहा ॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सुपद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताचल सु महान पद्मा सादर वन्दूँ।
इक शत वसु जिनबिम्ब रत्निम सब अभिनन्दूँ ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे महापद्मादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश पद्मकावती रजताचल चैत्यालय।
सम्यग्ज्ञान स्वरूप मैं स्वयमेव जिनालय ॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे पद्मकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंखादेश सुमध्य है विजयार्ध सुहाना।
जिनगृह पूजूँ आज मुझ को शिवपुर जाना ॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धी पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे शंखादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नलिनादेश महान चैत्यालय रजताचल।
अष्टद्रव्य ले नाथ पूजूँ मन कर निर्मल॥ २२॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे नलिनादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुमुदा देश सुमध्य रूपाचल विख्याता।
चैत्यालय जिन चैत्य भावमयी प्रख्याता॥ २३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे कुमुदादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सरिता देश प्रसिद्ध गिरि वैताढ्य जिनालय।
जिनमुनि श्रेष्ठ महान सर्व गुणों के आलय॥
वन्दूँ में जिनदेव नित्य निरंजन स्वामी।
ध्वज-आरोहण आज जिनगृह जग में नामी॥ २४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बिन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानदीदक्षिणतटे सरितादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

भूतारण्य समीप, विद्युन्माली मेरु के।
वप्रादेश महान, रूपाचल जिन पूजिये॥
अनेकान्त है सार, जिनशासन ध्वज एक ही।
स्याद्वाद सुखकार, जिनवाणी मंगलमई॥ २५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे वप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुवप्रा मध्य, रूपाचल जिनगेह को।
आत्मस्वरूप विचार, बार-बार वन्दन करूँ॥ २६॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतानद्युत्तरतटे सुवप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजता भी विजयार्ध, देश महावप्रा निकट।
वस्तु स्वरूप विचार, नय प्रणाम साधन सुलभ॥ २७॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे महावप्रादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश वप्रकावती, रूपाचल जिनधाम है।
श्री अहरंत स्वरूप, छ्यालीस गुण युक्त हैं ॥ २८ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे वप्रकावतीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताचल जिनगेह, गंधादेश प्रसिद्ध है।
वन्दूँ सिद्धसमूह अष्ट महागुण युक्त जो ॥ २९ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश सुगंधा मध्य, चैत्यालय स्वर्णाभ है।
श्री आचार्य स्वरूप, गुण छत्तीस महान युत ॥ ३० ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे सुगंधादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देश गंधिला मध्य, रजताचल जिनगेह है।
उपाध्याय के पास, गुण पच्चीस प्रसिद्ध हैं ॥ ३१ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधिलादेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधमालिनी देश, रूपाचल जिनधाम जय।
नग्न दिगम्बर वेश, पाऊँ अट्ठाईस सुगुण ॥
अनेकान्त है सार, जिनशासन ध्वज एक ही।
स्याद्वाद सुखकार, जिनवाणी मंगलमई ॥ ३२ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि पश्चिमविदेहस्थसीतोदानद्युत्तरतटे गंधमालिनीदेशे विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - सरसी

पुष्करार्ध पश्चिम है विद्युन्माली मेरु महान।
सुरगिरि दक्षिण भरत क्षेत्र है अतिशय शोभावान ॥
इसमें है विजयार्ध रजतमय जिस पर श्री जिनगेह।
परम भक्ति से वन्दूँ पाऊँ आत्मसुधारस मेह ॥ ३३ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि भरतक्षेत्रस्थविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्करार्ध पश्चिम दिशि विद्युन्माली मेरु महान।
सुरगिरि के उत्तर में ऐरावत है क्षेत्र प्रधान॥
इसमें है विजयार्ध रजतमय जिस पर श्री जिनगेह।
परम भक्ति से वन्दूँ पाऊँ आत्मसुधारस मेह॥ ३४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ विजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सवैया तेईसा

विद्युन्माली सुपूरब-पश्चिम के विजयार्ध मनोरम जानो।
सोलह-सोलहदोऊ दिशा में रजताचल जिनमंदिर मानो॥
दक्षिण ओर भरत महिमामय उत्तर ऐरावत पहचानो।
उत्तम पूर्ण सुअर्घ्य चढ़ाकर अपना शुद्ध स्वरूप पिछानो॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

जिनवर के उपदेश में, हैं अनेक सिद्धान्त।
भविजन जानें आचरें, करलें भव का अन्त॥

ताटंक

निज सर्वज्ञ शक्ति की होती जिसको कभी प्रतीति नहीं।
वह निमित्त का आश्रय लेता निज से होती प्रीति नहीं॥
न्याय छोड़ अन्याय मार्ग पर चलता होती जीत नहीं।
सम्यग्दृष्टि जीव की होती ऐसी कभी अनीति नहीं॥
अंतर दृष्टि पूर्वक जो सेवन करता चैतन्य स्वभाव।
ब्रह्मानन्द समुद्र प्राप्त कर क्षय कर देता सकल विभाव॥
ध्रुव स्वभाव के लक्ष्य मात्र से वीतराग बन जाता है।
व्यय-उत्पाद लक्ष्य में हो तो राग-द्वेष से नाता है॥

ऊर्ध्वलोक तनुवातवलय में सिद्धशिला शोभित करता।
शत-इन्द्रों से वन्दित होता सर्व विश्व मोहित करता॥
लोकालोक प्रकाशित होता स्वतः ज्ञान की गरिमा से।
निजानंद रस झर-झर झरता स्व-पर प्रकाशक महिमा से॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि चतुस्त्रिंशतविजयार्धपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

विद्युन्माली गिरि विजयार्ध जिनालय पूजे हर्षित हो।
वृषभ चिन्ह की ध्वजा चढ़ाएँ अंतर्मन से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

रोम रोम पुलकित हो जाय, जब जिनवर के दर्शन पाय।
ज्ञानानन्द कलियाँ खिल जायँ, जब जिनवर के दर्शन पाय॥

जिन-मन्दिर में श्री जिनराज, तन-मन्दिर में चेतनराज।
तन-चेतन को भिन्न पिछान, जीवन सफल हुआ है आज॥टेक॥

वीतराग सर्वज्ञ-देव प्रभु, आए हम तेरे दरबार।
तेरे दर्शन से निज दर्शन, पाकर होवें भव से पार॥
मोह-महातम तुरत विलाय, जब जिनवर के दर्शन पाय॥१॥

दर्शन-ज्ञान अनन्त प्रभु का, बल अनन्त आनन्द अपार।
गुण अनन्त से शोभित हैं प्रभु, महिमा जग में अपरम्पार॥
शुद्धातम की महिमा आय, जब जिनवर के दर्शन पाय॥२॥

लोकालोक झलकते जिसमें, ऐसा प्रभु का केवलज्ञान।
लीन रहें निज शुद्धातम में, प्रतिक्षण हो आनन्द महान्॥
ज्ञायक पर दृष्टि जम जाय, जब जिनवर के दर्शन पाय॥३॥

प्रभु की अन्तर्मुख-मुद्रा लखि, परिणति में प्रगटे समभाव।
क्षण-भर में हों प्राप्त विलय को, पर-आश्रित सम्पूर्ण विभाव॥
रत्नत्रय-निधियाँ प्रगटाय, जब जिनवर के दर्शन पाय॥४॥

पूजन क्रमांक-३२

विद्युन्मालीमेरु संबंधी षट् कुलाचल जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - रोला

विद्युन्माली मेरु षट् कुलाचल अभिनन्दूँ।
षट् पर्वत पर षट् जिनमंदिर सादर वन्दूँ॥
रत्नत्रय वेदी पर श्री जिनराज पधारो।
मम परिणति में तिष्ठ, सन्निकट होय उबारो॥

ॐ ह्रीं श्री पश्चिमपुष्करार्धद्वीपस्थ विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

छंद - त्रोटक

सम्यक् जलधारा लाऊँगा, पल में मिथ्यात्व भगाऊँगा।
जिन-भवन षट्कुलाचल वन्दूँ, शाश्वत स्वभाव निज अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् चंदन उर लाऊँगा, पच्चीस दोष विनशाऊँगा।
जिन-भवन षट्कुलाचल वन्दूँ, शाश्वत स्वभाव निज अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् अक्षत जिन चरण धरूँ, मिथ्यामय वसु मद नाश करूँ।
जिन-भवन षट्कुलाचल वन्दूँ, शाश्वत स्वभाव निज अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् सुपुष्प जिन चरण धरूँ, शंकादि दोष वसु नाश करूँ।
जिन-भवन षट्कुलाचल वन्दूँ, शाश्वत स्वभाव निज अभिनन्दूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् नैवेद्य सरस पागूँ, अब षट् अनायतन सबत्यागूँ।
जिन-भवन षट्कुलाचल वन्दूँ, शाश्वत स्वभाव निज अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् दीपक की ज्योति धरूँ, अब शल्य तीन का नाश करूँ।
जिन-भवन षट्कुलाचल वन्दूँ, शाश्वत स्वभाव निज अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् ध्रुव चरु लाऊँ स्वामी, सम्यक्त्व सुदृढ़ पाऊँ नामी।
जिन-भवन षट्कुलाचल वन्दूँ, शाश्वत स्वभाव निज अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् फल पाऊँ सर्वोत्तम, ध्रुव दिव्य दृष्टि हो परमोत्तम।
जिन-भवन षट्कुलाचल वन्दूँ, शाश्वत स्वभाव निज अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् स्वभाव का अर्घ्य शुद्ध, पदवी अनर्घ्य पाऊँ प्रबुद्ध।
जिन-भवन षट्कुलाचल वन्दूँ, शाश्वत स्वभाव निज अभिनन्दूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

छंद - सार (जोगीरासा)

विद्युन्माली दक्षिण में हिमवान रजतगिरि जानो।
ग्यारह कूटों में इक पर श्री जिनवर-भवन प्रमाणो ॥
श्री जिनवर की पूजन करके निज-अनुभव प्रभु पाऊँ।
भक्ति भाव से ध्वजा चढ़ाने जिनमंदिर नित जाऊँ ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि हिमवानपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजत महाहिमवान सुपर्वत दक्षिण दिशि में सुन्दर।
आठ कूट में एक कूट पर श्री जिनवर का मंदिर॥
द्रव्य भाव संयम के धारी गुरु चरणन चित लाऊँ।
भक्ति भाव से ध्वजा चढ़ाने जिनमंदिर नित जाऊँ॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि महाहिमवानपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिन बिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरगिरि दक्षिण निषधाचल है तप्त स्वर्णसम मनहर।
नवकूटों में एक कूट पर अकृत्रिम गृह जिनवर॥
पंच भेद स्वाध्याय करूँ मैं निज आतम को ध्याऊँ।
भक्ति भाव से ध्वजा चढ़ाने जिनमंदिर नित जाऊँ॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि निषधपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तरदिशि में नील सुगिरि वैडूर्यमयी सब उज्ज्वल।
नवकूटों में एक कूट पर श्री जिनमंदिर निर्मल॥
अंतर बाहिर संयम धारूँ देशव्रती बन जाऊँ।
भक्ति भाव से ध्वजा चढ़ाने जिनमंदिर नित जाऊँ॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि नीलपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरगिरि उत्तर रुक्मिशिखर पर रजतमयी है जानो।
आठ कूट में एक कूट पर स्वर्णिम मन्दिर मानो॥
यथाशक्ति तप धारण करके शुद्ध भाव उरलाऊँ।
भक्ति भाव से ध्वजा चढ़ाने जिनमंदिर नित जाऊँ॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि रुक्मिपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर सुरगिरि शिखरी पर्वत स्वर्ण समान सुपरिचित।
ग्यारह कूटों में इक पर जिन स्वर्णमयी गृह निश्चित॥

योग्यपात्र को योग्य दान दे लोभकषाय घटाऊँ।
भक्ति भाव से ध्वजा चढ़ाने जिनमंदिर नित जाऊँ ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धी शिखरीपर्वतस्थित-सिद्धकूटजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद - उपेन्द्रवज्रा

ये षट् कुलाचल महिमामयी हैं।
जिनराज के गृह त्रिभुवनजयी हैं ॥
ये सब अकृत्रिम स्वयमेव निर्मित।
है अर्घ्य पूरण इनको समर्पित ॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थितसिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

सोलह कारण भावना, भाते हैं तीर्थेश।
तीर्थंकर पद प्राप्त कर, होते महा-महेश ॥

चौपाई

दर्शविशुद्धि भावना उर धर। दृढ़ समकित प्रगटाते सत्वर ॥
हृदय विनय सम्पन्न भावना। रत्नत्रय की सदा साधना ॥
शीलव्रतों में अनतिचार हो। कामजयी को नमस्कार हो ॥
हैं अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगमय। सम्यग्ज्ञानी ज्ञान भोगमय ॥
नित संवेग भावना भाते। दृढ़ वैराग्य हृदय में लाते ॥
शक्ति पूर्वक दान भावमय। ज्ञानदान देते प्रभावमय ॥
शक्तिपूर्वक तपोभावना। सदा अनिच्छुकता निहारना ॥
साधु-समाधि भावना भाते। ऋषि मुनियों के विघ्न मिटाते ॥
वैय्यावृत्तिकरण के स्वामी। रोगी मुनि सेवा में नामी ॥
अर्हद्भक्ति सदा मंगलमय। अरहंतों की विनय भावमय ॥

आचार्यों की भक्ति हृदय में । सेवा में रस आत्म-निलय में ॥
बहुश्रुत-भक्ति हृदय में धारूँ । उपाध्याय पद सदा पखारूँ ॥
प्रचवनभक्ति सदा सुखदायी । शास्त्र विनय पूरी ही भायी ॥
आवश्यक परिहाणि संवारें । षट आवश्यक पालें धारें ॥
अतंर में मार्ग-प्रभावना । धर्म प्रभावी नित्य भावना ॥
प्रवचन वत्सलभाव दिव्यतम । धर्मी से गोवत्स प्रीति सम ॥
मैं भी भाऊँ यही भावना । जगे न उर में यशो-कामना ॥
विषय-वासना त्वरित नसाऊँ । तीर्थंकर पद में न लुभाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री पूर्वपुष्करार्धद्वीपे विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि षट्कुलाचलस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

वीरछंद

विद्युन्माली छहों कुलाचल जिनगृह पूजे हर्षित हो ।
कमल चिन्ह की ध्वजा चढ़ाएँ अतंर्मन से पुलकित हो ॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष ।
बोधिलाभहो सुगतिगमनहो जिनगुण-संपति मिले जिनेश ॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

भजन

भविक तुम वन्दहु मनधर भाव, जिन-प्रतिमा जिनवर-सी कहिए ।
जाके दरस परम पद प्रापति, अरु अनंत शिव-सुख लहिए ॥टेक ॥

निज-स्वभाव निरमल ह्वै निरखत, करम सकल अरि घट दहिये ।
सिद्ध समान प्रगट इह थानक, निरख-निरख छवि उर गहिए ॥१ ॥

अष्ट कर्म-दल भंज प्रगट भई, चिन्मूरति मनु बन रहिये ।
इह स्वभाव अपनो-पद निरखहु जो अजरामर पद चहिये ॥२ ॥

त्रिभुवन मांहि अकृत्रिम कृत्रिम, वंदन नित-प्रति निरवहिये ।
महा-पुण्य संयोग मिलत है, भैया जिन प्रतिमा सरदहिये ॥३ ॥

पूजन क्रमांक-३३

विद्युन्मालीमेरु संबंधी दक्षिण-उत्तर द्वय इष्वाकार जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - सरसी

विद्युन्माली संबंधी द्वय इष्वाकार प्रसिद्ध।
पुष्करार्ध के दक्षिण उत्तर स्वर्णमयी सुप्रसिद्ध॥
आठलाख योजन लम्बा अरु एक सहस विस्तृत।
चार शतक योजन ऊँचे हैं ये पर्वत शाश्वत॥
कालोदधि के तट से लेकर मानुषोत्तर तक।
द्वय पर्वत पर द्वय चैत्यालय पूजूँ नित सम्यक्॥

छंद - इन्द्रवज्रा

मिथ्यात्वसारा मैंने निवारा। पायी सदा को ध्रुव ज्ञानधारा।
अविलंबपाऊँबहुगुण विशाला। शुद्धात्मरविकापाऊँ उजाला॥
जीवंतबलका परिपूर्ण स्वामी। शुद्धात्माहूँ त्रैलौक्य नामी।
आओपधारोजिनराजस्वामी, तिष्ठो निकटहो मस्तकनमामि॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि दक्षिणोत्तरद्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवोषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

छंद - द्रुतविलम्बित

सरस नीर सुनिर्मल लाइये। जनम मृत्यु जरा विनशाइये॥
सुगिरि इष्वाकार चढ़ाइये। हृदय में जिनराज बिठाइये॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि द्वयइष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सरसशीतल चंदन लाइये।सकल भवका ताप मिटाइये॥
सुगिरि इष्वाकार चढ़ाइये। हृदयमें जिनराज बिठाइये॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि द्वयइष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल अक्षत गुणमय लाइये। परम अक्षय पद प्रगटाइये ॥
सुगिरि इष्वाकार चढ़ाइये। हृदय में जिनराज बिठाइये ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि द्वयइष्वाकारपर्वतस्थितसिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सरसपुष्प स्वभावी लाइये। विकट मकरध्वज विनशाइये ॥
सुगिरि इष्वाकार चढ़ाइये। हृदय में जिनराज बिठाइये ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि द्वयइष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज अनुभव रस चरु लाइए। सहज तृप्ति सरोवर पाइये ॥
सुगिरि इष्वाकार चढ़ाइये। हृदय में जिनराज बिठाइये ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि द्वयइष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहजज्ञान प्रदीप प्रजलाइये। सकल मोह तिमिर विनशाइये ॥
सुगिरि इष्वाकार चढ़ाइये। हृदय में जिनराज बिठाइये ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि द्वयइष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल निर्मल धूप बनाइये। सकल कर्म विकार जलाइये ॥
सुगिरि इष्वाकार चढ़ाइये। हृदय में जिनराज बिठाइये ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि द्वयइष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुफल लोकजयी अब लाइये। विशद मोक्ष सुफल उपजाइये ॥
सुगिरि इष्वाकार चढ़ाइये। हृदय में जिनराज बिठाइये ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि द्वयइष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अचल अविकल अर्घ्य सजाइये। पद अनर्घ्य अभी निज पाइये ॥
सुगिरि इष्वाकार चढ़ाइये। हृदय में जिनराज बिठाइये ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि द्वयइष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

दोहा

पुष्करार्ध के द्वीप में, दक्षिण इष्वाकार।
ध्वज आरोहण मैं करूँ, पाऊँ सौख्य अपार॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि दक्षिणदिक्षु इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्करार्ध की भूमि पर, उत्तर इष्वाकार।
ध्वज आरोहण मैं करूँ, हो जाऊँ अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि उत्तरदिक्षु इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूटजिनालय जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

इन्द्रवज्रा

भू शुष्क मेरी सिंचित करो अब।
हे नाथ शिव-पद निश्चित करो अब॥
निज आत्मा को अविलम्ब ध्याऊँ।
पाया सुअवसर ना चूक जाऊँ॥

सोरठा

इष्वाकार महान, पुष्करार्ध दो श्रृंग हैं।
दो जिनभवन महान, वन्दूँ निज कल्याण हित॥
पुष्कर सोलह लाख, योजन का विस्तार है।
आवृत बत्तीस लाख, पुष्करवर समुद्र से॥
धन्य हुआ अवतार, श्री जिनवर के दर्शकर।
होऊँ भव-दधि पार, चिदानन्द घन स्पर्श कर॥
ध्वजा चढाऊँ नाथ, पूर्व अर्घ्यं अर्पण करुँ।
नित्य नमाऊँ माथ, निज में निज अर्पण करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि दक्षिणोत्तरदिक्षु द्वय इष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

निर्ग्रन्थों का पंथ है, वीतराग विज्ञान।
अन्तर बाहिर नग्नता, है जिनधर्म प्रधान॥

छंद - मरहठा माधवी

अंतरंग शुद्धता नग्नता निज स्वभाव में लीनता।
निज को भजते-भजते होती है विभाव की हीनता॥
निष्ठापूर्वक निज परिणति करती स्वभाव का संग रे।
आस्थाओं की ज्योति ज्ञानमय पाता हृदय अभंग रे॥
पर परिणति के क्षय होते ही विमल दृष्टि के दृश्य रे।
ध्रुवस्वभाव साम्राज्य प्राप्त कर सर्व विभाव अदृश्य रे॥
सिद्धशिला के सिंहासन की छवि चेतन को भा गयी।
व्यय-उत्पाद न दृष्टित होते ध्रुव की महिमा आ गयी॥
गुण अनंत की गरिमा से चैतन्य सुशोभित हो गया।
ज्ञान पटल खुल जाते ही अज्ञान पूर्णतः खो गया॥
जिन-पूजन से निज की महिमा से मैं मंडित हो गया।
हुई नष्ट पर्याय-दृष्टि तो ज्ञानी पंडित हो गया॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युन्मालीमेरुसम्बन्धि-दक्षिणोत्तरदिक्षु द्वयइष्वाकारपर्वतस्थित सिद्धकूट जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

विद्युन्माली इष्वाकार जिनालय पूजे हर्षित हो।
गज चिन्हांकित ध्वज आरोहण करते स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगति गमन हो, जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक - ३४

पुष्करार्ध स्थित मानुषोत्तर जिनालय पूजन

स्थापना

सोरठा

पुष्कर का विस्तार, योजन सोलह लाख है।
चूड़ी के आकार, मध्य मानुषोत्तर शिखर॥
सतरहसौ इक्कीस, योजन ऊँचा जानिये।
इक सहस्र बाईस, सहज मूल विस्तार है॥
सात शतक तेईस, विस्तृत है गिरि मध्य में।
चार शतक चौबीस, ऊपर में विस्तार है॥
जिन-चैत्यालय चार, पूर्वादिक चारों दिशा।
मिथ्यातिमिर निवार, भाव सहित पूजन करूँ॥

दोहा

मानुषोत्तर शिखर तक, करते मनुज प्रवेश।
आगे जा सकते नहीं, जिन-आगम संदेश॥
चारों दिशि के जिन भवन, पूजन करता आज।
वन्दूँ जिनगृह साठ को, मैं परोक्ष जिनराज॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्वाननम्।)

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनम्।)

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छंद-मानव

जल लाऊँ ज्ञानस्वभावी उर शीतलता पाने को।
दुखमय मिथ्यात्व कलुषता, पूर्ण विजय पाने को॥

मैं मानुषोत्तर जाऊँ निर्मल परिणाम सजाऊँ।
जिन-प्रभु की पूजन करके अपने स्वभाव में आऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन दर्शनमय लाऊँ भव आतप पर जय पाने।
पर परिणति को क्षय कर दूँ सुन निज परिणति के गाने॥ मैं॰॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं....

अक्षत अनंत गुणमय लूँ अक्षय पद के पाने को।
ज्ञानात्मक रूप निहारूँ संसार पार ज़ाने को॥ मैं॰॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं....

निर्मल पर्याय सुमन ले निष्काम भावना भाऊँ।
मकरध्वज पीर विनाशूँ सम्पूर्ण शील गुण पाऊँ॥ मैं॰॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं....

अनुभव रस चरु के मोदक ला क्षुधा रोग को नाशूँ।
त्रैलोक्य विजय कर स्वामी आत्मज्ञ स्वरूप विकासूँ॥ मैं॰॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं....

दीपक, स्वज्ञानमय, लाऊँ, अज्ञान तिमिर विनशाऊँ।
कैवल्यज्ञान अरूणावलि, त्रिभुवन युगपत झलकाऊँ॥ मैं॰॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं.

दशधर्म धूप ध्रुव लाऊँ कर्मांजन क्षय करने को।
स्वच्छत्व शक्ति बन पाऊँ उर निर्मलता वरने को॥ मैं॰॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं....

फल सर्व अतीन्द्रिय लाऊँ ध्रुव मोक्ष सौख्य पाने को।
उज्ज्वल शिवत्व प्रगटाऊँ निज सिद्धपुरी जाने को॥ मैं॰॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं....

निज अर्घ्य ज्ञानमय लाऊँ पदवी अनर्घ्य पाने को।
हो जाऊँ नित्य निरंजन चैतन्य राज्य लाने को॥
मैं मानुषोत्तर जाऊँ निर्मल परिणाम सजाऊँ।
जिन-प्रभु की पूजन करके अपने स्वभाव में आऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

अर्घ्यावलि

चौपई

पूरब दिशि जिनगृह सुखकार, ध्वजा कलश शोभित मनहार।
प्रगट करूँ निर्मल पर्याय, पाऊँ शुद्धातम शिवदाय॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरपूर्वदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि.

दक्षिण दिशि जिन मन्दिर जाय, अनेकान्तमय ध्वजा चढ़ाय।
रागादिक परभाव नशाय, भव-बन्धन सम्पूर्ण मिटाय॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरदक्षिणदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि.

पश्चिमदिशि चैत्यालय एक, स्याद्वाद ध्वज लूँ सविवेक।
जग के सकल विवाद मिटाय, दर्शन ज्ञान चरित्र लहाय॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरपश्चिमदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि.

उत्तर दिशि जिन-भवन महान, रत्नत्रय रंग ध्वजा प्रधान।
मोह-क्षोभ का कर दूँ नाश, प्रगटे उर कैवल्य प्रकाश॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरउत्तरदिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि.

पूर्णार्घ्य

छन्द-मानव

चारों मन्दिर की शोभा है, अनुपमेय दिव्योत्तम।
मानों ये सिद्धालय हों जगतीतल के परमोत्तम॥
यह पूर्ण अर्घ्य हे स्वामी ! भावों का लेकर आया।
अब, सहज सिद्ध होने का, यह मूल मंत्र है पाया॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

मोह महातम नाश हित, करूँ आपका ध्यान।
राग-द्वेष का नाश कर, बन जाऊँ भगवान॥

छंद - चांद्रायण

हिमशिला मिथ्यात्व की गलती नहीं।
मोह की गहराइयाँ मिलती नहीं॥
बंद जबतक ज्ञान-चक्षु विचित्र हैं।
तत्त्वरस बरसात भी झिलती नहीं॥
राग-द्वेषों की यहाँ भरमार है।
ज्ञान की चंपा कली खिलती नहीं॥
राग का ही राग उर में व्याप्त है।
जीर्ण चादर भी कभी सिलती नहीं॥
मोह मदिरा के नशे में चूर हूँ।
आत्मा अज्ञान से छिलती नहीं॥
शुद्ध परिणति आज तक देखी नहीं।
मोह की तो मोहिनी खिलती नहीं॥
रागिनी मिथ्यात्व की सुखमय सदा।
पुण्य भावों से कभी जलती नहीं॥
ज्ञान की जो ज्योति है शिव सौख्यमय।
यह विभावी भाव से जलती नहीं॥
इसलिए निज आत्मा को ध्याइये।
भेद ज्ञान प्रकाश बिन मिलती नहीं॥
स्वाद निज जब आत्मा का प्राप्त हो।
फिर कभी यह भूलकर हिलती नहीं॥
राग-द्वेषों की महक को बंद कर।
ज्ञान छाया में कभी फलती नहीं॥

मोह में जो हो रहे हैं मत्त जन।
ध्वज उन्हें सम्यक्त्व की मिलती नहीं॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्करार्धस्थित मानुषोत्तरजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

मानुषोत्तर पर्वत चार जिनालय पूजे हर्षित हो।
गज चिन्हांकित ध्वज आरोहण करके उर से पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

भजन

ये शाश्वत सुख का प्याला,
कोई पियेगा अनुभव वाला।
ध्रुव अखण्ड है, आनन्द कन्द है,
शुद्ध बुद्ध चैतन्य पिन्ड है॥
ध्रुव की फेरो माला॥ कोई॰ ॥
मंगलमय है मंगलकारी,
सत् चित् आनन्द का है धारी।
ध्रुव का हो उजियारा॥ कोई॰ ॥
ध्रुव का रस तो ज्ञानी पावे,
जन्म-मरण का दुःख मिटावे।
ध्रुव का धाम निराला॥ कोई॰ ॥
ध्रुव की धूनि मुनि रमावे,
ध्रुव के आनन्द में रम जावे।
ध्रुव का स्वाद निराला॥ कोई॰ ॥
ध्रुव की शरणा जो कोई जावे,
दुष्ट कर्म को मार भगावे।
ध्रुव का पंथ निराला॥ कोई॰ ॥
ध्रुव के रस में हम रम जावें,
अपूर्व अवसर कब यह पावें।
ध्रुव का हो मतवाला॥ कोई॰ ॥

पूजन क्रमांक-३५

नन्दीश्वर द्वीप स्थित बावन जिनालय समुच्चय पूजन

स्थापना

सोरठा

नन्दीश्वर जिनधाम, बावन जिनगृह पूजिये ।
अष्टम द्वीप महान, निज अंतर में थाप कर ॥

वीरछंद

अंजनगिरि सहस्त्र चौरासी योजन ऊँचे गोलाकार ।
दधिमुख पर्वत दस-सहस्त्र योजन ऊँचे हैं गोलाकार ॥
रतिकर श्रृंग एक-सहस्त्र योजन ऊँचे हैं गोलाकार ।
कृष्ण वर्ण अंजनगिरि दधिमुख श्वेतलाल रतिकर मनहार ॥
इतना ही विस्तार मूल में मध्य और ऊपर छविमान ।
सभी ढोलसम गोल मनोहर वन्दनीय अति सुन्दर जान ॥
अंजनगिरि के चार जिनालय दधिमुख सोलह हैं सुललाम ।
रतिकर हैं बत्तीस जिनालय विनय सहित नित करूँ प्रणाम ॥
इन सब पर अवतंस आदि देवों के द्वारा विनय महान ।
प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल होते हैं सदैव ही मंगल गान ॥
पांच-सहस्त्र अरु छहसौ सोलह जिनबिम्बों को करूँ प्रणाम ।
ध्रुव की धुन में मग्न रहूँ मैं पाऊँ शाश्वत निज ध्रुवधाम ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ द्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् । (इत्याह्वाननम् ।)

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ द्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । (इति स्थापनम् ।)

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ द्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । (इति सन्निधिकरणम् ।) (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छंद - सखी

सम्यक्त्व सुनीर चढ़ाऊँ, जन्मादिक व्यथा मिटाऊँ।
नन्दीश्वर बावन जिनगृह, पूजूँ पर से हो निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ द्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ज्ञान सुगंधित लाऊँ, संसार ज्वाल विनशाऊँ।
नन्दीश्वर बावन जिनगृह, पूजूँ पर से हो निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अति निर्मल अक्षत लाऊँ, अक्षय पद महिमा पाऊँ।
नन्दीश्वर बावन जिनगृह, पूजूँ पर से हो निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं....

चारित्र सुमन ले आऊँ, गुण महाशील ही पाऊँ।
नन्दीश्वर बावन जिनगृह, पूजूँ पर से हो निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं....

अनुभव नैवेद्य चढ़ाऊँ, मैं पूर्ण तृप्त हो जाऊँ।
नन्दीश्वर बावन जिनगृह, पूजूँ पर से हो निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं....

रत्नत्रय दीप सजाऊँ, अज्ञान तिमिर विनशाऊँ।
नन्दीश्वर बावन जिनगृह, पूजूँ पर से हो निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...

दशधर्म सुधूप सुवासित, मैं नित्य निरंजन निश्चित।
नन्दीश्वर बावन जिनगृह, पूजूँ पर से हो निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं....

समभावी सुफल चढ़ाऊँ, परिपूर्ण मोक्षसुख पाऊँ।
नन्दीश्वर बावन जिनगृह, पूजूँ पर से हो निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं....

वसु गुण युत अर्घ्य बनाऊँ। पदवी अनर्घ्य निज पाऊँ॥
नन्दीश्वर बावन जिनगृह। पूजूँ पर से हो निस्पृह॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

पूर्णार्घ्य

दोहा

नन्दीश्वर बावन भवन, सब द्वीपों में सार।
त्रिलोकाग्रपति को नमूँ, मन-वच-काय संवार॥
पूर्ण अर्घ्य का भाव ले, करूँ नाथ गुणगान।
निज महिमा उर जागृत, आज करूँ भगवान॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ द्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

जिन-ध्वनि सुनकर मैं करूँ, तत्त्वों का अभ्यास।
आत्म तत्त्व से प्रीत कर, पाऊँ मुक्ति निवास॥

छंद - मानव

तुव चरणों की पूजन कर मैं धन्य हुआ हे स्वामी।
तुव छवि में मैंने देखी अपनी छवि अतंर्यामी॥
यह वर्तमान मेरा प्रभु तुव भूतकाल है जाना।
तुव वर्तमान हो मेरा चाहूँ भविष्य बन जाना॥
जिस विधि से तुमने स्वामी कल्याणमार्ग निज साधा।
उस विधि से ही मैं साधूँ क्षय करके सारी बाधा॥
तत्त्वाभ्यास की बंशी ध्वनि प्रथम हृदय में गूँजे।
तत्त्वों के सम्यक् निर्णय की कोकिल उर में कूजे॥
चिर भेदज्ञान निधि पाऊँ सम्यक्त्व स्व-निधि प्रगटाऊँ।
चारित्र स्वरूपाचरणी युत सम्यग्ज्ञान सुपाऊँ॥

हो हृदय संयमासंयम फिर पूर्ण देश हो संयम।
मुनि अप्रमत्त बन जाऊँ श्रेणी चढ़ने में सक्षम॥
निर्मल चारित्र दशा पा मैं यथाख्यात उर लाऊँ।
मोहादि क्षीण कर स्वामी कैवल्यज्ञान उपजाऊँ॥
फिर एक समय में हे प्रभु ! लोकाग्र निवास करूँ मैं।
संसारोदधि की पीड़ा सर्वांश विनाश करूँ मैं॥
है विनय आपसे स्वामी मैं अल्पबुद्धि हूँ निर्बल।
थोड़ी सी दृढ़ श्रद्धा हो संवर दे दो संबल॥
मैं कर्म निर्जरा करके समकक्ष आपके आऊँ।
जब तक न मिले निज शिवपद नित गीत आपके गाऊँ॥

छंद - पूर्णिमा

कौतुहल से ही मरकर भी निज से परिचय कर लूँ मैं।
मात्र एक अन्तर्मुहूर्त में कर्म बंध सब हर लूँ मैं॥
फिर मैं भेदज्ञान कर लूँगा, स्व-पर विवेक भान करलूँगा।
धीरे-धीरे मुक्ति मार्ग पर अपने द्वय पग धर लूँ मैं॥ कौतूहल. ॥
संयम की आभा चमकेगी, शुद्ध आत्मा ही दमकेगी।
ज्ञानगगन के ऊपर चढ़कर आत्म मनन निज कर लूँ मैं॥ कौतूहल. ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ द्विपंचाशज्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - त्रिभंगी

नन्दीश्वर बावन मन्दिर भवविभ्रम हर सुखदायी।
है जग में भारी शोभा न्यारी चहुँगति हारी मन भाई॥
यह द्वीप सु अष्टम है उज्ज्वलतम अरु सर्वोत्तम शिवदायी।
मैं जिनवर वन्दूँ निज अभिनन्दूँ हर्षूं रहूँ न विषपायी॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक - ३६

नन्दीश्वर द्वीपस्थ पूर्व दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - रोला

अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर महिमामय है।
नन्दीश्वर वर जल समुद्र से घिरा वलय है॥
इकशत त्रेसठ कोटि लाख चौरासी योजन।
विस्तृत चहुँ दिशि पूरब पश्चिम उत्तर-दक्षिण॥
चारों दिशि के तेरह अनुपम भव्य जिनालय।
जिन प्रभु की महिमा से मंडित ज्यों सिद्धालय॥
अष्टान्हिका पर्व में पूजन करते सुरगण।
शक्तिहीन हम यहीं भाव से करते पूजन॥
नन्दीश्वर जिन-भवन राज आनंद ईश्वर।
पूर्व दिशा के वन्दूँ विनय सहित जगदीश्वर॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्वाननम्।)

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनम्।)

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। इति सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

छंद - राधिका

रत्नत्रय जल से निज अभिषेक रचाऊँ।
चैतन्य चंद्रिका आज हृदय में लाऊँ॥
नन्दीश्वर पूरब दिशा जिनालय ध्याऊँ।
अंजनगिरि दधिमुख रतिकर शीष झुकाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय चंदन शाश्वत सुख का दाता।
चैतन्य सूर्य निज अंतर में मुस्काता॥
नन्दीश्वर पूरब दिशा जिनालय ध्याऊँ।
अंजनगिरि दधिमुख रतिकर शीष झुकाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय अक्षत पुंज चढ़ाऊँ स्वामी।
भवसागर यह सम्पूर्ण सुखाऊँ स्वामी॥ नन्दीश्वर॰ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय पुष्प सुगन्ध हृदय को भायी।
निष्काम भावना ही प्रतिक्षण मुस्कायी॥ नन्दीश्वर॰ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाण विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय चरु परिपूर्ण तृप्ति सुखदाता।
है क्षुधा व्याधिनाशक शिव सौख्य प्रदाता॥ नन्दीश्वर॰ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय दीप प्रकाश मुझे प्रभु भाया।
मिथ्यात्व तिमिर मैंने पूरा विघटाया॥ नन्दीश्वर॰ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय धूप सुगंध हृदय में प्रगटी।
कर्मों की सारी शक्ति क्षण में विघटी॥ नन्दीश्वर॰ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय फल जाना मैंने शिवसुखमय।
है महामोक्षफल ध्रुव त्रिकाल मंगलमय॥ नन्दीश्वर.॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय अर्घ्य अपूर्व महान सजाऊँ।
पा पद अनर्घ्य फिर लौट न भव में आऊँ॥ नन्दीश्वर.॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

छंद - विष्णुपद ऑचलीबद्ध गोपी

द्वीप नन्दीश्वर हो आऊँ।
जा न सकूँ तो यहीं भावना जाने की भाऊँ॥
मन वच काया से वन्दन कर निज-आलय पाऊँ।
पूर्व दिशा अंजनगिरि पर जिन-चैत्यालय ध्याऊँ॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्-अंजनगिरिजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि.।

अंजनगिरि की चार दिशा में चार वापिकाएँ।
एक लाख योजन जलपूरित द्रह सम दर्शाएँ॥
पूरब नंदा वापी दधिमुख पर्वत गृह ध्याऊँ।
जिन-दर्शन से निज-दर्शन कर प्रभु निज-घर आऊँ॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदावापिकामध्य दधिमुखपर्वतस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदा वापी की ईशान दिशा में रतिकर है।
उस पर शाश्वत जिन चैत्यालय अति ही मनहर है॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदावापी-ईशानकोणे रतिकरपर्वतस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदा वापी आग्नेय दिशि में रतिकर है।
भाव सहित मैं पूजूँ जिनगृह जो अति सुन्दर है॥ ४॥

ॅं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदावापी-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वतस्थितजिनालयजिन-र्पामीति स्वाहा।

दक्षिण नंदवती वापी में दधिमुख गृह ध्याऊँ।
श्री जिनवर की पूजन करके अब निज घर आऊँ ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदवतीवापिकामध्यस्थितदधिमुखपर्वतजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि कोण में नंदवती वापी के रतिकर है।
त्रिभुवन पूज्य जिनालय शाश्वत पावन सुखकर है ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदवतीवापी-आग्नेयकोणेरतिकरपर्वतस्थितजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी नंदवती नैऋत्य दिशा में है रतिकर।
पर्वत पर जिनगृह में जिन प्रतिमाएँ हैं सुखकर ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदवतीवापी-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदोत्तरा सुवापी पश्चिम है दधिमुख पर्वत।
रत्नमयी बिम्बो से शोभित है जिनगृह शाश्वत ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदोत्तरावापिकामध्यदधिमुखपर्वतस्थितजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम नंदोत्तरा वापि नैऋत्य कोण रतिकर।
जिनमंदिर की पूजन कर लूँ भव भावना भर ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदोत्तरावापिकानैऋत्यकोणे रतिकर पर्वतस्थितजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी नंदोत्तरा सुपश्चिम की वायव्य दिशा।
रतिकर जिन-मन्दिर पूजन कर नाशूँ मोह-निशा ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदोत्तरावापिकावायव्यकोणेरतिकरपर्वतस्थितजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर में वापिका नंदिघोषा में दधिमुख है।
जिन-प्रभु की पूजन से मिलता स्वर्ग-मोक्षसुख है ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नन्दीघोषावापिकामध्य दधिमुखपर्वतस्थितजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदीघोषा रतिकर गिरि वायव्य कोण में एक।
एक अकृत्रिम जिन चैत्यालय पूजूँ मस्तक टेक ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदिघोषावापी-वायव्यकोणे रतिकरपर्वतस्थितजिनालयजिन-बिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी नंदीघोषा की ईशान कोण सुप्रसिद्ध।
रतिकर पर्वत पर जिन-चैत्यालय इक जगत प्रसिद्ध ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे नंदिघोषावापी-ईशानकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

कुण्डलिया

नन्दीश्वर पूरब दिशा, दिव्य त्रयोदश जान।
पूर्ण अर्घ्य अर्पण करूँ, निज में करूँ विराम ॥
निज में करूँ विराम भावना भाऊँ पावन।
निज स्वभाव ही निरखूँ परखूँ अति मनभावन ॥
त्रिभुवन पति त्रैलोक्यनाथ अवनीपति ईश्वर।
विनय सहित मैं पूजूँ पूर्व दिशा नन्दीश्वर ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदिक्-त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

नन्दीश्वर जिनगृह भजूँ, करूँ तत्त्व का ज्ञान।
अष्ट ऋद्धियाँ जानकर, करूँ आत्म कल्याण ॥

वीरछंद

अष्ट ऋद्धियाँ निश्चय तप से सहज प्राप्त होतीं अविलम्ब।
इनके चौसठ भेद जानकर निज स्वभाव का लूँ अवलम्ब ॥
बुद्धि ऋद्धि के भेद अठारह, ऋद्धि विक्रिया एकादश।
चारण ऋद्धि भेद नव जानूँ तपोऋद्धि के सात स्ववश ॥

बल सुऋद्धि के तीन भेद हैं, औषधि ऋद्धिभेद हैं आठ।
छहरस ऋद्धि भेद को जानूँ क्षेत्र ऋद्धिद्वय भेद विराट॥
केवलज्ञान बुद्धि ऋद्धि केवलज्ञानी को होती है।
त्रेसठ ऋद्धि एक या दो सब ऋषि को तप से होती है॥
जिन्हें ऋद्धि का लोभ उन्हें कोई भी ऋद्धि न होती सिद्ध।
मुक्ति पंथ के पथिक नहीं वे परभावों से रहते बिद्ध॥
ऋद्धि सिद्धि का लोभ न हे प्रभु ! अंतरंग में हो उत्पन्न।
आत्मसिद्धि का ही प्रयत्न हो यही अनंत ऋद्धि सम्पन्न॥

मंदाक्रान्ता

अपना आत्मस्वरूप निर्मल आनंद का धाम है।
पूर्ण अनंतानंत शक्ति युत संपूर्ण निष्काम है॥
सब तत्त्वों से श्रेष्ठ तत्त्व निज सर्वोच्च अभिराम है।
वन्दन के हैं योग्य सर्वदा सद्धर्म का धाम है॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपसंबंधि पूर्वदिक्-त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

नन्दीश्वर पूरब दिशि के जिन-मंदिर पूजे हर्षित हो।
चकवा-चकवी ध्वज आरोहण करता स्वामी पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक - ३७

नंदीश्वर द्वीपस्थ दक्षिण दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - मत्त-सवैया

मनुज लोक से नंदीश्वर या आगे गमन सदैव असंभव।
नंदीश्वर जिन-भवन हृदय में करूँ विराजित यह संभव॥
भक्तिभाव से अष्ट द्रव्य ले मैं पूजूँ आनंद ईश्वर।
दक्षिण दिशा त्रयोदश जिनगृह के वन्दूँ जिनदेव दधीश्वर॥
चंपम आम्र अशोक सप्तछद चारों वन में चार वापिका।
एक लाख योजन जल पूरित तट पर गाती गीत सारिका॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट। (इत्याह्वाननम्।)

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनम्।)

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। इति सन्निधिकरणम्। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छंद - दोहा आँचलीबद्ध उल्लाला

प्राणी क्षीरोदधि जल लाइये, श्री जिन-चरण चढ़ाय।
जन्म-मरण दुख नाशिये, भवदुख क्षय हो जाय॥
नन्दीश्वर जिन पूजिये॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो-जन्म-जरा-मत्यु- विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी पुष्कर चंदन लाइये श्री जिन-चरण चढ़ाय।
संसारताप नाशिये भव ज्वर क्षय हो जाय॥ नंदीश्वर.॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी अक्षत शालि सुपुंज ले श्री जिन-चरण चढ़ाय।
अक्षयपद प्रगटाइये भवदुःख क्षय हो जाय॥
नन्दीश्वरजिन पूजिये॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी नंदनवन के पुष्प ले श्री जिन-चरण चढ़ाय।
काम शूल विनशाइये भवदुःख क्षय हो जाय॥ नंदीश्वर॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामवाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी अनुभवरस नैवेद्य ले श्री जिन-चरण चढ़ाय।
रोगक्षुधा विनशाइये भवदुःख क्षय हो जाय॥ नंदीश्वर॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी दीपक ज्योति स्वज्ञान की श्रीजिन-चरण चढ़ाय।
मोह प्रकृति सब नाशिये भवदुःख क्षय हो जाय॥ नंदीश्वर॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी धूपदशांगी धर्ममय श्रीजिन-चरण चढ़ाय।
अष्टकर्म घन नाशिये भवदुःख क्षय हो जाय॥ नंदीश्वर॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी कल्पद्रुम फल लाइये श्रीजिन-चरण चढ़ाय।
मोक्ष सुफल अब पाइये भवदुःख क्षय हो जाय॥ नंदीश्वर॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी अर्घ्य सु वसु विधि लाइये श्रीजिन-चरण चढ़ाय।
स्वपद अनर्घ्य सुपाइये भवदुःख क्षय हो जाय॥ नंदीश्वर॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

लिए हुए वसु द्रव्य ज्ञानमय विनय भाव लेकर सुखकार।
नंदीश्वर जिनगृह पूजन से क्षय हो जायें सकल विकार॥
निर्मल आत्म स्वरूप जानकर उत्कंठित अन्तर्पट खोल।
जिनमंदिर पर ध्वजा चढ़ाएँ वीतराग प्रभु की जय बोल॥

अर्घ्यावलि

दोहा

नंदीश्वर दक्षिण दिशा, अंजनगिरिजिनधाम।
वन्दन कर पाऊँ प्रभो, निजपुर में विश्राम॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अंजनगिरिजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि के पूर्व में, अरजा वापी मध्य।
दधिमुख पर्वत के शिखर, पूजूँ जिनगृह भव्य॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अरजावापिकामध्यदधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरजा वापी सलिल का, कोण एक ईशान।
रतिकर पर्वत प्रथम पर, जिन-मंदिर छविमान॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अरजावापिका-ईशानकोणे रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरजा वापी जानिये, आग्नेय दिशि एक।
दूजा रतिकर पूजिये, जिन-मन्दिर सविवेक॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अरजावापिका-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि दक्षिण दिशा, विरजा वापी मध्य।
दधिमुख पर्वत पूजिये, जिनगृहशोभित भव्य॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि विरजावापिकामध्य दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विरजा वापी की सलिल, आग्नेय दिशि कोण।
रतिकर पहिला पूजिये, भव्य जिनेश्वर भोन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि विरजावापी-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विरजा के नैऋत्य में, रतिकर द्वितिय विशाल।
श्री जिन-भवन सुपूजिये, सदा झुका निज भाल ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि विरजावापिका-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि पश्चिम दिशा, वापि अशोका मध्य।
दधिमुख पर्वत शिखर पर, सिद्धायतन सुदिव्य ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अशोकावापिकामध्य दधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है नैऋत्य सु कोण में, वापि अशोका दिव्य।
विनय भाव से पूजिये, जिनगृह रतिकर मध्य ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अशोकवापिका-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इसी अशोका वापि के, हैं वायव्य सुकोण।
दूजा रतिकर जिन-भवन, पूजूँ होकर मौन ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अशोकवापिका-वायव्यकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि उत्तर दिशा, दधिमुख पर्वत शीष।
मध्य वीतशोका अमल, पूजूँ त्रिभुवन ईश ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अंजनगिरि-उत्तरदिक्-अशोकवापिकामध्य दधिमुखपर्वतस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापि वीतशोका सलिल, है वायव्य सुकोण।
पहिला रतिकर जिनभवन, नमूँ जिनेश्वर भौन ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे दक्षिणदिशि अशोकवापिका-वायव्यकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीतशोक ईशान में, रतिकर द्वितीय महान।
जिन-चैत्यालय पूजकर, करूँ स्वयं का ध्यान ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरदीपे दक्षिणदिशि वीतशोकावापिका-ईशानकोणे रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद - छप्पय

तीन शल्य अरु आठ मद शंकादिक वसु दोष।
त्यागूँ छहों अनायतन पाऊँ समकित कोष॥
पाऊँ समकित कोष सर्व मिथ्यात्व तिमिर हर।
सम्यग्ज्ञान प्रकाश पूर्णतः निज उर में भर॥
हो सम्यक् चारित्र विवेकी साम्य भाव मय।
ज्ञानामृत रस पियूँ विभावी भाव करूँ क्षय॥

दोहकीय

नन्दीश्वर दक्षिण दिशा नमूँ त्रयोदश गेह मैं।
पूर्ण अर्घ्य अर्पित करूँ पाऊँ निजरस मेह मैं॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपसंबंधि दक्षिणदिक्-त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद - चतुष्पद

यह मोह आवरण घोर निशा का हे प्रभु अब विघटाया।
पलक झपकते ही प्रभु ! मैंने सम्यग्दर्शन पाया॥
अब न विपन्न रहूँगा मैं प्रभु यह निश्चय उर लाया।
ज्ञान समुद्र उछलता निज में शिव-सुखमय दरसाया॥

वीरछंद

शुद्ध आत्मरूपी अनुभव गुण से संयुक्त बना दो नाथ।
स्वानुभूति गंगा जलधारा मुझको ह्रवन करा दो नाथ॥
दर्शन ज्ञान चरित्र वीर्य तप मय आचार सदा पालूँ।
पंचम भाव पारिणामिक की भव्य भावना अपना लूँ॥
मलिन तरंगे बंध अवस्था की न एक उर में आएँ।
मुक्ति अवस्था की तरंग ही निज उर अंतर में छाएँ॥
क्रिया-देह तज पुण्य-पाप के कारण का भी करूँ विनाश।
मोक्षमार्ग पर बढ़ूँ निरन्तर करूँ मुक्ति में सदा निवास॥

पंच महाव्रत धारूँ पूरे चिर प्रमाद का करूँ अभाव।
चार कषाय सर्व क्षय करके पाऊँ केवल ज्ञानस्वभाव॥
सर्वक्लेश का व्यामूल मोह अज्ञानदृष्टि तज कर स्वामी।
द्रव्यदृष्टि कर तज दूँ मैं पर्याय दृष्टि अंतर्यामी॥
नग्न भाव अरु मुंडभाव हो द्रव्य लिंग हो भावसहित।
छठे सातवें झूल झूलकर होऊँ सकल प्रमाद रहित॥
लौकिक ऋद्धि सिद्धि से बचकर आत्मसिद्धि का करूँ प्रयत्न।
एक मात्र निर्मल पर्याय प्रकट करने का पूरा यत्न॥
लोकोत्तर पथ पर आ जाऊँ साधक दशा पवित्र बने।
परम अलौकिक सौख्य प्राप्ति हित देखूँ निज के चित्र घने॥
निश्चय ध्यान करूँ सदैव ही इच्छाओं का करूँ अभाव।
मोक्ष प्राप्ति की इच्छा तक का क्षय कर पाऊँ शुद्ध स्वभाव॥
समवशरण सम श्री जिनमंदिर वन्दनीय हैं भव्य त्रिकाल।
ज्ञानार्जन का यह साधन है मिथ्या-भ्रम हरता तत्काल॥
समवशरण ही कल्पद्रुम है मंगलमयी मुक्ति का द्वार।
समवशरण की शरण प्राप्त कर हो जाते सब भव के पार॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपसम्बन्धि दक्षिणदिक्-त्रयोदशजिनालय-जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

नन्दीश्वर की दक्षिण दिशि के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
चकवा-चकवी चिन्ह विभूषित ध्वजाचढ़ाएँ पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधि-लाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक-३८

नन्दीश्वर द्वीप की पश्चिम दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन

स्थापना

वीरछंद

नंदीश्वर पश्चिम दिशि जिनगृह हैं आनन्द ईश्वर धाम।
कृष्ण वर्ण अंजनगिरिदधिमुख श्वेतवर्ण सुन्दर अभिराम॥
लाल वर्ण रतिकर गिरि पूजूँ सभी ढोलसम गोल ललाम।
इनके सकल त्रयोदश जिनगृह बार-बार मैं करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्वाननम्)

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनम्)

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (सन्निधिकरणम्)

छंद - द्रुतविलंबित

विमल ज्ञानामृत जल निर्मलम्। जनम-मृत्यु-जरा त्रयक्षय करम्॥
जयति पश्चिम दिशि नंदीश्वरम्। जयति जिन-मंदिर जगदीश्वरम्॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल भाव सुगंधित चंदनम्। दुखद भव आताप निकंदनम्॥
जयति पश्चिम दिशि नंदीश्वरम्। जयति जिन-मंदिर जगदीश्वरम्॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

विमल अक्षत गुणसुखदायकम्। सहज अक्षय स्वपद प्रदायकम्॥
जयति पश्चिम दिशि नंदीश्वरम्। जयति जिन-मंदिर जगदीश्वरम्॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

परमशील महा सुखदायकम्। कुनय काम कलंक विनाशनम्।
जयति पश्चिम दिशि नंदीश्वरम्। जयति जिन-मंदिर जगदीश्वरम्॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज ज्ञानामृत नैवेद्यकम्। सकल रोग क्षुधा हर दिव्यतमम्।
जयति पश्चिम दिशि नंदीश्वरम्। जयति जिन-मंदिर जगदीश्वरम्॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्व-पर ज्ञान प्रकाशक दीपकम्। सकल मोह महातम नाशकम्।
जयति पश्चिम दिशि नंदीश्वरम्। जयति जिन-मंदिर जगदीश्वरम्॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज धूप ध्यानमय ले परम्। त्रिविध कर्म-काष्ठ वसु क्षयकरम्।
जयति पश्चिम दिशि नंदीश्वरम्। जयति जिन-मंदिर जगदीश्वरम्॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस ज्ञान अतीन्द्रिय फल परम्। स्वफल मोक्ष महा-अभ्यंकरम्।
जयति पश्चिम दिशि नंदीश्वरम्। जयति जिन-मंदिर जगदीश्वरम्॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वगुण निर्मल अर्घ्य परमशिवम्। पद अनर्घ्य अमर अविनश्वरम्।
जयति पश्चिम दिशि नंदीश्वरम्। जयति जिन-मंदिर जगदीश्वरम्॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावलि

वीरछंद

चौरासी सहस्त्र योजन ऊँचा अंजनगिरि कृष्ण ललाम।
एक शतक वसु जिन-प्रतिमायुत चैत्यालय पर ध्वज अभिराम॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अंजनगिरि-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजया वापी दधिमुख पर्वत दधिसम श्वेत श्रेष्ठ मनहार।
दस सहस्र योजन ऊँचा है ध्वजा चढ़ाऊँ मंगलकार॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अंजनगिरि-विजयावापीमध्य दधिमुखपर्वत स्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजया वापी के ईशान कोण में रतिकर पर्वत लाल।
एक सहस्र योजन ऊँचा है ध्वजा चढ़ाऊँ में सुविशाल॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि विजयावापी-ईशानकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजया वापी आग्नेय दिशि रतिकर पर्वत द्वितिय महान।
इसके जिन मंदिर पर पावन ध्वजा चढ़ाऊँ मैं छविमान॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे पश्चिमदिक्-विजयावापी-आग्नेयकोणे रतिकर पर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि के दक्षिण वापी सजल वैजयंती शुभ नाम।
दधिमुख पर्वत मध्य निराला ध्वज शोभित वन्दूँ जिनधाम॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि-अंजनगिरि-दक्षिणवैजयंतीवापी दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापि वैजयंती आग्नेय दिशा में है रतिकर पर्वत।
जिनगृह पर नव ध्वजा चढ़ाते इन्द्रादिक सुर होते नत॥ ६॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि वैजयंती-वापिका-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वत स्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापि वैजयंती नैऋत्य कोण में दूजा रतिकर गेह।
इन्द्रादिक सुर महापर्व में ध्वजा चढ़ाते उर धर नेह॥ ७॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि वैजयंतीवापिका-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव्य जयंती वापी अंजनगिरि के पश्चिम में उत्तम।
दधिमुख पर्वत पर जिन-मंदिर ध्वजा चढ़ाएँ हर विभ्रम॥ ८॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अंजनगिरि-पश्चिमजयंतीवापिकामध्य दधिमुख पर्वतस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी सजल जयंती के वायव्य कोण में नग रतिकर।
दिव्य अकृत्रिम जिन-चैत्यालय ध्वजा चढ़ाऊँ भव भय हर ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि जयंतीवापिका-वायव्यकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी सलिल जयंती के नैऋत्य कोण रतिकर है एक।
शाश्वत जिन-चैत्यालय पर ध्वज आरोहण करता सविवेक ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि जयंतीवापिका-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत स्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि उत्तर में वापी अपराजिता महान प्रसिद्ध।
इसके दधिमुख पर्वत पर मैं ध्वजा चढ़ाऊँ भाव विशुद्ध ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अंजनगिरि-उत्तरादिक्-अपराजितावापिका मध्यदधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी अपराजिता दिशा वायव्य कोण में रतिकर लाल।
लहर-लहर ध्वज लहराती है जिन-मन्दिर पर भव्य विशाल ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अपराजितावापिका-वायव्यकोणे रतिकरपर्वत स्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपराजिता सुवापी की ईशान दिशा में रतिकर दिव्य।
अर्चनीय जिन मन्दिर पूजूँ ध्वजा चढ़ाऊँ सुन्दर भव्य ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पश्चिमदिशि अपराजिता-वापिका-ईशानकोणे रतिकरपर्वत-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

चौपाई

अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर। पश्चिम दिशि मंदिर अवनीश्वर ॥
अंजनगिरिदधिमुख गिरि रतिकर। पूर्ण अर्घ्य ले पूजूँ तत्पर ॥
निज चैतन्य सुधाकर पाऊँ। अनुभव रस की महिमा लाऊँ ॥
कर्म चेतना पर जय पाऊँ। ज्ञान चेतना में रम जाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपसंबंधि पश्चिमदिक्-त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद-ताटंक

रंगबिरंगे परिधानों को पहिने पर-परिणति भाती।
शुद्ध ज्ञान परिधान पहिन कर हर्षित निज परिणति आती॥
रंगबिरंगे राग-द्वेष के परिणामों में विविध विकल्प।
ज्ञानमात्र के परिधानों में एक आत्मा ही अविकल्प॥
जल्प विजल्प विकल्प बंधमय निर्विकल्प ही पूर्ण अबंध।
पर-भावों से पर-द्रव्यों से निज का लेश नहीं संबंध॥
स्वर्गादिक नक्षत्रों जैसी आभा क्षीण देह नश्वर।
इसकी चमक दमक में फँसकर भूला निज स्वभाव सुखकर॥
चारों गति से पूर्ण विलक्षण पंचम गति शिवसुखदाता।
अष्टम धरा प्राग्भार ही सिद्ध शिला सुख निर्माता॥
निर्मलता उत्पन्न न होती है पर्याय धर्म विरहित।
ध्रुव स्वभाव की दृष्टि बनाती है जीवों को कर्म रहित॥
राग-द्वेष के सर्व विकल्पों की छाया जब उड़ जाती।
अविकल्पी शुद्धात्म तत्त्व की ओर दृष्टि जब मुड़ जाती॥
निज-परिणति की बाँकी छवि लख पर-परिणति जब कुढ़ जाती।
सिद्ध वधू के आँचल से चेतन की महिमा जुड़ जाती॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपसंबंधि पश्चिमदिक्-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

नंदीश्वर की पश्चिम दिशि के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
चकवा-चकवी चिन्ह विभूषित ध्वजा चढ़ाएँ पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधि-लाभ हो सुगति-गमन हो, जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पूजन क्रमांक-३९

नन्दीश्वर द्वीप की उत्तर दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन

स्थापना

छंद - सवैया तेईसा

चलूँ जिन मंदिर भाव सहित आतम अवलोकन हेतु प्रतिदिन ।
श्री जिनवर के दर्शन करके नित्य लगाऊँ तीन प्रदक्षिण ॥
ध्यान धरूँ शुद्धातम का नित तत्त्व स्वरूप विचारूँ क्षण-क्षण ।
करूँ जिन-दर्शन से निज-दर्शन, हे प्रभु पाऊँ सम्यग्दर्शन ॥

सोरठा

अष्टम द्वीप महान, उत्तर दिशि नन्दीश्वरम् ।
श्रेष्ठ त्रयोदश धाम, पूजूँ नित जिन-मंदिरम् ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् । (इत्याह्वाननम्)

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । (इति स्थापनम्)

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपस्थ उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । (सन्निधिकरणम्) (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

छंद - मानव

सुर-सरि का नीर चढ़ाऊँ नयनाभिराम अभिरामी ।
शुद्धात्म भावना भाऊँ प्रतिक्रमण करूँ नित स्वामी ॥
नंदीश्वर उत्तरदिशि के पूजूँ जिनगेह अकीर्तम ।
सर्वज्ञ दशा प्रगटाऊँ क्षय करके मोह प्रबलतम ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मलयागिरि चंदन लाऊँ शुचिमय सुगंध युत नामी ।
शुद्धात्म भावना भाऊँ सामायिकमय अविरामी ॥ नंदीश्वर. ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

उज्ज्वल अखंड अक्षत से अक्षयपद हो शिव नामी ।
शुद्धात्म भावना भाऊँ प्रायश्चित करूँ अकामी ॥ नंदीश्वर. ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षय पदप्राप्तय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुर-तरु के सुमन चढ़ाऊँ बन जाऊँ मैं निष्कामी ।
शुद्धात्म भावना भाऊँ अतिक्रमण न हो दुखधामी ॥ नंदीश्वर. ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

कल्पद्रुम सुचरु चढ़ाऊँ पाऊँ स्वतृप्ति गुणधामी ।
शुद्धात्म भावना भाऊँ हो साम्यभाव अभिरामी ॥ नंदीश्वर. ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानात्मक ज्योति जगाऊँ पाऊँ निज निधि विश्रामी ।
शुद्धात्म भावना भाऊँ कैवल्यज्ञान हो स्वामी ॥ नंदीश्वर. ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ ध्यान सुधूप जलाऊँ वसु कर्मदग्ध कर स्वामी ।
शुद्धात्म भावना भाऊँ हो सिद्ध स्वपद जगनामी ॥ नंदीश्वर. ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वार्थ सिद्धि फल पाऊँ शिवसुख स्वरूप ध्रुवधामी ।
शुद्धात्म भावना भाऊँ त्रैलोक्य पूज्य हो स्वामी ॥ नंदीश्वर. ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्वोत्तम अर्घ्य बनाऊँ लूँ पद अनर्घ्य सुखधामी ।
शुद्धात्म भावना भाऊँ ध्रुवधामी पूर्ण विरामी ॥ नंदीश्वर. ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशायां त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अर्घ्यावलि

छंद - मत्तमातंग/लीलाकरण

ज्ञानमंदाकिनी आत्मसौदामिनी भावना भावमयी भाइये सहज।
विविध राग रागिनी ज्ञान से उदासिनी वासना भोगमयी त्यागिये सहज॥
छोड़ भव-कामना करो धर्म-साधना द्वीप नन्दीश्वर जाइये सहज।
भव्य जिनमंदिरों में वीतराग धर्म की ध्वज अनेकान्त लहराइये सहज॥

सोरठा

अंजनगिरि है एक, दधिमुख चार प्रसिद्ध है।
रतिकर पर्वत आठ, ये तेरह जिन-धाम हैं॥

दोहा

नंदीश्वर उत्तर दिशा, अष्टम द्वीप महान।
जिनगृह पूजूँ शाश्वत, अंजनगिरि छविमान॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि पूरब दिशा, रम्यावापी मध्य।
पूजूँ श्री जिनवचन को, दधिमुख पर्वत भव्य॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनागिरिपूर्वरम्यावापीमध्य दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजिकर है ईशान में, रम्यावापी कोण।
भक्ति सहित नित पूजिये जिनमंदिर हो मौन॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रम्यावापी-ईशानकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आग्नेय रतिकर द्वितिय, रम्या वापी भव्य।
अष्टकर्म के नाशहित, जिनगृह पूजूँ दिव्य॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रम्यावापी-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वत जिनालयजिन बिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि दक्षिण दिशा, रमणीया है नाम।
राग नाश हित पूजिये, दधिमुख श्वेत ललाम॥ ५॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनगिरीदक्षिणदिकरमणीयावापिका दधिमुख पर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रतिकर सुन्दर जानिये, रमणीया आग्नेय।
पूजूँ तत्त्व विचार कर, श्री जिन-धाम अभेय ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशिरमणीयावापिका-आग्नेयकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रतिकर जिनगृह वंदिये, रमणीया नैऋत्य।
समकित निधि को प्राप्त कर, हो संवर का नृत्य ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि रमणीयावापिका-नैऋत्यकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छंद - गीतिका

वापिका सुप्रभा पश्चिम दिशा अंजनगिरि कही।
बीच दधिमुख तुंग श्री जिन-भवन की महिमा सही ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनगिरिपश्चिमदिक्-सुप्रभाविकामध्यदधिमुख पर्वतस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापिका सुप्रभा के नैऋत्य में रतिकर प्रथम।
हृदय से वंदन करूँ मैं जिनालय पावन परम ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सुप्रभावापिकानैऋत्यकोणे रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुप्रभा के कोण में वायव्य दिशि जिन-मंदिरम्।
नाम रतिकर सुगिरि सुन्दर चैत्य-जिन पावन परम् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सुप्रभावापिकावायव्यकोणे रतिकरपर्वत स्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापिका सर्वतोभद्रा दिशा उत्तर अंजनम्।
बीच दधिमुख श्वेत पर्वत पर नमूँ जिन-मन्दिरम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि अंजनगिरि-उत्तरदिक्-सर्वतोभद्रावापिका मध्यदधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापिका सर्वतोभद्रा कोण दिशि वायव्य का।
अचल रतिकर पूज लूँ मैं अर्घ्य ले वसु-द्रव्य का ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सर्वतोभद्रावापिकावायव्यकोणे रतिकरपर्वत स्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापिका सर्वतोभद्रा है दिशा ईशान के।
गीत रतिकर गूँजते हैं जय जिनेन्द्र महान के॥
विश्व में जय घोष गूँजे वीतराग प्रधान का।
दे रहा सन्देश जिन ध्वज स्याद्वाद महान का॥ १३॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिशि सर्वतोभद्रावापिका-ईशानकोणे रतिकरपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद - सोरठा

भव्य त्रयोदश जान, नन्दीश्वर उत्तर दिशा।
तजूँ सकल अज्ञान, पूर्ण अर्घ्य अर्पित करूँ॥
ज्ञान जाति कुल ऋद्धि तप, पूजा ऐश्वर्य बल।
पाऊँ निज सौन्दर्य, आठों मद का नाश कर॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिक्-त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

मत्त सवैया

कृत पापों का प्रतिक्रमण करूँ प्रभु, नित्य तस्य मिच्छामि दुक्खणं।
विनयभाव से करता हूँ प्रभु नित्य तस्य मिच्छामि दुक्खणं॥
हैं जीव लाख चौरासि योनि इनकी विराधना जो की हो।
कुल इक शत साढे निन्यानव लख, कोटि विराधना जो की हो॥
मिथ्यात्व पाँच अविरति बारह पच्चीस कषाय योग पन्द्रह।
इन सत्तावन आस्रव द्वारा जो पाप किए मैंने संग्रह॥
त्रय दंड शल्यत्रय गर्व तीन द्वारा जो पाप कमाया हो।
नारी भोजन नृप चोर कथा करके जो दोष लगाया हो॥
चौ आर्तध्यान चौ रौद्र ध्यान करके जो पाप उपाया हो।
अन्याय अनाचारों द्वारा जितना भी अघ उपजाया हो॥
सातों भय सप्त व्यसन सेवन करके जो पाप कमाया हो।
व्रत अष्टमूल गुण में अतिचार लगा जो दोष उपाया हो॥
पाँचों मिथ्यात्व पाँच आस्रव करके जो पाप कमाया हो।
पाँचों थावर छट्ठे त्रस की कर विराधना अघ आया हो॥

बहिरंग परिग्रह दस प्रकार रखकर जो पाप कमाया हो।
अरु अंतरंग चौदह प्रकार करके जो अघ उपजाया हो॥
पच्चीस कषाय पंद्रह प्रमाद द्वारा जो पाप उपाया हो।
अतिचार पाँच कर अनजाने जाने जो पाप लगाया हो॥
परिणाम रौद्रमय दुश्चिंतन करके जो पाप लगाया हो।
चलते-फिरते सोते उठते-बैठते पाप जो आया हो॥
देखे-अनदेखे मार्ग विषय जो कुछ भी पाप लगाये हों।
सूक्ष्म बादर जिय त्रास वेदना छेदन से दुख पाये हों॥
यति मुनि आर्यिका सर्व श्रावक-श्राविका अगर निन्दा की हो।
या देव धर्म गुरु की अविनय कृतकारित आदिक से की हो॥
पंचेन्द्रिय छठवें मन से जो जाने-अनजाने पाप किये।
सामायिक के बत्तीस दोष इनको कर जो भी पाल लिए॥
निर्दोष भाव से करता हूँ प्रभु नित्य तस्य मिच्छामि दुक्खणं।
कृत पापों का प्रतिक्रमण करूँ प्रभु, नित्य तस्य मिच्छामि दुक्खणं॥

दोहा

नहीं किसी के साथ भी, राग-द्वेष का भाव।
माया मान न लोभ हो, क्षमा भाव सम भाव॥
मिले समाधि मरण प्रभो, चहुँगति दुक्ख अभाव।
प्रतिक्रमण फल यह मिले, पाऊँ शुद्ध स्वभाव॥
सर्व कर्म मल नाश हो, बोधिलाभ हो नाथ।
भूल चूक सब क्षमा कर, थामों मेरा हाथ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरदिक् त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

नंदीश्वर की उत्तर दिशि के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
चकवा-चकवी के चिन्ह विभूषित ध्वजा चढ़ाएँ पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पूजन क्रमांक-४०

कुन्डलवर द्वीपस्थ कुन्डलगिरि पर स्थित चार जिनालय पूजन

स्थापना

वीरछंद

एक खरब अरु चार अरब पच्चासी कोटि छहत्तर लाख।
है योजन विस्तार द्वीप कुन्डलवर का जिन आगम साख॥
एकादशम द्वीप कुन्डलवर मध्य श्रेष्ठ पर्वत कुन्डल।
इस पर चारों दिशि में चार जिनालय पूजूँ परम विमल॥
दूने कुन्डलवर समुद्र ने इसको घेरा है चहुँ ओर।
जो भी सिद्ध हुए हैं उन सबको वन्दन है भावविभोर॥
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर आओ मेरे हृदय मँझार।
रत्नत्रय के सिंहासन पर, तिष्ठो हे मेरे आधार॥

कुन्डलिया

कुन्डलवर के मध्य में, कुन्डलगिरि सुविशाल।
भाव-भक्ति से पूजकर, होऊँ नाथ निहाल॥
होऊँ नाथ निहाल शक्ति सैंतालिस पाऊँ।
संग अनंतानंत शक्ति निर्मल प्रगटाऊँ॥
ज्ञान-पयोनिधि पाऊँ स्वामी मन उज्ज्वल कर।
यदि सुर होऊँ भाव सहित जाऊँ कुन्डलवर॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलवरद्वीपस्थ कुन्डलगिरौ चतुर्दिग् जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्राननम्)

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलवरद्वीपस्थ कुन्डलगिरौ चतुर्दिग् जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनम्)

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलवरद्वीपस्थ कुन्डलगिरौ चतुर्दिग् जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (इति सन्निधिकरणम्)। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

छंद - दिगपाल

सम्यक्त्वनीर पावन परिपूर्ण शुद्ध लाऊँ।
मिथ्यात्व भाव क्षय कर निज आत्मा को ध्याऊँ॥
जिन-भवन द्वीप कुन्डल चारों सदा जजूँ मैं।
उर भेद-ज्ञान ले निज परमात्मा भजूँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं

सम्यक्त्वमयी चंदन ध्रुवधाममयी लाऊँ।
"द्रव्यानुसरि चरणं" निज आत्मा सजाऊँ॥ जिन.॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं

सम्यक्त्वी अक्षत अक्षय स्वरूप लाऊँ।
"चरणानुसारि द्रव्यं" निज आत्मतत्त्व भाऊँ॥ जिन.॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं

सम्यक्त्वमयी सुमनावलि भाव से चढ़ाऊँ।
"णोकम्म कम्मरहियो" शुद्धात्मा को ध्याऊँ॥ जिन.॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं

सम्यक्त्वमयी शाश्वत नैवेद्य सजा लाऊँ।
"झाणग्गि दड्ढकम्मे" निर्मल स्वभाव ध्याऊँ॥ जिन.॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं

सम्यक्त्वमयी दीपक की ज्योति जगमगाऊँ।
"णमिऊण परम सिद्धं" परमात्म स्वपद पाऊँ॥ जिन.॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं

सम्यक्त्वमयी शुचिमय ध्रुव धूप ही चढ़ाऊँ।
"गमणागमन विहाणं" सिद्धत्व शुद्ध पाऊँ॥ जिन.॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं

सम्यक्त्वमयी फल ले निज आत्मा जगाऊँ।
"एसो जिणोवदेशो" अपने हृदय सजाऊँ॥ जिन.॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं

सम्यक्त्वमयी अर्घ्यों के पुंज ही चढ़ाऊँ।
पैंतीस सोल छह पन द्वय चार एक ध्याऊँ ॥ जिन. ॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरिस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

अर्घ्यावलि

छंद - कुन्डल

कुन्डल गिरि पूर्व दिशा प्रभो आज जाऊँ।
स्वर्णमयी अकृत्रिम चैत्यालय ध्याऊँ ॥
अनेकान्त ध्वजा आज हर्षित चढ़ाऊँ।
भाव-द्रव्य संयम की आभा मैं पाऊँ ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरौपूर्वदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

कुन्डलगिरि दक्षिण जिनेन्द्र भवन ध्याऊँ।
दर्शन स्वभाव लख दृष्टा बन जाऊँ ॥
स्याद्वाद रंग रंगी ध्वजा मैं चढ़ाऊँ।
भाव-द्रव्य संयम की आभा मैं पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरौ दक्षिणदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

कुन्डलगिरि दिव्य दिशा पश्चिम में जाऊँ।
इक-शत-वसु बिम्बों को शीष मैं झुकाऊँ ॥
रत्नत्रय ध्वजा आज भाव से चढ़ाऊँ।
भाव-द्रव्य संयम की आभा मैं पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरौ पश्चिमदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

कुन्डलगिरि सरस दिशा उत्तर में जाऊँ।
मानस्तंभ युक्त जिनालय नित्य ध्याऊँ ॥
साम्यभाव चारित्र की ध्वजा चढ़ाऊँ।
भाव-द्रव्य संयम की आभा मैं पाऊँ ॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरौ उत्तरदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

पूर्णार्घ्य

छंद - कुन्डलिया

कुन्डलवर शुभ द्वीप के, कुन्डलगिरि पर चार।
भव्य जिनालय शाश्वत, वन्दूँ बारम्बार॥
वन्दूँ बारम्बार आत्मा को नित ध्याऊँ।
चार-शतक-बत्तीस बिम्ब पूर्णार्घ्य चढ़ाऊँ॥
वीतराग सर्वज्ञ भावना जागे उज्ज्वल।
ज्ञान मुकुट लूँ सजा, ध्यान के पहनूँ कुन्डल॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

छंद - प्रयाणगीत

मुक्तिमार्ग प्राप्त कर बढ़े चलो बढ़े चलो।
रुको न एक क्षण कभी चले चलो चले चलो॥
ये विकार मार्ग में बदल बदल के आएँगे।
भेष पुण्य का बना तुम्हें सदा रिझायेंगे॥
शत्रु जानकर इन्हें दले चलो दले चलो।
मुक्तिमार्ग प्राप्त कर बढ़े चलो बढ़े चलो॥
मोह-राग-द्वेष मिथ्यात्व विष समान है।
अनंत-नंत भाव-मरण की सदा ये खान है॥
भाव-मरण नाशहित सम्यक्त्व में पले चलो।
मुक्तिमार्ग प्राप्त कर बढ़े चलो बढ़े चलो॥
मोह भाव बारवें के आस-पास जाएगा।
बारवें के अंत में पूर्ण नाश पाएगा॥
पूर्ण यथाख्यात चारित्र संग ले चलो।
मुक्तिमार्ग प्राप्त कर बढ़े चलो बढ़े चलो॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्डलवरद्वीपस्थ कुन्डलगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

कुन्डलगिरि की चारों दिशि के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
चिन्ह मयूर विभूषित सुन्दर ध्वजा चढ़ाऊँ पुलकित हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

भजन

जीयरा----जीयरा-----जीयरा-------

जीवराज उड़ के जाओ सम्मेदशिखर में।
भाव सहित वन्दन करो, पार्श्व चरण में॥ टेक॥
आज सिद्धों से अपनी बात हो के रहेगी,
शुद्ध आतम से मुलाकात हो के रहेगी।
रंग रहित राग रहित भेद रहित जो,
मोह रहित लोभ रहित शुद्ध बुद्ध जो॥ १॥
ध्रुव अनुपम अचल गति जिनने पाई है,
सारी उपमाऐं जिनसे आज शरमाई हैं।
अनन्तज्ञान अनन्तसुख अनन्तवीर्य मय,
अनन्त सूक्ष्म नाम रहित अव्याबाधी हैं॥ २॥
अहो! शाश्वत सिद्धधाम तीर्थराज है,
यहां आकर प्रसन्न चैतन्यराज है।
शुरू करें आज यहां आत्म साधना,
चतुर्गति में हो कभी जन्म मरण ना॥ ३॥

पूजन क्रमांक-४१

रुचकवर द्वीपस्थ रुचकगिरि पर स्थित चार जिनालय पूजन

स्थापना

वीरछंद

त्रयोदशम है द्वीप रुचकवर मध्य रुचकगिरि वलयाकार।
स्वर्णमयी अति सुन्दर पर्वत चार दिशा जिन-मंदिर चार॥
सोलह खरब सतत्तर अरब बहत्तर कोटि सुसोलह लाख।
है योजन विस्तार द्वीप का मध्यलोक जिन-आगम साख॥
रुकचवासिनी दिक्कुमारियाँ गिरि कूटों पर करती वास।
रहतीं श्री जिन-गर्भ पूर्व से जन्म समय तक माता पास॥
इसको घेरे हुए समुद्र रुचकवर है दूना विस्तार।
जिन-शासन भूगोल अनूठा दिव्य-ध्वनि का मंगलसार॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकवरद्वीपस्थ रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्वाननम्)

ॐ ह्रीं श्री रुचकवरद्वीपस्थ रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनम्)

ॐ ह्रीं श्री रुचकवरद्वीपस्थ रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (इति सन्निधिकरणम्)। पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

छंद - राधिका

जल अकर्त्तृत्व भावों का मैं लाया हूँ।
कर्त्तृत्व बुद्धि पर जय पाने आया हूँ॥
है द्वीप रुचकवर मध्य रुचकगिरि पर्वत।
पूजूँ चारों दिशि जिन-चैत्यालय शाश्वत॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं....

मैं अकर्त्तृत्व भावों का चंदन लाऊँ।
परद्रव्यों का कर्त्तृत्व पूर्ण विघटाऊँ॥ है द्वीप.॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं....

अक्षत लाऊँ मैं अकर्त्तृत्व मय मति के।
कर्त्तृत्व क्षत करूँ देहाश्रित परिणति के॥
है द्वीप रुचकवर मध्य रुचकगिरि पर्वत।
पूजूँ चारों दिशि जिन-चैत्यालय शाश्वत॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं....

मैं अकर्त्तृत्व भावों के पुष्प सजाऊँ।
कर्त्तृत्व पाप का उर में नहीं जगाऊँ॥ है द्वीप.॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं....

मैं अकर्त्तृत्व भावों से सुचरु चढ़ाऊँ।
कर्त्तृत्व पुण्य का कभी न उर में लाऊँ॥ है द्वीप.॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं....

मैं अकर्त्तृत्व भावों के दीप संजोऊँ।
कर्त्तापन इन्द्रिय ज्ञान सदा को खोऊँ॥ है द्वीप.॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं....

मैं अकर्त्तृत्व भावों की धूप चढ़ाऊँ।
निर्मल पर्यायों का कर्त्तृत्व नशाऊँ॥ है द्वीप.॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं....

मैं अकर्त्तृत्व भावों के सुफल सजाऊँ।
क्षय भेद-भाव कर्तापन हो शिव पाऊँ॥ है द्वीप.॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं....

मैं अकर्त्तृत्व भावों के अर्घ्य बनाऊँ।
ज्ञाता-दृष्टा ही रहूँ स्व-पद ध्रुव पाऊँ॥
सहभावी गुणमय चेतन को अब जानूँ।
क्रमभावी पर्यायों को निश्चित मानूँ॥ है द्वीप.॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....

अर्घ्यावलि

छंद - चान्द्रायण

द्वीप रुचकवर पूर्व दिशा में जाइये।
शाश्वत जिनबिम्बों को शीष झुकाइये॥
राग-द्वेष मोहादि भाव विनशाइये।
पुण्य-पाप के पर्वत सभी गलाइये॥
भक्तिभाव से मंगल ध्वजा चढ़ाइये।
मोक्ष-मार्ग पर अपने चरण बढ़ाइये॥ १॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ पूर्वदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं....

द्वीप रुचकवर दक्षिण दिशि को ध्याइये।
जिन-चैत्यालय स्वर्णमयी उर लाइये॥
दशवें सूक्ष्म सांपराय में आइये।
सूक्ष्म लोभ को नाश पूर्ण सुख पाइये॥ २॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ दक्षिणदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

द्वीप रुचकवर पश्चिम दिशा महान है।
स्वर्णमयी चैत्यालय विश्व प्रधान है॥
बारहवें में पूर्ण मोह क्षय कीजिये।
सर्व कषायें तत्क्षण ही जय कीजिये॥ ३॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ पश्चिमदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

द्वीप रुचकवर उत्तर दिशि में जाऊँगा।
शाश्वत जिन-बिम्बों को शीष झुकाऊँगा॥
तेरहवें में शुद्ध दशा अरहंत लूँ।
शाश्वत सिद्ध बनूँ सुख शान्ति अनंत लूँ॥ ४॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ उत्तरदिशास्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

छंद - चान्द्रायण

द्वीप रुचकवर को वन्दन कर आज मैं।
निज स्वभाव की रुचि पाऊँ जिनराज मैं॥
भक्ति सहित यह पूर्ण अर्घ्य मैं चढ़ा रहा।
मुक्तिमार्ग पर अपने कदम बढ़ा रहा॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकगिरौ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

सामायिक समभावमय, कहते हैं जिनराज।
यही भाव भाऊँ सदा, पाऊँ निजपद राज॥

छंद - ताटंक

श्री जिनवर को नमन करूँ मैं बारम्बार जिनगुण गाऊँ।
अंतिम समय समाधिमरण पा निज शुद्धातम को ध्याऊँ॥
महा पुण्य से यह मानव पर्याय मिली संयम वाली।
किन्तु न मैंने कभी आज तक देखी संयम की लाली॥
बचपन खेलकूद में खोया तरुण अवस्था भोगे भोग।
वृद्धावस्था निर्बलता की जननी अरु दुखमय संयोग॥
धर्मलाभ से विमुख रहा मैं पापार्जन में रहा सुलीन।
अतः नाथ मैं धर्ममार्ग से रहा सदा ही पूर्ण विहीन॥
चारों गति में भ्रमा आज तक कहीं न अणु भर सुख पाया।
छिपा नहीं है नाथ आपसे सदा सदा ही दुख पाया॥
बोधिलाभ का मिला सुअवसर अब यह लाभ लिया मैंने।
सद्शास्त्रों के स्वाध्याय से धर्म प्रभाव किया मैंने॥
मोह रोग से पीड़ित हूँ मैं अंतिम समय आ गया है।
बार-बार मूर्छित होता हूँ ऐसा रोग छा गया है॥

रोगों पर भी अब जय पाऊँ परिषह अरु उपसर्ग सहूँ।
बुद्धि पूर्वक समभावी हो साम्यभाव ही सदा लहूँ॥
साधर्मीजन मेरे भाई मेरी साज सँभाल करें।
मोह जन्य भावों से मुझको दूर रखें जिन पाठ करें॥
यथाशक्ति क्रम-क्रम अन्नादिक औषधि त्याग करूँ स्वामी।
दुग्ध आदि तज अंत समय जल त्याग करूँ अंतर्यामी॥
शैय्या तज दूँ वस्त्र त्याग दूँ समभावों में करूँ निवास।
आकुलता उत्पन्न न हो प्रभु यही आपसे है अरदास॥
अंतरंग में विराग भावना की ही आए दिव्य हिलोर।
मृत्युमित्र को निकट जानकर हो जाऊँ मैं आत्मविभोर॥
यही मृत्यु मुझको इस तन से छुटकारा दिलवाएगी।
अगले भव में मनुजदेह संयमहित मुझे दिलाएगी॥
शान्तिपूर्वक मरण करूँ मैं समता भावों से हो चूर।
अगले भव संयम धारण कर परभावों से रहूँ सुदूर॥
एकसमय ऐसा आए प्रभु महामोक्षफल पाऊँ मैं।
वीतराग अरहंत जिनेश्वर के ही पथ पर आऊँ मैं॥
यही भावना यही कामना बार-बार मन लाऊँ मैं।
अंतिम समय समाधि मरण कर जीवन सफल बनाऊँ मैं॥

ॐ ह्रीं श्री रुचकवरद्वीपस्थ चतुर्दिग्जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीरछंद

सुगिरि रुचकवर चारों दिशि के जिनगृह पूजे हर्षित हो।
हंस चिन्ह की ध्वजा चढ़ाएँ पुलकित अंतर्मन से हो॥
इन्द्रध्वज पावन विधान की पूजन का उद्देश्य विशेष।
बोधिलाभ हो सुगतिगमन हो जिनगुण-संपति मिले जिनेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

समुच्चय पूर्णार्घ्य

छंद - पंचचामर

मध्यलोक शाश्वत जिन-भवन महान है।
चारशत पचास आठ श्रेष्ठ गृह प्रधान है॥
एक एक में शताष्टक जिनेन्द्र बिम्ब हैं।
सिद्ध के समान सब आत्म प्रतिबिम्ब हैं॥
घातिया अघातिया अष्टकर्म नाश कर।
सिद्ध हुए हैं जिनेन्द्र सर्व भव भार हर॥
तत्त्व अभ्यास ही आपने किया महान।
प्राप्त सम्यक्त्व कर प्रगट किया भेदज्ञान॥
पूर्ण संयम प्रकाश आपने किया प्रगट।
जो विभाव भाव थे उन्हें किया त्वरित विघट॥
शाघ्र यथाख्यात चारित्र पूर्ण कर लिया।
गुणस्थान तेरहवाँ त्वरित प्राप्त प्रभु किया॥
तेरवें को पारकर चौदवें में आ गए।
चौदवें को पारकर सिद्ध लोक आ गए॥
अनंतनंत सौख्य के धनी हुए श्री जिनेश।
अनंतगुण अनंत शक्ति प्रगट हो गई महेश॥
भूमि प्राग्भार अंत में हुए विराजमान।
मुक्तिवधू तुम्हें प्राप्त कर हुई महामहान॥
सिद्ध आज प्रभु वन्दन करूँ तुम्हें बार-बार।
नाश करो सप्तभूमियों का सर्व कर्म भार॥
मेरु पाँच अस्सी जिनेन्द्र भवन पूज लिए।
गजदंत बीस भवन वृक्ष दस पूज लिए॥
अस्सी वक्षार गृह चार इष्वाकार गृह।
एक-शतक-सत्तर विजयार्ध जिन भवन सुगृह॥
तीस कुलाचल के पूज चार मानुषोत्तर।
नन्दीश्वर बावनगृह चार भवन कुन्डलवर॥

चार रुचकवर भवन भावसहित पूजे हैं।
चार शत अट्ठावन सम न कहीं दूजे हैं॥
इन सब पर भाव द्रव्य ध्वजा भी चढ़ा चुका।
मुक्ति के सुमार्ग पर मैं चरण बढ़ा चुका॥
उनन्चास सहस्त्र चार शतक चौंसठ जिनेन्द्र।
रत्निम कुल प्रतिमाएँ पूजीं मैंने महेन्द्र॥
समकित की प्राप्ति हुई भेदज्ञान पा लिया।
निज स्वभाव पूर्ण शान्त भावसहित भा लिया॥
आपके हाथ में हे जिनेन्द्र ! लाज है।
कष्ट सब दूर हों प्राप्त हो स्वराज है॥

वीरछंद

चारों दिशि में दस प्रकार की महा ध्वजाएँ मनभावन।
एक शतक अरु आठ-आठ हैं शुद्धभावमय अतिपावन॥
चार सहस तीन सौ बीस हैं एक-एक चैत्यालय पर।
मलयानिल की पवन शक्ति से लहराती हैं शिखरों पर॥
क्षुद्र ध्वजाएँ चार लाख सत्तर सहस्त्र वसु शत अस्सी।
मैं असमर्थ चढ़ाऊँ मन से भाव ध्वजाएँ उज्ज्वल सी॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकवर्ति समस्त-अकृत्रिमजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुष्टुप

"एगो में सासदो आदा" यही जग में सार है।
आत्मा परमात्मा है शेष सब निस्सार है॥

वीरछन्द

इन्द्रध्वज विधान पूजन से होता हृदय महान विशुद्ध।
कर्मकलुषता धुल जाती है चेतन होता परम प्रबुद्ध॥
वीतराग पद मिल जाता है ज्ञान नेत्र खुलते जिनदेव।
सहज शुद्ध चैतन्यराज को शिवपद मिलता है स्वयमेव॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

महा जयमाला

दोहा

इन्द्रध्वज पूजन हुई, सफल हुए सब काज।
पूजन फल पाऊँ प्रभो, निज पद चेतनराज॥

वीरछन्द

इन्द्रध्वज पूजन विधान से हुआ हृदय में हर्ष महान।
अन्तर्भाव हुए अति निर्मल गाए जिनवर के गुणगान॥
परिणति निज स्वभावमय जागी, पर परिणति भागी तत्काल।
मोक्षमार्ग भी सहज हो गया जिसकी महिमा परम विशाल॥
दर्शन-ज्ञान-चरित की महिमा से मैं ओत-प्रोत हुआ।
सहजानन्द स्वरूपी अनुभवरस का उज्ज्वल स्रोत बहा॥
मिलादृष्टि का विषय त्रिकाली ध्रुव महिमामय पूर्ण अखण्ड।
हूँ सामान्य अभेद नित्य मैं एक शुद्ध चैतन्य प्रचण्ड॥
ध्यान ध्येय ध्याता मैं ही हूँ मैं ही ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता।
लोकालोक सभी का दृष्टा निज स्वभाव रसमद माता॥
है विधान पूजन का शुभफल लौकिक शान्ति सौख्य भरपूर।
भव्य अलौकिक फल शिव सुन्दर सुख अनन्त महिमा आपूर॥
महाअर्घ्य में करूँ समर्पित गाऊँ प्रभु के मंगलगान।
भेदज्ञान की कला प्राप्त कर पाऊँ वीतराग-विज्ञान॥
एक मात्र प्रार्थना यही है प्रभु चरणों का मिले प्रताप।
निज चैतन्यराज महिमा से मिट जाए भव का संताप॥

सोरठा

मध्यलोक जिनगेह, मैंने पूजे भाव से।
ध्वज आरोह स्नेह, धन्य-धन्य यह इन्द्रध्वज॥

ॐ ह्रीं श्री मध्यलोकवर्ति समस्तजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्तिपाठ

चौपाई

जय जय जिनवर शान्ति प्रदाता, जय जय पूर्ण मोक्ष सुखदाता।
जग के सर्व अमंगलहर्ता, महामोक्ष मंगल के कर्ता॥
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, जय जिन-पति जिन-प्रभु अभ्यंकर।
आज भाव से की है पूजन, नाश करो मेरे भव बंधन॥
अखिलविश्व में पूर्ण शान्ति हो, दूर सकल मिथ्यात्व भ्रान्ति हो।
पंच पाप अरु सप्तव्यसन सब, नाम न इनका कहीं रहे अब॥
भावसहित मैं करूँ वन्दना, विनय पूर्वक करूँ अर्चना।
सकल जगत में पूर्ण शान्ति हो, सदा शान्ति हो महाशान्ति हो॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

क्षमापना

छंद - राजधुन

मंगल विधान हुआ पूरा जिनराज।
ज्ञान का समुद्र पाया मैंने प्रभु आज॥
नाचा मेरा मन प्रभु नाची मेरी देह।
नाची मेरी भावना जागा तुव नेह॥
माता जिनवाणी ने भी दिया आशीर्वाद।
निज का स्वभाव देख हुआ आल्हाद॥
आपको नमन करूँ आपको प्रणाम।
माता भारती कृपा से पाऊँ ध्रुवधाम॥
क्षण में सफल हुए मेरे सारे काज।
मानों मैंने पाया आज निज पद राज॥

चौपाई

भूल हमारी क्षमा करो प्रभु, सम्यग्ज्ञान प्रदान करो विभु।
स्वस्थ बुद्धिशाली हों स्वामी, धर्म मार्ग पर आएँ स्वामी॥

* * *

कविवर श्री राजमल पवैया द्वारा रचित अन्य रचनाएँ

प्रकाशित रचनाएँ

१. इन्द्रध्वज मंडल विधान
२. शान्ति विधान
३. चतुर्विंशति तीर्थंकर विधान
४. तीर्थंकर निर्वाण क्षेत्र विधान
५. जैन पूजांजलि
६. तीर्थ क्षेत्र पूजांजलि
७. चौसठ ऋद्धि विधान
८. नंदीश्वर विधान
९ पंचमेरू विधान
१०. सम्मेद शिखर विधान
११. श्रुत स्कंध विधान
१२. समकित तरंग
१३. पूजन पुष्प
१४. पूजन ज्योति
१५. पूजन दीपिका
१६. पूजन किरण
१७. मंगल पुष्प प्रथम
१८. मंगल पुष्प द्वितीय
१९. मंगल पुष्प तृतीय
२०. अपूर्व अवसर
२१. द्वादश भावना
२२. भगवान महावीर
२३. वीरों का धर्म
२४. जीवनदान
२५. तीनलोक तीर्थ यात्रा गीत
२६. आदिनाथ शान्तिनाथ महावीर पूजन
२७. नेमिनाथ पार्श्वनाथ महावीर पूजन
२८. आदिनाथ भरत बाहुबलि पूजन
२९. शांतिनाथ कुन्थु अरनाथ पूजन
३०. शांतिनाथ पार्श्व महावीर पूजन
३१. गोम्मटेश्वर बाहुबलि पूजन
३२. जिनेन्द्र चालीसा संग्रह
३३. जनमंगल कलश
३४. सिद्धचक्र वंदना
३५. गणधर वलय ऋषिमंडल विधान

अप्रकाशित रचनाएँ

१. तीर्थंकर महिमा विधान
२. पंचपरमेष्ठी विधान
३. कर्म दहन विधान
४. कल्पद्रुम विधान
५. चतुर्विंशति स्तोत
६. चतुर्दश भक्ति
७. जिन वन्दना
८. आत्म वन्दना
९. मुनि वन्दना
१०. जिन सहस्त्रनाम (हिन्दी)
११. अनुभव
१२. समय
१३. परमब्रह्म
१४. सेंतालीस शक्ति विधान
१५. विद्यमान बीस तीर्थंकर विधान
१६. जिनगुण सम्पत्ति विधान
१७. याग मंडल विधान
१८. पंचकल्याणक विधान
१९. जिन सहस्त्रनाम विधान